चौरासी वैष्णवन की वार्ता

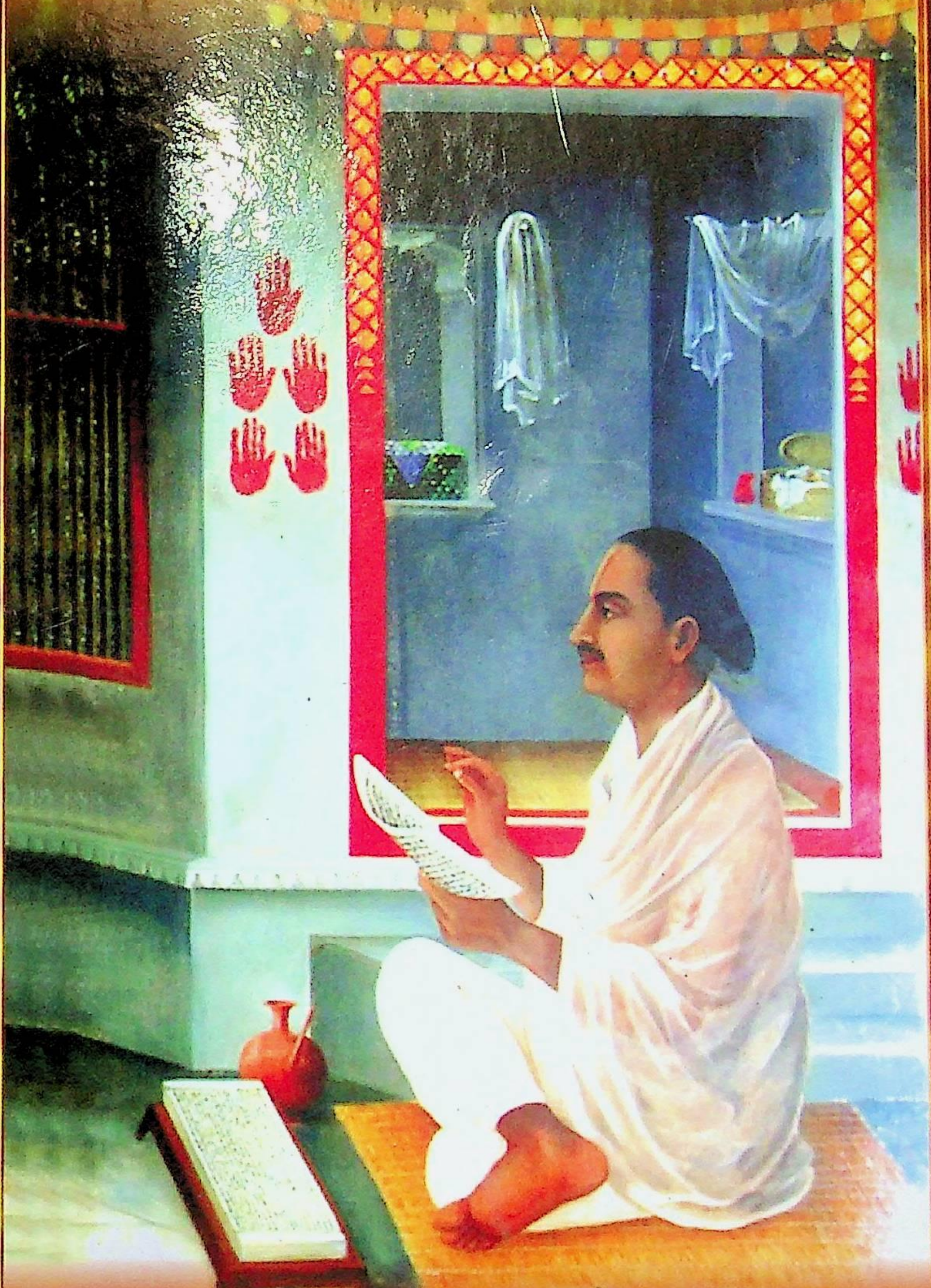

जगद् गुरु श्रीमद्वल्लभाचार्य चरण

पूज्यपाद आचार्यवर्य्य गो. ति. श्री 108 श्री इन्द्रदमन जी (श्री राकेश जी) महाराज श्री की आज्ञा से प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

जगद्गुरु श्रीमद् वल्लभाचार्य वंशावतंस
आचार्य वर्य्य गोस्वामि तिलकायित
श्री 108 श्री इन्द्रदमन जी (श्री राकेश जी) महाराज

जन्मतिथि
फाल्गुन शुक्ल ७, वि.सं. २००६

प्राकट्य
२४ फरवरी, १९५०

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

॥श्रीहरिः॥

चौरासी वैष्णवन की वार्ता

प्रकाशक

विद्या विभाग, मन्दिर मण्डल, नाथद्वारा

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

चौरासी वैष्णवन की वार्ता

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

॥श्रीहरिः॥

श्री गोपीजनवल्लभो विजयतेतराम्

श्री आचार्य जी महाप्रभून के

सेवक

चौरासी वैष्णवन की वार्ता

श्री नाथद्वारस्थ विद्याविलासि गोस्वामि तिलक

श्री १०८ श्री इन्द्रदमनजी (श्री राकेश जी) महाराज श्री की आज्ञानुसार

सम्पादक एवं संशोधक

त्रिपाठी यदुनन्दन श्री नारायणजी शास्त्री

साहित्यायुर्वेदाचार्य, एम.ए. हिन्दी संस्कृत

विद्याविभागाध्यक्ष

प्रकाशक

विद्या विभाग, मन्दिर मण्डल, नाथद्वारा

तृतीय हिन्दी संस्करण

प्रति २०००

२०७३

न्योछावर

६५/-रुपये

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता

CC-0. In Public Domain. Digitized by Muthulakshmi Research Academy

भारतवर्ष

महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य का भारत भ्रमण

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

चौरासी वैष्णवन की वार्ता

चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

महाप्रभु वल्लभाचार्य जी की चौरासी बैठकें

१. गोकुल की पहली बैठक - गोविन्द घाट, गोकुल उ.प्र.
२. गोकुल की दूसरी बैठक - भीतर की बड़ी बैठक
३. गोकुल की तीसरी बैठक - श्री द्वारकाधीश का शैय्या मन्दिर
४. वंशीवट - वृन्दावन, जिला मथुरा
५. विश्रामघाट - मथुरा
६. मधुबन - महोली, जिला मथुरा
७. कुमुदवन - पोस्ट उस पार, जिला मथुरा उ.प्र.
८. बहुला बन - पोस्ट बाटी गाँव, जिला मथुरा
६. राधाकृष्ण कुण्ड - पो. राधाकुण्ड, जि. मथुरा
१०. मानसी गंगा (दो बैठकें)- वल्लभ घाट चकलेश्वर के पास, पोस्ट गोवर्धन, जिला मथुरा
११. परासोली - (परस राम स्थली) - चन्द्र सरोवर, पोस्ट गोवर्धन, जिला मथुरा
१२. आन्योर - सद्दु पांडे का घर, पो. आन्योर, मथुरा
१३. गोविन्द कुण्ड - पोस्ट आन्योर जिला मथुरा
१४. सुन्दर शिला - गिरिराज जी के सामने
१५. गिरिराज की बैठक - पो. जतीपुरा, जिला. मथुरा
१४. सुन्दर शिला - गिरिराज जी के सामने
१५. गिरिराज की बैठक - पो. जतिपुरा, जि. मथुरा
१६. कामवन की बैठक - श्री कुण्ड पो. कामा, जिला भरतपुर (राज.)
१७. गहूवरवन - राधारानी के मन्दिर के आगे, मोरकुटी के नीचे, पोस्ट बरसाना, जिला मथुरा
१८. संकेतबन बगीचे में, कृष्ण कुण्ड, पोस्ट बरसाना
१६. नन्दगाँव - मानसरोवर, सड़क के उस पार, पोस्ट नन्दगाँव (जिला मथुरा)
२०. कोकिलावन - पोस्ट बठेन, जिला मथुरा

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

२१. भांडीरवन - (अप्रकट)

२२. मानसरोवर - (माखन) पो. माट, जिला मथुरा

२३. सूकर क्षेत्र - सौरभ घाट, पोस्ट सौरों जिला अटोहा उ.प्र.

२४. चित्रकूट - कामलानाथ पर्वत, पोस्ट पीली कोठी म.प्र.

२५. अयोध्या - गुसांई घाट (अप्रकट)

२६. नैमिषारण्य - वेद व्यास आश्रम के सामने

२७. काशी की पहली बैठक - पुरूषोत्तमदास जी का घर, जतन बड़, चैतन्य रोड़, दूध हट्टी के पास, वाराणसी

२८. काशी की दूसरी बैठक - पंच घाट (भावनात्मक)

२९. हरिहर क्षेत्र - महादेवजी के मन्दिर के पास, मगर हट्टा चौक, बैद्यनाथ धाम, जिला वैशाली बिहार, हाजीपुरा ८४४१०१

३०. जनकपुर - (अप्रकट) माणिक तालाब

३१. गंगासागर - कपिल कुण्ड पर - (अप्रकट)

३२. चम्पारण्य की पहली बैठक, राजिम, जिला रायपुर, छत्तीसगढ़

३३. चम्पारण्य की दूसरी बैठक, घट्टी की बैठक

३४. जगन्नाथपुरी - हजारी मल दूध वाले की धर्मशाला के पास, ग्राण्ड रोड, पुरी ७५२००१ उड़ीसा

३५. पंढरपुर - चन्द्रभागा नदी के उस पार, महाराष्ट्र

३६. नासिक - परसरामपुरिया मार्ग, पूसा, पंचवटी, नासिक

३७. पन्ना नृसिंह - मंगलगिरि स्टेशन, बिजयवाड़ा (अप्रकट)

३८. लक्ष्मण बालाजी - कर्नाटक धर्मशाला (छत्रम्) के बाजू में, तिरूपति (आ.प्र.)

३९. श्रीरंग - त्रिचनापल्ली (अप्रकट) कावेरी में बह गई

४०. विष्णु कांची - कांचीपुरम (तमिलनाडु)

४१. सेतुबन्ध रामेश्वर - (रामेश्वर)

४२. मलय पर्वत, उटकमंड के पास (अनिश्चित)

४३. लोहागढ़ - (हरी) फाल के सामने पणजी, गोआ

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

४४. ताम्रपर्णी नदी की बैठक - तिरूनेल्वेली रेलवे स्टेशन के पास (भावनात्मक)
४५. कृष्णा नदी की बैठक - (अनिश्चित)
४६. पंपा सरोवर - (अनिश्चित) हासपेट
४७. पद्मनाथ - पौढ़ानाथ
४८. जनार्दन - पो. बरकला (केरल राज्य)
४६. विद्यानगर - (अप्रकट)
५०. त्रिलोचकभान जी की बैठक - (अप्रकट)
५१. तोतद्रि पर्वत - नांगनेरी, तिरूनेल्वेली रेलवे स्टेशन (अप्रकट)
५२. दर्मशयन - आरिसेतु, रमनाडपुरम् (तमिल.)
५३. सूरत - अश्विनी कुमार घाट, सूरत (गुजरात)
५४. भरूच - पावर हाउस के पास, कचहरी के पीछे, भरूच (गुजरात)
५५. मोरवी - मच्छुनदी के सामने का घाट, मोरवी (सौराष्ट्र)
५६. नवानगर - नागमती नदी का घाट, काला बड़ गेट रोड़, जामनगर
५७. खंभालिया - स्टेशन रोड, कुंभ के ऊपर खंभालिया, जिला जामनगर, वाया द्वारका।
५८. पिंडतारक - पो. पिंडारा, भोपाल का स्टेशन जि. जामनगर वाया द्वारका
५६. मूल गोमती - व्यवस्था (पुरी मावती) देवी दास नाथूराम, नीलकंठ चौक, गोमती वाया द्वारका
६०. द्वारका - गोमती नदी के किनारे, द्वारका
६१. गोपी तालाब - जिला जामनगर वाया द्वारका
६२. बेट शंखोद्वार - शंख तालाब, भेंट द्वारका जि. जामनगर
६३. नारायण सरोवर - तह. लखपत जिला कच्छ
६४. जूनागढ़ - दामोदर कुण्ड, गिरनार रोड, जूनागढ़
६५. प्रभास क्षेत्र - त्रिवेणी नदी का घाट, प्रभास पाटण जिला जूनागढ़
६६. माधवपुर - कदम्ब कुण्ड के ऊपर (बेड़) जिला जूनागढ़
६७. गुप्त प्रयाग - पोस्ट देलवाड़ा ३६२५१० जिला जूनागढ़

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

६८. तगड़ी - ३८२२५० अहमदाबाद - बोटद मार्ग पर

६९. नरोड़ा - रोड़, अहमदाबाद

७०. गोधरा - राणा व्यास माग, पटेल बाजार गोधरा, जिला पंचमहाल, गुजरात

७१. खेरालु - श्री मालीवास, खेरालु जि. मेहसाणा

७२. सिद्धपुर - बिन्दु सरोवर, सांदीपनी आश्रम के पास, उज्जैन

७३. उज्जैन - गोमती कुण्ड, सांदीपन आश्रम के पास, उज्जैन म.प्र.

७४. पुष्कर - ब्रह्माजी के मंदिर के आगे, वल्लभ घाट, पुष्कर जि. अजमेर (राजस्थान)

७५. कुरुक्षेत्र - सरस्वती कुण्ड, शक्ति देवी के मन्दिर के पास, कुरुक्षेत्र

७६. हरिद्वार - हर की पैड़ी के मार्ग पर, हरिद्वार उ.प्र.

७७. बदरिकाश्रम - मन्दिर के पास, बद्रीनाथ उत्तरप्रदेश

७८. केदारनाथ - (अप्रकट)

७९. व्यास आश्रम-अलक नन्दा-भागीरथी संगम के पास, कैशव प्रयाग बद्रीनाथ उ. प्र.(अप्रकट)

८०. व्यास गंगा (अप्रकट)

८१. हिमालय पर्वत की बैठक - (अप्रकट)

८२. मुद्राचल- (अप्रकट)

८३. अडेल - त्रिवेणी संगम के सामने, ग्राम देवरस, पो. नैनी जिला इलाहाबाद उ.प्र.

८४. चरणाट - आचार्यकूप, पोस्ट चूनार जि. मिर्जापुर उ.प्र.

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

श्री नाथद्वारा के टिकैत महाराजन की वंशावली

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम	प्राकट्य सम्वत्	मास	दिवस	लीला संवरण सम्वत्	मास	दिवस
1.	श्रीआचार्यजी श्रीमहाप्रभुजी (श्रीवल्लभाचार्यजी)	1535	वैशाख	कृ.11	1587	आषाढ़	शु.3

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम	प्राकट्य सम्वत्	मास	दिवस	लीला संवरण सम्वत्	मास	दिवस
2.	श्रीगोपीनाथजी	1567	आश्वि.	कृ.12	1599		

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम	प्राकट्य सम्वत्	मास	दिवस	लीला संवरण सम्वत्	मास	दिवस
3.	श्रीगुंसाईजी (श्रीविट्ठलनाथजी)	1572	पौष	कृ. 9	1642	माघ	कृ.7

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम	प्राकट्य सम्वत्	मास	दिवस	लीला संवरण सम्वत्	मास	दिवस
5.	श्रीगिरधरजी	1597	कार्तिक	शु. 12	1677	पौष	कृ. 2

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम	प्राकट्य सम्वत्	मास	दिवस	लीला संवरण सम्वत्	मास	दिवस
6.	श्रीदामोदरजी	1632	श्रावण	शु. 15	1694	कार्ति.	सु. 10

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम		प्राकट्य सम्वत्	मास	दिवस	लीला संवरण सम्वत्	मास	दिवस
7.	श्रीविट्ठलेशरायजी		1657	श्रावण	शु. 14	1711	पौष	कृ. 9
8	श्रीलालगिरधरजी		1689	वैशाख	शु. 7	1723	श्रावण	शु. 1
9.	श्रीदामोदरजी (बड़े दाऊजी)		प्रथम	1711	माघ	कृ. 8	1760	
10.	श्रीविट्ठलेशरायजी		1743	भाद्रपद	शु. 6	1793	कार्ति.	
11.	श्रीगोवर्द्धनेशजी		1763	श्रावण	कृ. 10	1819	माघ	कृ. 7
12.	श्रीगोविन्दजी		1769	पौष	कृ. 11	1830	ज्ये.	शु. 6

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम	प्राकट्य सम्वत्	मास	दिवस	लीला संवरण सम्वत्	मास	दिवस
13.	श्रीबड़े गिरिधरजी	1525	आषाढ़	कृ. 30	1863	वैशाख	शु. 11
14.	श्रीदाऊजी (द्वितीय)	1853	आश्विन	शु.4	1882	फा.	कृ. 30
15.	श्रीगोविन्दजी	1877	कार्तिक	शु. 14	1902	फा.	कृ. 12
16.	श्रीगिरिधारीजी	1899	ज्येष्ठ	शु. 13	1959	वैशाख	शु. 14
17.	श्रीगोवर्द्धनलाल जी	1919	भाद्रपद	कृ. 1	1990	आषाढ़	शु. 2
18.	श्रीदामोदर लाल जी	1953	पौष	शु. 6	1992	श्रावण	शु. 15

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

क्र.	पू. तिलकायितों के नाम	प्राकट्य सम्वत्	प्राकट्य मास	प्राकट्य दिवस	लीला संवरण सम्वत्	लीला संवरण मास	लीला संवरण दिवस
19.	श्रीगोविन्दलालजी	1984	मार्गशीर्ष	कृ. 7	2051	माघ	कृ 4
20.	श्रीदाऊजी (श्रीराजीवजी)	2005	पौष	कृ. 1	2056	चैत्र	कृ. 10
21.	श्रीराकेश जी (इन्द्रदमनजी)	2006	फाल्गुन	शु. 7			
22.	चि. श्रीभूपेशकुमारजी (विशालबाबा)	2037	पौष	कृ. 30			

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

प्राक्-कथन

पुष्टि सिद्धान्त मार्तण्ड महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य के मार्ग का व्यावहारिक ज्ञान एवं शुद्धाद्वैत दर्शन का व्यावहारिक रूप वार्ता-साहित्य में संग्रथित है। भगवद् भक्तों के चरित्रों से स्पष्ट है कि भक्तों का सत्सङ्ग ही श्री ठाकुर जी की अनुग्रह-लीला को समझने का सही साधन है। श्री ठाकुर जी और आचार्य जी महाप्रभु की अभेद अवगति भी इन वार्ताओं के माध्यम से ही सम्भव है। वार्ता साहित्य से यह भी स्पष्ट होता है कि, सुदूर पूर्व में स्थित जगन्नाथ प्रभु, दक्षिण-पश्चिम द्वारिका में विराजमान श्री रणछोडलाल, उत्तर शिखरों पर शोभायमान श्री बद्रीनाथ जी, मथुरा में ब्रजाधीश श्री केशोराय जी, श्री गोवर्द्धन पर्वत पर अवस्थित श्री नाथ जी एवं श्री आचार्य जी महाप्रभु द्वारा भक्तजनों के मस्तक पर पधराऐ गए श्री ठाकुर जी के समस्त विग्रह तत्वत: एक ही हैं। श्री आचार्य जी महाप्रभु के यात्रा-प्रकरणों से सन्दर्भित घटनावृत्तों से यह सुस्पष्ट है।

श्री आचार्य जी महाप्रभु द्वारा कराया जाने वाला ब्रह्म सम्बंध पुष्टि-मार्ग की दार्शनिक पद्धति है जिससे जीव को श्री ठाकुर जी की सेवा का अधिकार प्राप्त होता है। श्री आचार्य जी जिस भी जीव को ब्रह्म - सम्बंध करायेंगे श्री ठाकुर जी उसे अङ्गीकार करते हुए सकल दोषों से निवृत्ति प्रदान करेंगे। वार्ता [वैष्णव १ प्रसङ्ग - २] नाम दान करने और शरणागति कराने का विधिवत् विधान एवं अष्टयाम सेवा पद्धति सहित ऋतूत्सवों व पर्वों को मनाने की विद्या वार्ताओं के विविध कथारव्यानों में यत्र-तत्र गुम्फित है।

सभी वार्ताएँ सजीवता से ओतप्रोत हैं। इनमें कोई भी कल्पना का पुट नहीं है। भगवदीय जन श्री ठाकुर जी से सानुभव प्राप्त कर उनके साथ आनन्द लेते हैं। श्री ठाकुर जी भी उनके साथ ही लीलारत रहते है। भगवदीय जन को श्री ठाकुर जी के सुख में ही सुख का अनुभव होता है। श्री ठाकुर जी के अलावा भगवदीय जन का अन्य कोई भी श्रेय-प्रेय नहीं होता है। श्री कुम्भनदास जी श्री भगवत् सामर्थ्य प्राप्त तदीय जीव हैं जो परम सामर्थ्यवान बादशाह अकबर को कह देते हैं -

''सन्तन को कहा सीकरी सों काम।

आवत जात पन्हैया टूटी बिसर गयौ हरिनाम ॥१ ॥

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

जाकौ मुख देखे दुख लागै ताकों करनी परी सलाम।

कुम्भनदास लाल गिरधर बिन यह सब झूठौ धाम''

[वैष्णव ९० प्रसङ्ग - २]

श्री ठाकुर जी ही ''कर्तुम्-अकर्तुम्-अन्यथाकर्तुम्'' समर्थ हैं, यह रहस्य भगवदीयजन भली प्रकार से जानता है। अतः वह निर्भय रहता है।

श्री ठाकुर जी के यहाँ कोई भेदभाव नहीं है। ''ब्रह्म सम्बंध'' हो जाने पर जाति, वर्ग, लिङ्ग एवं पद आदि का भेद समाप्त हो जाता है। वह भगवदीय हो जाता है, जहाँ ''समत्वभाव'' के अलावा अन्य कोई भाव ही नहीं है।

श्री आचार्य जी, श्री गुसाँई जी व श्री ठाकुर जी इनमें भी कोई भेद नहीं है। श्री ठाकुर जी भी भक्त के प्रति उतनी ही आतुरता और आर्तभाव प्रदर्शित करते हैं जितना कि भक्त भगवन् के प्रति करता है। ''गज्जनधावक'' की वार्ता से स्पष्ट है कि ''गज्जनधावन'' के बिना श्री ठाकुर जी राजभोग नहीं आरोगते हैं। [वैष्णव १८ प्रसङ्ग - १] नारायण दास ब्रह्मचारी श्री गोकुल चन्द्रमा जी को गरम खीर समर्पित कर श्री आचार्य जी से मिलने चले जाते हैं तो श्री ठाकुर जी गरम खीर आरोगने लगते हैं, उनके श्री हस्त गरम खीर से जल जाते है। वे श्री आचार्य जी से कहते हैं - ''नारायणदास गरम खीर समर्पि के तुम्हारे पास गयो, सो खीर मेरे हाथ सों गरम लागी मैंने थोरी सी चाटके हाथ झटके इस कारण सारे मंदिर में छींटे लगे हैं।'' [वैष्णव १९ प्रसङ्ग - २] श्री ठाकुर जी से श्री आचार्य जी की निकटता और अन्तरङ्गता, वार्ता साहित्य से ही जानी जा सकती है। राजादुबे व माधोदुबे को श्री आचार्य जी का ऐसा अनुग्रह प्राप्त है कि जिनके द्वारा नाम देते ही मूर्ख हरिकृष्ण संस्कृत बोलने लग गया ओर उत्तम भागवत व्याख्याता हो गया [वैष्णव ४२ प्रसङ्ग - १] इन वार्ताओं में प्रभु के प्रति भक्त के समर्पण, अनन्यता, आर्तभाव, आतुरता, सहजता, निश्छलता एवं आत्मीयता के अनेक आख्यान विद्यमान हैं, जिनके पढने से प्रभु के प्रति अनुराग और गुरू-गोविन्द-गोधन-वैष्णवजन के प्रति प्रेम का अनुभव होता है। ''वार्ता साहित्य'' को पढने से यह बात समझ में आ जाती है कि वैष्णव जन के प्रति सहज अनुराग ही गोविन्द की उपासना है। जो वैष्णव द्रोही होगा, वह न गुरु-कृपा प्राप्त कर पाता है और नहीं गोविन्द की भक्ति

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

प्राप्त कर सकता है। वैष्णव सेवा में ही ब्रजराज की सेवा निहित है। पुष्टिजीव एवं मर्यादा जीव का तात्विक बोध भी वार्ताओं के अध्ययन से सम्भव है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विभिन्न दोषों के निवारणार्थ ''वार्ता-साहित्य'' का अध्ययन वांछनीय है। कलिमल के प्रभाव से चिन्तन में दोष आता है। उस दोष दृष्टि से गुरु-गोविन्द-पुष्टिमार्ग-सिद्धान्त दर्शन आदि के प्रति आशङ्काएँ, सन्देह, विषमताएं और विद्वेष मस्तिष्क में कौंधते रहते हैं, लेकिन वार्ताओं के अध्ययन के बाद भाव-भूमि निर्मल हो जाती है। श्री ठाकुर जी की अनुग्रह लीला समझ में आने लगती है। इसे यों भी कहा जा सकता है कि वार्ता साहित्य में इतनी प्रभावोत्पादकता है कि जीव ब्रजराज, ब्रजरज और ब्रजभाषा की ओर आकृष्ट होता चला जाता है। उसे गोधन, गोवर्द्धन और गोवर्द्धनधरण के प्रति लगाव हो जाता है। वह ''गुरु-चरण-शरण'' ग्रहण कर पुष्टि पद्धति पर अनवरत चलते हुए वैष्णवों में भगवदीय बन जाता है, जहाँ श्री ठाकुर जी के साथ नित्य लीला में रत रहकर आनन्द मग्न रहता है।

''ब्रजभाषा'' श्री ठाकुर जी की वाणी है। इसमें रसराज की सी सरसता और मधुरता है। वल्लभ कुल की ब्रजराज से अंतरङ्गता की अनुभूति भी ब्रजभाषा से ही होती है। लेकिन यह ''ब्रजभाषा'' सर्वजनग्राह्य नहीं है। ''चौरासी वैष्णवों की वार्ता'' की विषय वस्तु को सही समझने की दृष्टि से इसे ''खड़ी बोली-हिन्दी'' में रूपान्तरण कर प्रस्तुत किया गया है। यदि वैष्णव जनों को इन वार्ताओं का खड़ी बोली हिन्दी में रूपान्तरण रूचिकर लगा तो हम इसे प्रभु श्रीनाथ जी की सत्प्रेरणा ही मानेंगे।

महाप्रभून के चौरासी वैष्णवन की वार्ताओं का ब्रजभाषा से हिन्दी रुपान्तरण डॉ. श्री रमेशचन्द्र जी ''कामवन'' ने किया है। वार्ताओं के संशोधन में त्रुटि रह गई हो तो विज्ञजन क्षमा करेंगे।

त्रिपाठी यदुनन्दन श्री नारायण जी शास्त्री

साहित्यायुर्वेदाचार्य, एम.ए. हिन्दी, संस्कृत

अध्यक्ष विद्या विभाग, मन्दिर मण्डल नाथद्वारा (राज.)

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	नाम वार्ता	प्रसंग वैष्णव	पृष्ठ
१.	दामोदर दास हरसानी	[प्रसंग १-८]	१
२.	कृष्णदास मेघन क्षत्रीय	[प्रसंग १-७]	६
३.	दामोदर दास संबल वारे खत्री कन्नौज निवासी	[प्रसंग १-९]	११
४.	पद्मनाभदास कन्नोजिया ब्राह्मण	[प्रसंग १-७]	१८
५.	पद्मनाभदास की बेटी तुलसा	[प्रसंग १-२]	२५
६.	पद्मनाभदास का बेटा उसकी बहू पार्वती	[प्रसंग १-२]	२६
७.	पद्मनाभदास का नाती पार्वती का बेटा रधुनाथ	[प्रसंग १-२]	२७
८.	रजो क्षत्राणी अडेल की निवासी	[प्रसंग १-२]	२८
९.	पुरुषोत्तमदास क्षत्री बनारस वाले	[प्रसंग १-५]	२९
१०.	पुरुषोत्तमदास की बेटी रूक्मणि	[प्रसंग १-३]	३३
११.	पुरुषोत्तमदास का बेटा गोपालदास	[प्रसंग १-३]	३४
१२.	रामदास सारस्वत ब्राह्मण	[प्रसंग १-२]	३४
१३.	गदाधरदास सारस्वत ब्राह्मण कंडा निवासी	[प्रसंग १-२]	३७
१४.	वेणीदास, माधोदास दो भाई	[प्रसंग १-२]	३८
१५.	हरिवंश पाठक सारस्वत ब्राह्मण बनारस निवासी	[प्रसंग १]	४०
१६.	गोविन्द दास भल्ला	[प्रसंग १]	४०
१७.	अम्बा क्षत्राणी जो कड़ा में रहती	[प्रसंग १]	४३
१८.	गज्जनधावन क्षत्रीय आगरा निवासी	[प्रसंग १]	४४
१९.	नारायणदास ब्रह्मचारी सारस्वत	[प्रसंग १-३]	४५

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

ब्राह्मण महावन निवासी
२०. एक क्षत्राणी महावन में रहती [प्रसंग १] ४८
२१. जीयदास क्षत्री सूर [प्रसंग १] ४८
२२. देवा क्षत्रीय कपूर [प्रसंग १] ४९
२३. दिनकर दास सेठ [प्रसंग १] ४९
२४. मुकुन्द दास कायस्थ [प्रसंग १] ५०
२५. प्रभुदास जलोटा क्षत्रीय सीहनन्द निवासी [प्रसंग १-४] ५१
२६. प्रभुदास भाट सीहनन्द निवासी की वार्ता [प्रसंग १] ५४
२७. पुरुषोत्तम दास आगरा में राजघाट रहते [प्रसंग १] ५५
२८. त्रिपुरदास कायस्थ शेरगढ़ निवासी [प्रसंग १-३] ५६
२९. पूरणमल खत्री [प्रसंग १-२] ५९
३०. यादवेन्द्रदास कुम्हार [प्रसंग १-३] ६०
३१. गुसांईदास सारस्वत ब्राह्मण की वार्ता [प्रसंग १] ६१
३२. माधोदास भट्ट काश्मीर के निवासी [प्रसंग १-४] ६२
३३. गोपालदास [प्रसंग १] ६५
३४. पद्मरावल सांचोरा ब्राह्मण उज्जैन निवासी [प्रसंग १-३] ६९
३५. पुरुषोत्तम जोशी सांचोरा ब्राह्मण [प्रसंग १] ७१
३६. जगन्नाथ जोशी [प्रसंग १-४] ७२
३७. जगन्नाथ जोशी की माता [प्रसंग १] ७४
३८. नरहर जोशी जगन्नाथ जोशी के बड़े भाई [प्रसंग १-२] ७५
३९. राणा व्यास सांचोरा ब्राह्मण गोधरा निवासी [प्रसंग १-२] ७८
४०. रामदास सारस्वत ब्राह्मण राजनगर निवासी [प्रसंग १] ८०
४१. गोविन्द दुबे सांचोरा ब्राह्मण [प्रसंग १-४] ८२

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

४२.	राजा दुबे माधोदुबे दोनों सांचोरा ब्राह्मण	[प्रसंग १]	८३
४३.	उत्तम श्लोकदास सांचोरा ब्राह्मण	[प्रसंग १]	८८
४४.	ईश्वर दुबे सांचोरा ब्राह्मण	[प्रसंग १]	८८
४५.	वासुदेव दास छकड़ा सारस्वत ब्राह्मण	[प्रसंग १-४]	८९
४६.	बाबा वेणुदास और कृष्णदास घघरिया तथा यादवदास	[प्रसंग १]	९३
४७.	जगतानन्द सारस्वत ब्राह्मण थानेश्वर वासी	[प्रसंग १]	९४
४८.	आनन्ददास विश्वम्भरदास दोनो भाई क्षत्रीय	[प्रसंग १]	९६
४९.	एक ब्राह्मणी	[प्रसंग १]	९६
५०.	एक क्षत्राणी	[प्रसंग १]	९७
५१.	गोरजासास, समराई बहु क्षत्राणी सीहनन्द	[प्रसंग १]	९९
५२.	कृष्णदासी तथा रुक्मिणी बहूजी की दासी	[प्रसंग १-२]	१०२
५३.	बूला मिश्र पंडित	[प्रसंग १]	१०३
५४.	मीराबाई के पुरोहित रामदास	[प्रसंग १]	१०५
५५.	रामदास चौहान	[प्रसंग १]	१०५
५६.	रामानन्द पंडित सारस्वत ब्राह्मण	[प्रसंग १]	१०६
५७.	विष्णुदास छीपी	[प्रसंग १-२]	१०७
५८.	जीवनदास क्षत्री कपूर सीहनन्द के निवासी	[प्रसंग १]	१०९
५९.	भगवान दास सारस्वत ब्राह्मण	[प्रसंग १]	११०
६०.	भगवानदास श्री नाथ जी के भीतरिया	[प्रसंग १]	११०
६१.	अच्युतदास सनाढ्य ब्राह्मण	[प्रसंग १]	१११
६२.	अच्युतदास गौड़ ब्राह्मण	[प्रसंग १]	११२
६३.	अच्युतदास सारस्वत ब्राह्मण	[प्रसंग १]	११२

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

६४.	नारायणदास अम्बाला	[प्रसंग १]	११३
६५.	नारायणदास भट्ट मथुरा वाले	[प्रसंग १]	११४
६६.	नारायणदास चौहान ठट्ठेवासी	[प्रसंग १]	११४
६७.	एक क्षत्राणी सीहनन्द वासी	[प्रसंग १]	११७
३८.	दामोदार दास कायस्थ शेरगढ़	[प्रसंग १]	११८
६९.	स्त्री पुरुष दोनों क्षत्री थे	[प्रसंग १]	११९
७०.	सुथार कारीगर अडेल वासी	[प्रसंग १]	११९
७१.	एक क्षत्री	[प्रसंग १]	१२०
७२.	लघु पुरुषोत्तमदास क्षत्री	[प्रसंग १]	१२१
७३.	कविराज भाट	[प्रसंग १]	१२१
७४.	गोपालदास ठोरावासी	[प्रसंग १]	१२१
७५.	जनार्दनदास चौपड़ा क्षत्री	[प्रसंग १]	१२२
७६.	गडुस्वामी सनाढ्य ब्राह्मण	[प्रसंग १]	१२२
७७.	कन्हैया साल क्षत्री	[प्रसंग १]	१२३
७८.	नरहरदास गौड़िया	[प्रसंग १]	१२३
७९.	बादरायण दास	[प्रसंग १]	१२४
८०.	सद्दू पांडे मानिक चन्द पांडे की स्त्री तथा नरो बेटी आन्योर निवासी	[प्रसंग १-३]	१२४
८१.	नरहरदास संन्यासी	[प्रसंग १]	१२७
८२.	गोपालदास जटा धारी श्रीनाथ जी की खवासी करते थे	[प्रसंग १]	१२८
८३.	कृष्णदास ब्राह्मण	[प्रसंग १]	१२९
८४.	सन्तदास चौपड़ा क्षत्री आगरा निवासी	[प्रसंग १-२]	१३२

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

८५.	सुन्दरदास	[प्रसंग १]	१३३
८६.	मावजी पटेल तथा इनकी स्त्री विरजो	[प्रसंग १-३]	१३५
८७.	गोपालदास नरोड़ा वासी	[प्रसंग १-४]	१३७
८८.	सूरदास जी गऊघाट रहते	[प्रसंग १-६]	१३९
८९.	परमानन्ददास कन्नौजिया ब्राह्मण	[प्रसंग १-३]	१५०
९०.	कुम्भनदास गोरवा	[प्रसंग १-६]	१६६
९१.	कृष्णदास	[प्रसंग १]	१७८
९२.	कृष्णदास अधिकारी	[प्रसंग १-९]	१८१

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

श्रीनाथजी

चौरासी वैष्णव की वार्ता

श्रीकृष्णाय नमः, श्री गोपीजन वल्लभाय नमः।

अथ श्री आचार्य जी महाप्रभून के सेवक-

चौरासी वैष्णव की वार्ता लिख्यते

[वैष्णव - १ प्रसङ्ग - १]

"अथ दामोदर दास हरसानी की वार्ता॥"

एक समय की बात है कि श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पृथ्वी की परिक्रमा करने हेतु प्रस्थान किया, उनके साथ दामोदर दास भी थे, श्री आचार्य जी महाप्रभु अपने श्री मुख से, दामोदर दास को दमला नाम से पुकारते थे। श्री आचार्य जी ने दमला से कहा- "यह पुष्टिमार्ग तुम्हारे लिए प्रकट किया है।"

श्री आचार्य जी ने पृथ्वी की परिक्रमा करते हुए श्री गोकुल में पदार्पण किया। श्री गोकुल में गोविन्द घाट के ऊपर श्रीमहाप्रभु जी चबूतरे पर विराजते थे। वहाँ पर अब श्री आचार्य जी महाप्रभु की बैठक है और वहीं पर श्री द्वारिकानाथ जी का मन्दिर भी है।

एक दिन श्री आचार्य जी गोविन्द घाट पर अवस्थित चबूतरे पर विराजमान थे, उसी समय उनके मन में विचार आया, "श्री ठाकुरजी ने हमें जीवों को 'ब्रह्म सम्बन्ध' कराने की आज्ञा की है, जीव तो दोषवान है और श्री पुरुषोत्तम तो गुण निधान है, इस प्रकार दोषयुक्त जीव का गुण निधान श्री ठाकुर जी से सम्बन्ध होना कैसे सम्भव हो सकता है?" इस चिन्ता से अभिभूत होकर श्री आचार्य जी बहुत आतुर हुए उसी समय श्री ठाकुर जी प्रगट हो गए और श्री आचार्य जी महाप्रभु से पूछा कि आप चिन्तातुर क्यों हो रहे हो? श्री आचार्यजी महाप्रभु ने कहा- "आप स्वयं जानते है कि जीव तो दोषवान है अतः उस जीव का आपसे सम्बन्ध होना कैसे सम्भव है?" श्री ठाकुर जी ने उन्हें आश्वस्त किया - "तुम जिन जीवों को ब्रह्मसम्बन्ध कराओगे उनको मैं अङ्गीकार करूँगा, तुम जीवों को 'नाम-दान' करोगे उनके समस्त दोष निवृत्त हो जायेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

यह प्रसङ्ग श्रावण शुक्ला एकादशी को अर्द्धरात्रि में चरितार्थ हुआ। प्रातः काल द्वादशी के दिन श्री आचार्यजी महाप्रभु ने श्री ठाकुरजी को सूत की पवित्रा धारण कराई और मिश्री का भोग रखा। उन्हीं अक्षरों के अनुसार श्री आचार्य जी महाप्रभु ने 'सिद्धान्त-रहस्य' नामक ग्रन्थ की रचना की। प्रमाणार्थ श्लोक है-

श्रावणस्यामले पक्षे एकादश्यां महानिशि।
साक्षाद् भगवता प्रोक्तं, तदक्षरशउच्यते॥

[श्रावण शुक्लपक्ष की महानिशा (अर्द्धरात्रि) में साक्षाद् भगवान् ने जो आज्ञा की है उन्हें अक्षरशः कहा जाता है।]

उस समय श्री आचार्यजी महाप्रभु ने दमला से पूछा- "तुमने कुछ सुना?" तब दामोदरदास ने विनय पूर्वक कहा- "मैंने वचन तो सुने किन्तु मैं कुछ समझा नहीं।" तत्काल ही श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "श्री ठाकुरजी ने मुझे आदेशित किया है, कि जिन जीवों को हम ब्रह्म सम्बन्ध कराएँगे उनको वे अङ्गीकार करेंगे और जीवों के सकल दोष निवृत्त हो जायेंगे। अतः ब्रह्म सम्बन्ध कराना आवश्यक है।"

[प्रसङ्ग २]

पुनः श्री आचार्यजी महाप्रभु ने श्री ठाकुरजी से यह याचना की कि दामोदर दास का देह उनके [श्री आचार्य जी के] सामने नहीं छूटे। श्री आचार्य जी महाप्रभु के अन्तरङ्ग सेवक दामोदरदास से वे कोई भी तथ्य गोपनीय नहीं रखते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु तो श्रीमद्भागवत का अहर्निश अनुसंधान करते रहते थे तथा कथा के माध्यम से दामोदरदास के हृदय में "पुष्टिमार्ग सिद्धान्त एवं भगवल्लीला रहस्य" स्थापित करते रहते थे।

[प्रसङ्ग ३]

एक अन्य समय में दामोदरदास और श्री गुसाँई जी (श्री विट्ठलनाथजी) एकान्त में विराजमान थे, श्री गुसाँई जी ने दामोदरदास से पूछा- "तुम श्री आचार्य जी महाप्रभु को क्या करके जानते हो?"तो दामोदर दास ने कहा "हम तो श्री आचार्यजी महाप्रभु को जगदीश श्री ठाकुरजी से भी अधिक करके जानते हैं।" श्री गुसाँईजी ने दामोदर दास से कहा- "तुम ऐसा क्यों कहते हो कि श्री आचार्यजी, श्री ठाकुर जी से भी बड़े है?" तब दामोदर दास ने उत्तर दिया- "महाराज, दान बड़ा होता है या दाता?" किसी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

के पास कितना ही धन क्यों न हो, यदि वह धन में से दान करेगा, तभी तो वह दाता बनेगा, श्री आचार्य जी महाप्रभु का सर्वस्वधन तो श्री ठाकुर जी ही है, उन्होंने (श्री आचार्यजी ने) हमें अपने जीवन-सर्वस्व का दान किया है अतः हम उन्हें (श्री आचार्य जी को) सबसे बड़ा करके जानते हैं।

[प्रसङ्ग ४]

एक अन्य समय की बात है जब श्री आचार्य जी महाप्रभु तथा श्री गुसाँईजी अपनी बैठक में विराजमान थे। उनके पास दो-चार वैष्णव हँसने खेलने के लिए बैठे थे। आप (श्रीआचार्य जी ने) उनसे हँस-खेलकर हँसी (मसखरी)कर रहे थे और बड़ी प्रसन्नता से खेल-खेल में वार्ता भी कर रहे थे। उसी समय दामोदरदास भी आ गए। दामोदरदास ने कहा - "महाराज, अपना मार्ग निश्चिन्तता का नहीं है। यह मार्ग तो कष्टपूर्ण आतुरता का है।" इस पर श्री गुसाँई जी ने कहा- "तुम बहुत अच्छी बात करते हो लेकिन हमारे ऊपर श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा होगी तभी हमें कष्टपूर्ण आतुरता होगी। यह मार्ग तो श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से ही प्राप्य है।" दामोदरदास साष्टाङ्ग दण्डवत करके बोले- "हमें तो एक बार राज (आप) से विनती करनी थी कि यह मार्ग इस प्रकार व्यवहार योग्य है। इसके पश्चात् तो आप स्वयं प्रभु है आपको जैसा रुचेगा वैसा करेंगे। यह सुनकर श्री गुसाँई जी बहुत प्रसन्न हुए और बोले कि हमें श्री आचार्य जी महाप्रभु का निर्देश है कि दामोदरदास जो कहे उसे मन लगाकर स्वीकार करो।" हम इसीलिए तुम्हारी ओर देखकर अति प्रसन्नता का अनुभव करते है। इस प्रकार आप (श्री गुसाँईजी) ने दामोदर दास को श्री आचार्य जी महाप्रभु का अन्तरङ्ग सेवक समझा और उनकी शिक्षा को स्वीकार करते रहे। सच है- बड़े तो बड़े ही होते है।

[प्रसङ्ग - ५]

पहले श्री आचार्य जी महाप्रभु ने श्री ठाकुर जी से यह याचना की थी कि दामोदरदास का देह उनके समक्ष नहीं छूटे इसका हेतु यह था कि श्री आचार्य जी महाप्रभु ने मन में सन्यास ग्रहण करने का विचार किया। उस समय श्री गोपीनाथ जी और श्री गुसाँई जी दोनों ही भाई बाल-अवस्था में थे। उसके कुछ समय पश्चात् श्री गुसाँईजी ने अक्काजी से पूछा - श्री आचार्य जी महाप्रभु ने यह मार्ग प्रगट किया है, उसमें उत्सव मनाने का क्या प्रकार है, हम तो कुछ भी नहीं जानते है। श्री अक्काजी ने

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

कहा- ''मार्ग की समस्त रीति एवं उत्सव मानने का ढंग दामोदरदास जानते हैं, उनसे पूछिये, वह सब रीति तुम्हें कहेंगे। इसके बाद श्री गुसाँईजी ने दामोदरदास का बहुत सम्मान किया और भक्ति भाव से उन्हें अपने घर में पधराया। तत्पश्चात् श्री गुसाँईजी ने उनसे-प्रकारादि के बारे में पूछा। दामोदरदास ने सभी कुछ श्री गुसाँई को कहा।''

[प्रसङ्ग - ६]

एक दिन दामोदरदास के पिता का श्राद्ध-दिन था, उस दिन श्री गुसाँईजी, दामोदरदास के घर पधारे और दामोदरदास का श्राद्ध कार्य सम्पन्न कराया। उत्थापन के समय दामोदरदास दर्शन करने आये तो श्री गुसाँईजी ने उनसे कहा- ''मुझे श्राद्ध कराने की दक्षिणा दीजिए।'' दामोदरदास ने सिद्धान्त रहस्य ग्रन्थ के डेढ़ श्लोक का व्याख्यान किया। दामोदरदास से श्री गुसाँई जी ने कहा- ''आगे भी तो कुछ कहो।'' वे (दामोदरदास) बोले ''मैंने तो इतना ही दक्षिणा संकल्प किया है।'' इस पर श्री गुसाँई जी चुप हो गए। फिर तो दामोदरदास ने स्वयं ही पुष्टिमार्ग की प्रणालिका श्री आचार्य जी महाप्रभु के द्वारा रचित श्रीमद्भागवत की सुबोधिनी टीका और रहस्य वार्ता आदि का व्याख्यान श्री गुसाँई जी के समक्ष किया। इसके बाद से श्री गुसाँई जी दामोदरदास को अपने सन्मुख दण्डवत प्रणाम नहीं करने देते थे क्योंकि उन्होंने जान लिया कि दामोदरदास के हृदय में श्री आचार्य जी महाप्रभु सदा सर्वदा विराजमान है, इनसे दण्डवत प्रणाम कराना उचित नहीं है।

इसके पश्चात् एक दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदरदास को दर्शन दिया और आज्ञा दी कि अब से तुम श्री गुसाँई जी का चरणोदक प्रतिदिन लिया करो। दूसरे दिन दामोदरदास ने श्रीगुसाँईजी से चरणोदक की याचना की लेकिन श्री गुसाँईजी ने चरणोदक देने का निषेध कर दिया। दामोदरदास ने श्री गुसाँई जी से कहा- ''मुझे श्री आचार्य जी महाप्रभु ने प्रतिदिन आपका चरणोदक लेने की आज्ञा दी है।'' इस पर श्रीगुसाँई जी ने उन्हें चरणोदक दिया।

दामोदर दास को श्री आचार्य जी महाप्रभु प्रति तीसरे दिन पर दर्शन देते थे और मार्ग रहस्य वार्ता कहते थे। यदि तीसरे दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन नहीं होते थे तो दामोदरदास के पेट में पीड़ा होती थी। अत्यन्त कष्ट पाते थे। जब श्री आचार्यजी महाप्रभु के दर्शन हो जाते तभी कष्ट की निवृत्ति होती थी। कितने ही वर्षों तक दामोदरदास को श्री गुसाँईजी और श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दर्शन दिया। ऐसी कृपा

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

करते थे कि जो भी कोई बात होती तो दामोदरदास श्री गुसाँईजी के समक्ष कहते और मार्ग के प्रकट की वार्ता तो अहर्निश कहा करते थे। इस प्रकार दामोदरदास के हृदय में श्री आचार्यजी महाप्रभु विराजमान है यह समझकर श्रीगुसाँईजी दामोदरदास के सन्मुख दण्डवत प्रणाम नहीं करने देते थे। वास्तव में दामोदरदास की वार्ता का कोई पार नहीं है वे मार्ग के रीति के कृपापात्र हैं।

[प्रसङ्ग - ७]

श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदरदास से पूछा- "दामोदरदास, तू श्री गुसाँईजी को क्या करके (किस भाव से) जानता है?" दामोदरदास ने कहा- "हम तो उन्हें आपका पुत्र ही मानते हैं।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने आज्ञा दी - "जैसे तुम मुझे मानते हो वैसे ही इनके स्वरूप को भी मान्यता प्रदान करना।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने "श्रृंङ्गार रस मण्डन" ग्रन्थ की रचना की। उसमें यह विवरण अङ्कित किया है। ये दामोदर दास ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे।

[प्रसङ्ग - ८, वैष्णव-१]

श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदरदास से कहा था कि यह मार्ग उन्होने तेरे (दामोदरदास के) लिये प्रकट किया है,उसका कारण इस प्रकार है-

जिस प्रकार श्री आचार्य जी महाप्रभु के मार्ग की स्थिति गोप्य है, उसी प्रकार दामोदरदास की स्थिति भी गोप्य है। पूर्व वार्ता [प्रसङ्ग - १] में विवरण आया है कि श्री आचार्य जी महाप्रभु से श्री ठाकुर जी ने साक्षात् वार्ता की थी उस समय दामोदर दास भी समीप ही विद्यमान थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदर दास से पूछा था- "दमला तुमने कुछ सुना?" दामोदर ने कहा था- "वचन तो सुने थे लेकिन कुछ समझ में नहीं आया।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "अभी दस जन्म का अन्तराल है।" इसका कारण बताया कि जब तक श्री आचार्य महाप्रभु के मार्ग की स्थिति है, तब तक दामोदरदास का जन्म भी बार-बार होगा। इसीलिए दामोदरदास को इस मार्ग का प्रथम स्तम्भ बताया है। दामोदरदास के हृदय में श्री भगवल्लीला स्थायी भाव से स्थित है। दामोदरदास को समस्त सृष्टि (पुष्टि-सृष्टि) का प्रथम स्तम्भ सम्बोधन करने का भी हेतु है। जब तक श्री आचार्य जी महाप्रभु के मार्ग की स्थिति है, तब तक दामोदर दास की भी स्थिति है। इस प्रकार वे दामोदरदास ऐसे टेक के कृपापात्र भगवदीय है कि इनकी वार्ता का पार नहीं है। इनकी वार्ता प्रसङ्ग को कहाँ तक लिखा जावे?

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

कृष्णदास मेघन क्षत्रिय की वार्ता

[वैष्णव - २ प्रसङ्ग - १]

एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पृथ्वी की परिक्रमा की! उस समय कृष्णदास मेघन भी साथ ही थे, बद्रीनारायण के उस ओर किरनी नामक पर्वत है, वहाँ से एक शिलाखण्ड गिरा, उसे कृष्णदास ने अपने हाथों में थाम लिया। इस पर श्री आचार्य जी महाप्रभु बहुत प्रसन्न हुए। उन्होने कृष्णदास से कहा- "माँगो, क्या माँगते हो।" तब कृष्णदास ने तीन वस्तु माँगी- "प्रथम तो- मुखरता का दोष नष्ट हो। द्वितीय- मार्ग के सिद्धान्त का रहस्य समझ में आ जाए। तृतीय- मेरे गुरुदेव के घर आप स्वयं पधरावनी करें।" उनमें से प्रथम दोनों वस्तुओं की स्वीकृति श्री आचार्य जी महाप्रभु ने तत्काल ही प्रदान कर दीं,लेकिन गुरु के घर पधारने के लिए निषेध कर दिया।

इसके बाद बद्रिकाश्रम से आगे प्रस्थान किया। अगम्य पर्वत प्रदेश जहाँ जीवन गम्य नहीं है, वहाँ श्री वेदव्यास जी का स्थान है। श्री आचार्यजी महाप्रभु वहाँ पधारे और कृष्णदास से कहा "तू यहीं खड़ा रहना।" श्री आचार्य जी महाप्रभु आगे पधारे तो श्री वेद व्यास जी सामने आये और श्री आचार्य जी महाप्रभु को अपने धाम में ले आये। श्री वेद व्यास जी ने श्री आचार्य जी से पूछा- "तुमने श्रीभागवतजी की टीका लिखी है, वह मुझे सुनाओ।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने युगल गीत के अध्याय का एक श्लोक कहा-

वाम बाहुकृतवाम कपोलो वल्गित भ्रूरधरार्पित वेणुम्।
कोमलांगुलिभिराश्रितमार्ग गोप्य ईरयति यत्र मुकुन्दः॥

इस श्लोक का व्याख्यान किया तो तीन दिन व्यतीत हो गए। श्री वेद व्यास जी ने विनयभाव से कहा- "मैं इस भागवत के व्याख्यान की अवधारणा नहीं कर सकता हूँ, अतः क्षमा करो।" तत्पश्चात् श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने वेदव्यास से कहा- "आपने वेदान्त में ऐसे सूत्र क्या लिख दिये कि उनका मायावाद परक अर्थ लगा है।" श्री वेदव्यास जी बोले- "मैं क्या करूँ? मुझे आज्ञा ही ऐसी थी, कि इस प्रकार के अर्थ करना।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "मैंने ब्रह्मवादपरक अर्थ किया है।" व्यास जी को ब्रह्मवादपरक अर्थ सुनाया जिसे सुनकर वे बहुत प्रसन्न हुए। वे व्यासजी से विदा होकर तीसरे दिन जब श्री आचार्य जी महाप्रभु कृष्णदास के पास पधारे तो कृष्णदास से कहा- "तू यहीं ठहर रहा है गया क्यों नहीं।" कृष्णदास ने कहा- "महाराज मैं कहा

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

जाऊँ, मुझे आपके चरणारविन्दों के अलावा कोई अन्य आश्रय ही नहीं है।" यह सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु बहुत प्रसन्न हुए और बोले- "माँग तू क्या माँगता है ?" कृष्णदास ने वे ही तीन वस्तु माँगी - एक तो मुखरता का दोष दूर हो, दूसरे-मार्ग का सिद्धान्त रहस्य समझ में आ जाए, तीसरे- गुरुदेव के घर पदार्पण करो। इन तीनों में से दो ही वस्तु प्रदान करना स्वीकार किया और गुरु के घर पधारने का निषेध किया।

[प्रसङ्ग-२]

पुनः एक बार श्री आचार्य जी महाप्रभु गंगासागर पधारे। वहाँ श्री आचार्य जी महाप्रभु विश्राम हेतु लेटे थे और कृष्णदास चरण सेवा कर रहे थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु के मन में विचार आया कि कहीं धान के मुरमुरा हो तो लिये जाएँ श्री आचार्य जी महाप्रभु के अन्तःकरण का भाव कृष्णदास मेघन ने जानलिया। इसी बीच श्री आचार्य श्री महाप्रभु को निद्रा आ गई। कृष्णदास वहाँ से उठकर गंगासागर के ऊपर आए। उन्होने वहाँ से उस पार एक दीपक जलता हुआ देखा। उसी के सहारे तैर कर गंगा के पार पर आ गए। वहाँ एक गाँव था। खेत में धान उगे हुए थे। उन्होंने खेत में से गीले धान कटवाए और गाँव में जाकर भड़भूजा से मुरमुरा सिद्ध कराए, तदर्थ उसे एक टका के स्थान पर चार टका दिए तथा लेकर पुनः आ गए। श्री आचार्य जी महाप्रभु के चरणारविन्दो को दाबकर जगाया। उनके सन्मुख मुरमुरा रखे और निवेदन किया- "जै राज, आरोगिए।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पूछा- "तू ये मुरमुरा कहाँ से लाया है।" कृष्णदास ने सम्पूर्ण वृत्तान्त सुना दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु बहुत प्रसन्न हुए और वरदान माँगने की आज्ञा की। कृष्णदास ने तो वही पूर्व याचित तीन वस्तुएँ चाहीं- प्रथमतः मुखरता का दोष नष्ट हो, द्वितीयतः मार्ग का सिद्धान्त रहस्य समझ में आ जाए और अन्तिम गुरुदेव के घर चरण पधराना। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "तू जीव तो माँगना भी नहीं जानता है, यदि इस समय श्री ठाकुर जी के दर्शन करना चाहता तो, वही इच्छा पूर्ण करा देता।"

वहाँ से श्री आचार्य जी महाप्रभु सोरों पधारे। कृष्णदास ने विनती करके कहा- "महाराज, यहाँ मेरे गुरुदेव है, यदि आज्ञा हो तो उन्हें बुला लाऊँ?" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "जा तुझे खेद होगा।" इसके बाद कृष्णदास अकेला अपने गुरु के पास आया। कृष्णदास को आया हुआ देखकर उसके गुरु ने कहा- "अरे! तूने तो अन्य कोई गुरु बना लिया है।" कृष्णदास ने कहा- "मैंने तो अन्य कोई भी गुरु नहीं

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

बनाया है, मेरे गुरु तो आप ही है। हाँ आपकी कृपा से ही मैंने पूर्ण पुरुषोत्तम को प्राप्त किया है।'' इसे सुनकर गुरु बोले- ''तू उन्हें पूर्ण पुरुषोत्तम क्यों कर कहता है?'' कृष्णदास ने गुरु की बात सुनकर उनके सम्मुख अग्नि की धधकती हुई अँगीठी में से जलता हुआ अँगार अँजलि में भरकर कहा- ''श्री आचार्य जी महाप्रभु पूर्ण पुरुषोत्तम हों तो मेरे हाथ न जलें, यदि कोई अन्यथा हों तो मेरे हाथ जलकर भस्म हो जाए।'' यह कहकर एक मुहूर्त्त तक अग्नि हाथ में रखी। इसे देखकर गुरु भयभीत हो गए और कहा- ''अग्नि को अँगीठी में डाल दो।'' कृष्णदास ने अग्नि तब भी नहीं डाली, तो गुरु ने स्वयं अपने हाथ से अग्नि को नीचे डलवा दिया। कृष्णदास बड़े खेद के साथ वहाँ से उठ कर आ गया। यह सम्पूर्ण प्रसङ्ग श्री वल्लभाष्टक की टीका में श्री गोकुलनाथ जी ने विस्तार से लिखी है।

[प्रसङ्ग - ३]

पुनश्च कृष्णदास के हृदय में मार्ग-सिद्धान्त आरूढ हुआ। कदाचित् मार्ग की गोप्य वार्ता भी सभी के सामने प्रगट कहने लगे। इस पर किसी वैष्णव ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा- ''कृष्णदास गोप्यवार्ता भी सभी के समक्ष प्रगटरूप में कहता है।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- ''क्यों रे, तू सभी के समक्ष गोप्यवार्ता कहता है।'' कृष्णदास ने कहा- ''महाराज, आप उन्हीं से पूछिए कि मैंने कौन सी गोप्यवार्ता कही है।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने उस वैष्णव से पूछा- ''तुम से कृष्णदास ने गोप्यवार्ता प्रगट की है।'' वैष्णव बोला- ''महाराज, हमें तो सुधि नहीं रही।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु मुस्करा कर चुप हो गए।

[प्रसङ्ग-४]

एक समय श्री ठाकुरजी की इच्छा से श्री आचार्य जी महाप्रभु से कृष्णदास ने पूछा- ''महाराज, श्री ठाकुरजी को प्रियवस्तु क्या है? सो मुझसे कहो।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा- ''श्री ठाकुरजी की उत्तम वस्तु को भोगते है, जिसे गो-शब्द अर्थात वाणी से 'गोरस' कहते है। गोरस श्री ठाकुरजी को अतिप्रिय है, उसका भाव अनिर्वचनीय है, और सबसे अधिक भक्ति का स्नेह प्रभाव अतिप्रिय है, इसीलिए वे भक्तवत्सल कहलाते है। इसके बाद कृष्णदास ने पुनः प्रश्न किया- ''श्रीठाकुरजी को धुँआ के समान अप्रियवस्तु कुछ भी नहीं है और इसीलिए वे अप्रिय भक्तों के द्वेषी है।'' कृष्णदास ने फिर प्रश्न किया -''महाराज श्री रघुनाथजी सम्पूर्ण सृष्टि को लेकर स्वधाम

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पधारे तथा महाराज दशरथ को स्वर्ग दिया, ऐसा क्यों हुआ?'' इसके उत्तर में श्री आचार्यजी महाप्रभु ने कहा- ''श्री रघुनाथजी तो परमदयालु है, इसलिए दशरथ को तो स्वर्ग मिल गया। नहीं तो उनकी योग्यता स्वर्ग पाने की भी नहीं थी। दशरथ जी को तो श्री रघुनाथजी से अपने वचन अधिक प्रिय थे, जिन्हे सत्य करने के लिए उन्होंने श्री रामजी को वनवास में भेज दिया। ऐसा कर्म किया।

[प्रसङ्ग-५]

एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु से कृष्णदास ने प्रश्न किया- ''महाराज, भक्त होकर भी श्री ठाकुर जी की लीला का भेद नहीं जानने में आता है, इसका क्या कारण है?'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- ''भक्त के लिए विधिपूर्वक समर्पण बताया गया है, जो ऐसा नहीं कर पाते है वे श्री ठाकुरजी की लीला का भेद नहीं जान पाते। भगवद् भक्तों का संग करने से ही श्री ठाकुरजी की लीला का भेद समझ में आता है। जो लोग अपने को ही योग्य मानकर किसी का सत्संग नहीं करते है और जो सत्संग करते भी है तो अन्तःकरण पूर्वक नहीं करते है। इसीलिए श्री ठाकुरजी के स्वरूप तथा लीला का भेद नहीं जानते हैं। उत्तम भक्त का संग करे और श्री सुबाधिनी जी आदि ग्रन्थों का अहर्निशि अवगाहन करे, तो भगवद् भाव उत्पन्न हो। श्री ठाकुर जी भक्तों के हृदय में सदैव निवास करते हैं। वे सेवाभाव से बंधे रहते हैं। इस मार्ग के वैष्णव के हृदय में श्री ठाकुरजी सदा विराजमान रहते हैं, उनका सदा संग करना चाहिए। एक गुज्जनधावन वैष्णव का दृष्टान्त भी दिया। जिसने भी भावपूर्वक सेवा की है उसके ही सकल दोष निवृत्त हो गए हैं। इसलिए लीलास्थ ब्रजभक्तों के भाव का विचार करना चाहिए। जो वैष्णव श्री ठाकुर जी के स्वरूप को जानता है, उनका स्वरूप अलौकिक दृष्टि से ही जाना जा सकता है। वह भक्त श्री ठाकुर जी की जो आज्ञा होती है, उसे जान जाता है। जो वैष्णव श्री ठाकुर जी को जानता है, वह (वैष्णव) जो भी कार्य करता है, वह श्री ठाकुर जी के लिए ही करता है। वह श्री ठाकुर जी के विरह में ताप भाव का अनुभव करता है। अपने स्वदोष का विचार करता है। वही अपने स्वरूप को जान पाता है, जो यह विचार करता है कि पहले क्या था, अब क्या है? भगवत् सम्बन्ध करने से क्या बन गया तथा अब क्या करणीय है? जब अहर्निश यह चिन्तन करता रहेगा तो ही अपने स्वरूप को सही रूप में जान पाएगा भगवत् स्वरूप का यह प्राकट्य ब्रजभक्तों के लिए तथा इस मार्ग के अनुयायियों के लिए है। यदि सत्संग होगा तो ही इस मार्ग के श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

ठाकुर जी को जाना जा सकेगा। यों तो अनेक शास्त्र पुराण व अनेक सिद्धान्त इतिहास ग्रन्थों श्री ठाकुर जी का वैभवपूर्ण चरित्र वर्णन है। श्री ठाकुरजी भी श्री व्रजराज के घर इसीलिए प्रगटे कि उन्हें श्री ठाकुर जी न जाना जावे। उनके सही स्वरूप को तभी जाना जा सकता है, जब ब्रज भक्तों का सत्संग करे। सेवा का भी सही प्रकार इसी मार्ग के वैष्णव जानते हैं। उनसे मिलकर तथा सेवा का भाव पूछकर, सेवा करे तो ही भगवद् भाव उत्पपन्न हो सकता है। यदि कोई श्री ठाकुरजी की स्नेह युक्त सेवा करेगा तो ही श्री ठाकुरजी उसे अपना सर्वस्व जताएँगे।

[प्रसङ्ग - ६]

अन्य एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु श्री बद्रीनाथ जी के मन्दिर में पधारे, तब वेदव्यास जी उनके साथ थे। श्री आचार्य जी ने वेदव्यास से पूछा- "भ्रमर गीत के अध्याय में उद्धव जी को व्रज भक्तों के पास भेजा गया है," उस प्रसङ्ग में आधा ही श्लोक घटता (गतार्थ होता) है। श्री वेदव्यास जी ने आधा श्लोक कहा-

आत्मत्वाद् भक्तवश्यत्वात् सत्यवाक्त्वात् स्वभावतः।

इस श्लोक की टीका में श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पहले ही की थी जिसे सुनकर वेदव्यास जी बहुत प्रसन्न हुए, इसके पश्चात् श्री आचार्य जी महाप्रभु बद्रीनाथ जी के मन्दिर में पधारे। उस दिन वामन द्वादशी का दिन था अतः उस दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु के मन में व्रत करने का विचार था, किन्तु श्री बद्रीनाथ जी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा- "मैंने फलाहार का सर्वत्र संयोजन किया है लेकिन आप प्रसाद नहीं पा रहे हैं अतः आप रसोई बनाओ श्री ठाकुर जी को भोग लगाकर भोजन करिये। श्री ठाकुरजी की ऐसी ही इच्छा प्रतीत होती है।" इतने में ही कृष्णदास ने आकर कहा- "महाराज यहाँ तो कुछ भी पायेंगे नहीं।" उस दिन के बाद से वामन द्वादशी के दिन व्रत नहीं करके "उत्सवान्ते च पारणम्" ऐसा विधान किया है। श्री आचार्य जी महाप्रभु बद्रीनाथ जी से विदा हुए तो कृष्णदास भी उनके साथ ही थे।

[प्रसङ्ग - ७]

प्रथमवार श्री आचार्य जी महाप्रभु जब वेदव्यास जी के मन्दिर में पधारे तब कृष्णदास से कहा था "तू ठाडौ रहियौ।" इसलिए कृष्णदास खड़े रहे। आप (श्री आचार्य जी महाप्रभु) जब तीसरे दिन पधारे तब कहा- "तू गया क्यों नहीं ?" इस पर

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

कृष्णदास ने कहा था- "महाराज! आपकी आज्ञा नहीं मानी तो सेवक किस काम का?" सेवक को तो आज्ञा पालन करना ही चाहिए। अतः कृष्णदास ऐसे कृपापात्र और भगवदीय थे जो प्रभु की आज्ञा मानते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु कृष्णदास के ऊपर सदा प्रसन्न रहते थे। इसके बाद उसके मुखरता के दोष कभी भी मन में नहीं लाते थे। आप इतने उदाराशय थे कि उसके औदास्यमय जीवन की ओर ध्यान नहीं देते थे, सदा दया दिखाते थे। अपनी ओर से दया दिखाकर जीव को अंगीकार करते थे। जीवों की ओर अन्य कोई विचार नहीं करते थे। वे कृष्णदास मार्ग और गृह में सदा निवास करते रहते थे। वे कृष्णदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हैं अतः इनकी वार्ता का पार नहीं है। वार्ता कहाँ तक लिखी जाये।

अथ दामोदर दास सम्बलवारे खत्री कन्नोज के वासी की वार्ता

[वैष्णव - ३ प्रसङ्ग -१]

दामोदर दास को एक ताम्रपत्र प्राप्त हुआ और स्वप्न में उससे कहा- "जो इस पत्र को बाँच ले, तू उसकी शरण में जाना।" तब वह पत्र किसी से भी पढ़ा नहीं गया। कितने ही दिनों के बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु कन्नोज पधारे। वहाँ गाँव के बाहर आकर उतरे और कृष्णदास मेघन को गाँव में भेजा और कहा- तू सीधा-सामग्री ले आ, लेकिन किसी से भी यह न कहना कि श्री आचार्य जी महाप्रभु यहाँ पधारे हैं। कृष्णदास ने गाँव में से सीधा-सामग्री लेकर चलने लगा, तो उसे राजद्वार से आते हुए दामोदर दास ने मार्ग में जाते हुए देख लिया। दामोदर दास घोड़े से उतरकर कृष्णदास के पास आये और दण्डवत प्रणाम किया तथा पूछा- "तुम कहाँ से आये हो, क्या श्री आचार्य जी महाप्रभु भी पधारे है?" कृष्णदास ने कहा- "आज्ञा नहीं है।" दामोदर दास ने विचार किया कि यह श्री आचार्य जी महाप्रभु के बिना क्यों आता? इसलिए वे कृष्णदास के पीछे-पीछे चल दिये। उन्होंने अपना घोड़ा घर भिजवा दिया। कृष्णदास को दूर से आता हुआ श्री आचार्य महाप्रभु ने देखा और पीछे से दामोदर दास को भी देखा। दामोदरदास ने उनके चरणों में दण्डवत प्रणाम किया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कृष्णदास से कहा- "तूने इससे हमारे आने के बारे में क्यों कहा?" कृष्णदास ने कहा- "मैंने तो इससे नहीं कहा।" दामोदर दास श्री आचार्य जी महाप्रभु से विनय पूर्वक

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

निवेदन किया- "महाराज, इन्होंने मुझसे नहीं कहा। मैं तो इनके पीछे-पीछे चला आया हूँ।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदरदास से निषेध करते हुए कहा- "जब कन्नोज पधारेंगे, तब पावन करेंगे।" इसके पश्चात् श्री आचार्य जी महाप्रभु ने मन में विचार किया "अब जो आज्ञा हुई है, सो अपने आप चरितार्थ हो रहा है, इससे तो निषेध किया गया था, फिर भी आ गया है?" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदर से पूछा- "पत्र लाया है?" दामोदरदास ने विनयपूर्वक कहा- "महाराज, पत्र का क्या काम है, मुझे तो आप अपनी शरण में लीजियेगा। श्री आचार्य जी महाप्रभुजी ने कहा - "तुझे आज्ञा हुई है, जो यह पत्र बाँचे उसी की शरण में जाना। इसलिये तू पत्र लेकर आ।" तब दामोदर पत्र लेकर आया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पत्र बाँचकर उसका अभिप्राय दामोदर दास को बताया। इसके पश्चात् दामोदर दास को 'नाम' श्रवण कराया" इसके बाद दामोदर दास तथा दामोदरदास की स्त्री दोनों ने स्नान करके श्री आचार्य जी महाप्रभु की शरण ग्रहण की। तब तो श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदरदास को समर्पण कराया और दामोदरदास की स्त्री को भी नाम सुनाया तत्पश्चात् उसे भी श्री आचार्य जी महाप्रभु ने समर्पण कराया। तत्पश्चात् दामोदर ने विनती की- "महाराज, अब हमें क्या आज्ञा है? अब हम क्या करे?" तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने आज्ञा की कि अब सेवा करो। दामोदर दास ने कहा- "सेवा किस भांति करें?" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "श्री ठाकुरजी का स्वरूप देखकर लाओ।" एक दरजी के घर में श्री ठाकुरजी का स्वरूप विग्रह था, उसे दामोदर दास ने द्रव्य देकर ले लिया। फिर दामोदर ने अपने घर की पुताई कराई, घर के सभी पात्र बदलवाये। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने उस स्वरूप विग्रह को पंचामृत से स्नान कराया, विग्रह स्वरूप का 'श्री द्वारिकानाथ' नाम धराया, फिर उसे सिंहासनासीन किया। इस प्रकार दामोदर दास के माथे सेवा पधराकर पीछे भोग समर्पण किया। समयानुसार भोग सराय कर बीड़ा समर्पित करने लगे तो देखा कि पान के पत्ते तो ढेर हैं। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदर दास से कहा- "हरे पान के पत्ते कभी भी समर्पण नहीं करना, श्री ठाकुरजी को उत्तम सामग्री ही समर्पण करनी चाहिए। श्री ठाकुरजी तो उत्तम वस्तु के भोक्ता हैं।" इसके पीछे दोनों स्त्री-पुरुष भली-भाँति से सेवा करने लग गए। श्री द्वारिकानाथ की सेवा भलीभाँति से होने लगी। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने आज्ञा दी- "वस्त्र उतरने पर (प्रसादी) पर काला हो जाता है अतः श्री ठाकुरजी को कभी भी समर्पण नहीं करना चाहिए। उत्तम कोमल वस्तु हो वही श्री ठाकुरजी के काम आती है। श्री ठाकुरजी के लिए उत्तम वस्तु ही घर पर लानी चाहिए। श्री ठाकुरजी की सामग्री में से अन्य किसी के लिए खर्च नहीं करना चाहिए।"

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

दामोदरदास अपनी स्त्री सहित दोनों भली-भाँति सेवा करने लग गए। जो उज्ज्वल सामग्री होती उसे रूपे (चाँदी) के कटोरे में सजाकर परोसते। उसे इस प्रकार रखते थे कि कोई समझ भी न सके कि इसमें सामग्री है। इस प्रकार भाव पूर्वक सेवा करने लग गए।

[प्रसङ्ग - २]

दामोदरदास श्री ठाकुरजी का जल आप स्वयं ही भरते थे, एक दिन उनका श्वसुर दामोदरदास के घर आकर उनसे कहने लगा- ''तुम जल भर कर लाते हो, हमें जाति में लज्जा आती है अतः तुम स्वयं जल न लाकर किसी सेविका से मंगवाया करिए।'' दामोदरदास ने एक घड़ा तो स्वयं लिया और दूसरा घड़ा अपनी स्त्री के हाथ में दिया और दोनों जने घड़ा लेकर बीच हाट में से निकले तथा जल भर कर अपने घर आये। इसके पश्चात् दामोदरदास का श्वसुर आया और आकर दामोदरदास के पैरों में गिर पड़ा तथा विनती करके बोला- ''मैने बड़ी भूल की, अब से तुम्ही जल भरा करो, लेकिन स्त्री से जल मत भराना। मैं आज के पीछे कुछ नहीं कहूँगा।'' तब से दामोदरदास स्वयं ही जल भरने लग गए। श्री द्वारिकानाथ की जो इच्छा होती, वे दामोदर दास से माँग लेते। श्री द्वारिकानाथ दामोदर दास से बातें करते (बतियाते) थे। दामोदरदास ने सेवा करके श्री ठाकुरजी को प्रसन्न कर लिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु अपने श्रीमुख से कहा करते कि जिसने भक्त अम्बरीष को नहीं देखा हो, वह दामोदर को देख ले। राजा अम्बरीष तो मर्यादा मार्ग के थे और यह (दामोदरदास) पुष्टिमार्गीय है, इसमें इतनी अधिकता भी है।

[प्रसङ्ग - ३]

अन्य एक दिन ग्रीष्मकाल में द्वारिकानाथ जी को पौढ़ाकर दामोदरदास जाकर चौबारे में सो गए। उस दिन गर्मी बहुत थी। श्रीद्वारिकानाथ जी ने सेविका को किवाड़ खोलदेने की आज्ञा दी क्योंकि उन्हें गर्मी का अनुभव हुआ है। सेविका ने दरवाजा खोल दिया। श्री द्वारिकानाथ जी ने सेविका को पंखा झलने की आज्ञा दी। सेविका ने लगभग एक घण्टा तक पंखा किया (झला)। तब तो द्वारिकानाथ जी ने सेविका को भी सो जाने का आदेश दिया। सेविका दरवाजा खुला छोड़ जाकर सो गई। प्रातः काल होने पर दामोदर दास ने देखा, दरवाजा खुला है तो दामोदर दास ने पूछा- ''दरवाजे के किवाड़ किसने खोले?'' सेविका ने कहा- ''मुझे तो ठाकुरजी ने किवाड़ खोल देने की आज्ञा दी थी, सो मैने किवाड़ खोले हैं।'' इस पर दामोदरदास अपनी सेविका पर बहुत खीझे

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

और बोले- "तूने किवाड़ क्यों खोले ? मुझे श्री ठाकुर जी ने किवाड़ खोलने की आज्ञा क्यों नहीं की ? उन्होंने आप स्वयं ने ही किवाड़ क्यों नहीं खोल लिए ?" परन्तु प्रभु तो बहुत दयालु हैं। जिस पर स्नेह हों उसी से बातें करते है। श्री आचार्य जी महाप्रभु के अंगीकार करने में सब समान हैं। लौकिक क्रिया में कोई ऊँचा-नीचा भले ही कह लो, श्री ठाकुरजी तो स्नेह के वशीभूत होने वाले हैं। फिर तो श्री ठाकुरजी ने कही- "मैंने किवाड़ खुलवाये हैं, तो इसने किवाड़ खोले हैं। तू तो चौबारे में जाकर सो गया और मुझे भीतर सुलाया। मुझे गर्मी बहुत लगी तो मैंने किवाड़ खुलवा लिये। तू इस सेविका पर क्यों क्रोधित (खीझता) होता है ?" इस प्रकार कहकर बहुत क्रोध (खीझे) किया इसके बाद तो दामोदरदास ने कहा- "जब तक मन्दिर को ढंग से नहीं सँम्हलवा दूँगा, प्रसाद ग्रहण नहीं करूँगा।" इस पर दामोदरदास की स्त्री ने कहा- "प्रसाद नहीं लेने से कैसे कार्य होगा ? कोई पाँच-सात दिन का काम तो है नहीं, जो प्रसाद लिये बिना काम चल जाए।" तब तो दामोदरदास ने कहा- "प्रसाद तो नहीं लूंगा, फलाहार कर लूँगा।" इस प्रकार से मन्दिर सिद्ध हुआ, और श्रीद्वारिकानाथ को पाट बिठाया। उत्सव किया गया, वैष्णवों को प्रसाद लिवाया, तत्पश्चात् दामोदर दास स्वयं ने प्रसाद ग्रहण किया।

[प्रसङ्ग - ४]

अन्य एक दिन दामोदर दास श्री ठाकुर जी को राजभोग समर्पण कर शैय्या-मन्दिर को सँम्हालने गए तो देखा दुलीचा के ऊपर बिल्ली ने बिगाड़ किया है। तब दामोदर दास ने कहा- "श्री ठाकुरजी अपनी शैय्या को भी नहीं रख सकते ?" जब दामोदर दास ने ऐसा कहा तो श्री ठाकुरजी ने थाल चौकी ऊपर से लात मार कर गिरा दिया। दामोदर दास से श्री ठाकुर जी ने कहा- "तू कैसा सेवक है, सेवक होकर इस तरह कहता है।" इस प्रकार कहते हुए बहुत खीझे। तत्पश्चात् तो दामोदरदास ने बहुत बिनती की बहुत ही मनुहार की। राजभोग के लिए पुनः सामग्री सिद्ध कराई तथा श्री ठाकुर जी को भोग समर्पण किया, तो श्री ठाकुर जी ने आरोगा। परन्तु दो माह तक श्री ठाकुर जी नहीं बोले। तब दामोदर दास ने बहुत विनय किया तो श्री ठाकुर जी बोलने लगे।

[प्रसङ्ग - ५]

अन्य एक दिन दामोदर हरसानी इनके घर पाहुने (अतिथि) बनकर आये, वे दामोदर सम्बल वाले के यहाँ पाँच-सात दिन रहे। इन्होंने भलीभाँति सत्कार किया। तत्पश्चात् दामोदर हरसानी इनसे विदा होकर अडेल गाँव आये। श्री आचार्य जी महाप्रभु

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

ने दामोदर दास से पूछा- ''दमला, तू कहाँ रुका था और कहाँ प्रसाद ग्रहण किया?'' दामोदर दास हरसानी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से विनय पूर्वक निवेदक किया- ''महाराज कन्नौज में दामोदर दास सम्बल वाले के घर रुका था, परन्तु अनसखड़ी (पक्वान्न) प्रसाद लिया करता था, सखड़ी (कच्चा) प्रसाद नहीं लेता था।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु दामोदरदास सम्बल वाले के ऊपर अप्रसन्न हुए और कहा- ''यह मेरा अन्तरङ्ग सेवक है, इसे सखड़ी महाप्रसाद क्यों नहीं लिवाया।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु के अन्तःकरण की यह बात दामोदर दास सम्बल वाले ने घर बैठे ही जान ली कि श्री आचार्य जी महाप्रभु अप्रसन्न हुए हैं। उसने अपनी स्त्री से कहा- ''तू श्री ठाकुरजी की सेवा भलीभाँति से करना। मैं तो श्री आचार्य जी महाप्रभु के चरण दर्शन करने हेतु अडेल-गाँव जा रहा हूँ।''

वहाँ से चलकर वे अडेल पहुँच गए। श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन करके दण्डवत प्रणाम किया। श्री आचार्य जी महाप्रभु उन से पीठ देकर बैठ गए। दामोदरदास सम्बल वाले ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से विनती करके पूछा- ''महाराज, मेरा अपराध क्या है? वैसे तो जीव अपराध करता ही आया है। किन्तु अपराध की जानकारी हो जाए तो भला हो सकता है।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- ''तूने दामोदर हरसानी को अपने घर महाप्रसाद अनसखड़ी क्यों लिवाया सखड़ी क्यों नहीं लिवाया?'' दामोदर सम्बल वाले ने निवेदन किया- ''महाराज, दामोदर दास से आप ही पूछिये कि उन्होने सखड़ी प्रसाद क्यों नहीं लिया?'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदर हरसानी से कहा- ''तूने सखड़ी महाप्रसाद क्यों नहीं लिया?'' दामोदर ने उत्तर दिया- ''महाराज, श्री ठाकुर जी प्रातःकाल बालभोग आरोगते, तत्पश्चात् पक्वान मिष्ठान्न दूध पाक बहुत लेते, सो सखड़ी की रुचि ही नहीं रहती थी, इसलिए सखड़ी महाप्रसाद नहीं लेता था।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- ''तू तो अपनी इच्छा से सखड़ी महाप्रसाद नहीं लेता था, परन्तु मुझे तो इसके ऊपर बहुत खीझ हुई थी।'' इससे स्पष्ट है कि भक्तों के अन्तःकरण की वृत्ति को जानने के लिए प्रभु का प्राकट्य है। इसीलिए दामोदरदास सम्बल वाले ने अपने घर बैठे ही कन्नोज में श्री आचार्य जी महाप्रभु के अन्तःकरण के भाव को जान लिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु तो भक्तों के हृदय में सदा विराजमान रहते हैं। लेकिन उन्होंने अपने भक्त के हृदय में उन्हें अपने घर भेज दिया। दामोदरदास अपने घर कन्नौज आगया और दोनों स्त्री पुरुषों ने भलीभाँति श्री ठाकुरजी की सेवा को स्वीकार किया।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

[प्रसङ्ग - ६]

सिंहनन्दन के वैष्णव श्री आचार्य जी महाप्रभु के पास जाते तो सभी कन्नौज में दामोदर दास से मिलकर ही जाया करते थे। जो भी वैष्णव आतेथे उन सभी को कन्नौज में अपने घर आदर पूर्वक सम्मान करके उतारते, सभी को महाप्रसाद लिवाते तथा जब वे अड़ेल के लिए प्रस्थान करते तो प्रति वैष्णव एक-एक मौहर (स्वर्ण मुद्रा) और एक-एक श्रीफल (नारियल) श्री आचार्य जी महाप्रभु को भेंट स्वरूप भिजवाते, क्योंकि वे वैष्णव श्री आचार्य जी महाप्रभु के चरणों में खाली हाथ दण्डवत कैसे करते। ऐसे सदाचरण से श्री आचार्य जी महाप्रभु इन पर सदा प्रसन्न रहा करते थे।

[प्रसङ्ग - ७]

पुनश्च, दामोदरदास का श्वसुर बहुत प्रसन्न था। उसने एक सौ सेविकाएँ अपनी बेटी की सेवार्थ दायजे (दहेज) के रूप में दी। जिससे उसकी बेटी बैठी रहेगी और सेविकाएँ समस्त सेवा कार्य करेंगी। लेकिन दामोदर दास की स्त्री सेवा सम्बन्धी समस्त कार्य आप स्वयं करती थी, उन सेविकाओं से नहीं कराती थी। वह ऐसी भगवदीय थी।

[प्रसङ्ग - ८]

पुनः एक दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु स्वयं दामोदर के घर पौढे थे और दामोदरदास चरण सेवा करते थे, श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदर दास से पूछा- "दामोदरदास, तेरे मन में किसी बात का मनोरथ है।" दामोदरदास ने कहा- "महाराज, मुझे तो किसी भी बात का मनोरथ आपकी कृपा से रहा नहीं है।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "तू अपनी स्त्री से पूछकर आ कि उसे किसी बात का मनोरथ है क्या ?" स्त्री ने कहा- "अब तो किसी बात का मनोरथ शेष नहीं है, हाँ एक पुत्र का मनोरथ अवश्य है। यदि पुत्र हो जाये तो अच्छा रहे।" दामोदरदास ने जाकर श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा- "महाराज, मेरी स्त्री का मनोरथ है कि एक पुत्र हो जाए तो अच्छा हो।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "हाँ, होगा।" तत्पश्चात् श्री आचार्य जी महाप्रभु आप तो श्रीनाथ जी द्वार पधारे, पीछे जब समय आया तो उसकी स्त्री के गर्भ स्थिति हुई। इसके बाद उसके मकान पर एक डाकौत आया। उससे उसकी साथ की सारी स्त्रियाँ अपने भविष्य के बारे में पूछने लगीं। किसी स्त्री ने दामोदर दास की स्त्री से भी कहा- "तू भी डाकौत से पूछ ले कि तेरे क्या होगा? बेटा होगा या बेटी?" इसके पश्चात् सेविका ने डाकौत से पूछा कि दामोदरदास की स्त्री के गर्भ से बेटा होगा या बेटी? डाकौत ने कहा- "बेटा होगा।" इसके कुछ दिन बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु कन्नौज में पधारे।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

दामोदरदास चरण छूने लगे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "तू मुझे मत छूना, तुझे अन्याश्रय हुआ है।" दामोदरदास ने कहा- "महाराज, मुझे तो इस विषय में कोई जानकारी नहीं है।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "तू अपनी स्त्री से पूछ कर आ कि तूने कोई अन्याश्रय किया है।" स्त्री ने समस्त घटना चक्र का वर्णन दामोदरदास से कर दिया। दामोदरदास ने समस्त विवरण श्री आचार्य जी महाप्रभु से वर्णन कर दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "इसके पेट से म्लेच्छ जन्म लेगा।" यह कहकर श्री आचार्य जी महाप्रभु तो अड़ेल को पधार गये। इसके पश्चात् दामोदरदास की स्त्री ने सुना कि उसके पेट से म्लेच्छ होगा। तब से वह श्री ठाकुरजी की सेवा सम्बन्धी वस्तुओं को स्पर्श नहीं करती थी। यही कहा करती थी कि उसके पेट में म्लेच्छ पल रहा है। अतः ठाकुरजी के पात्रादि उसके छूने योग्य नहीं हैं। पीछे जब प्रसूत का समय आया तो उसने अपनी माता को बुलाकर कहा- "मेरे गर्भ से होने वाले बालक को तत्काल तुम अपने घर ले जाना हम उसका मुख नहीं देखेगें। यदि हम उसका मुख देखेंगे तो हमारा धर्म नष्ट हो जाएगा।" इसके बाद बालक का जन्म होते ही उसकी माता (दामोदरदास की सास) बालक को अपने घर ले गई। धाय के द्वारा बालक का पालन-पोषण कराया।

[प्रसङ्ग - ९]

बहुत दिन पीछे दामोदर दास का शरीर छूट गया (प्राणान्त हो गया)। उसी स्त्री ने इस बात को छुपा लिया। इसके बाद दामोदरदास की स्त्री ने एक वैष्णव को अड़ेल भेजकर भाड़े की नाव मँगाई तथा उसमें घर की समस्त सामग्री तिनका पर्यन्त भरकर वैष्णव के हाथों अड़ेल भेज दी। उसे आदेश दिया कि समस्त सामग्री श्री आचार्य जी महाप्रभु के मंदिर में पहुँचा दो। वैष्णव नाव लेकर चल दिया, कोई तीस कोस के लगभग नाव गई होगी, दामोदरदास की स्त्री ने दामोदरदास की देह छूटने का संदेश प्रसारित कर दिया। समस्त वैष्णवों ने इकट्ठा होकर दामोदर दास को नमस्कार किया। दामोदर दास का बेटा तुरक (म्लेच्छ) था। वह आया। उसने घर में देखा तो उसे जल भरे हुए करुवे के अलावा कुछ भी नहीं मिला। यह देखकर वह माथा पीटने लगा। दामोदर दास का ससुर आया उसने अपनी बेटी से कहा- "तुमने घर में कुछ भी नहीं रखा, अब तुम क्या खाकर गुजर करोगी?" उसकी बेटी ने कहा "तुम लोग जो दोगे, वही मैं खाऊँगी। क्षत्रियों के यहाँ लड़की को उसके जाति भाई जो देते है उसी से वह अपना पेट पालन करती है।" दामोदरदास की स्त्री ने अन्नजल का त्याग कर दिया अतः कुछ दिन बाद उसकी भी देह छूट गई। दोनों ही स्त्री-पुरुषों का अन्त्यकर्म साथ ही हुआ। वह स्त्री ऐसी भगवदीय थी।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

कुछ दिन के बाद किसी वैष्णव ने श्री आचार्य महाप्रभु के आगे विवरण सुनाया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "इनको यही करना उचित था। वे दोनों ही भगवदीय थे।" उनकी सराहना श्री आचार्य जी महाप्रभु अपने श्री मुख से करते थे अतः उनकी वार्ता अनिर्वनीय है। इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए।

अथ पद्मनाभदास कन्नौजिया ब्राह्मण कन्नौज में रहते उनकी वार्ता

[वैष्णव - ४, प्रसङ्ग - १]

एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु कन्नौज पधारे। पद्मनाभदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन के लिए आए। पद्मनाभदास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के श्रीमुख से भगवद्वार्ता का प्रसङ्ग सुना। उसने जानलिया कि ये तो साक्षात् ईश्वर स्वरूप है। ऐसे श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन हुए।

पद्मनाभदास अपने घर पर ही व्यास-आसन पर बैठकर कथा-व्याख्यान किया करते थे। बहुत मात्रा में श्रोतागण आते थे। किसी के घर वृत्ति हेतु जाना नहीं पड़ता था। वृत्ति घर बैठे ही चलती रहती थी। पद्मनाभ का जीवन क्रम इसी प्रकार से चल रहा था।

इसी क्रम में चलते उन्हें श्री आचार्य जी महाप्रभु के श्रीमुख से भगवत वार्ता प्रसङ्ग सुन लिया। पद्मनाभदास उनकी शरण आये, नाम दान प्राप्त किया, पीछे इन्हें समर्पण कराया। फिर उत्थापन के समय श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पुस्तक (पोथी) खोली। वे उस समय दामोदर दास सम्बल वाले के घर बैठे थे। उसी समय पद्मनाभदास अपने घर से आये श्री आचार्य जी महाप्रभु को दण्डवत करके बैठ गए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पुस्तक खोलकर निबन्ध का श्लोक बोला-

"पठनीयं प्रयत्नेन सर्वहेतु विवर्जितम्।
वृत्यर्थं नैव युञ्जीत प्राणैः कण्ठगतैरपि
तदभावे तथैव स्यात्तथा निर्वाहमाचरेत्"

उनका पढ़ा हुआ यह श्लोक पद्मनाभदास ने सुना और फिर दशम स्कन्ध की कथा कही वह भी सुनी। तब पद्मनाभदास ने जल की अञ्जलि भर कर संकल्प

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

लिया- "आज से पीछे कथा कहने की वृत्ति नहीं करूँगा।" तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपने श्रीमुख से कहा- "श्री भागवत कथा वृत्ति के लिये नहीं कहना, और तो तुम्हारी वृत्ति है, तुम ब्राह्मण हो अतः अन्य पुराण महाभारत आदि की कथा तो कहना।" इस पर पद्मनाभदास ने कहा- "महाराज अब तो संकल्प कर लिया सो कर लिया अतः अब कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "तुम गृहस्थ हो सो कैसे निर्वाह करोगे?" श्री पद्मनाभ ने कहा- "महाराज, भिक्षा माँग कर निर्वाह करूँगा।" इसके बाद वे एक यजमान के घर वृत्ति के लिए गए। उसने उनका बहुत आदर सम्मान किया तो पद्मनाभ को बहुत ग्लानि हुई क्योंकि इससे पूर्व तो कभी भिक्षावृत्ति की नहीं थी और अब वैष्णव हो गए तो यह भिक्षा भी उचित नहीं। इसके बाद पुनः संकल्प लिया- "अब कभी भी भिक्षा नहीं करुँगा।" तब पुनः श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "अब निर्वाह कैसे करोगे?" पद्मनाभदास ने कहा- "अब वैश्य-कर्म करके निर्वाह करूँगा।" अब तो पद्मनाभदास ने लकड़ी लाकर कौड़ी बैचना शुरु कर दिया। अन्य किसी भी बात पर ध्यान नहीं दिया। इस तरह देहादि का निर्वाह किया। ऐसे नियम के कृपापात्र भगवदीय थे।

[प्रसङ्ग - २]

अब श्री आचार्य जी महाप्रभु प्रयाग में पधारे, तब पद्मनाभदास साथ थे। एक प्रहर रात्रि व्यतीत हो गई तो श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पद्‌मनाभदास से कहा- "अक्काजी को पार से पधराय कर ले आओ।" इतना सुनते ही पद्मनाभ उठकर चल दिये। वहाँ पाँच-सात वैष्णव भी बैठे हुए थे। वे कहने लगे- "यह ब्राह्मण तो बड़ा बावला है। इस समय कहाँ जायेगा। सभी नावें बँधी हुई होंगी। घाट वाले सभी घर चले गए होंगे। अतः यह समय तो जाने का है ही नहीं। परन्तु इसे तो श्री आचार्य जी महाप्रभु की आज्ञा है, उसका विश्वास है अतः इसका कार्य अवश्य सिद्ध होगा।" पद्मनाभदास घाट के ऊपर आकर इधर-उधर देखने लगे। इतने में क्या देखा कि एक लड़का, उम्र कोई दस वर्ष, एक डौंगी (छोटी नाव) लेकर आया। उसने पद्मनाभ से पूछा- "क्या तू पार जायेगा?" पद्मनाभदास ने कहा- "हाँ-हाँ जाऊँगा।" उसने उन्हें पार उतार दिया। पुनः उसने पूछा- "दुबारा लौटकर भी चलोगे?" पद्मनाभदास ने कहा- "दो घड़ी पीछे आऊँगा।" लड़के ने कहा- "डौंगी यहीं रखता हूँ, तुम जल्दी आना।" इसके बाद में अड़ेल में जाकर श्री अक्काजी को पधराकर ले आये, तब उसी डौंगी में बैठा कर पार उतरे। इसके पश्चात उसने

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पीछे फिर कर देखा तो वहाँ न तो डौंगी थी और ना ही वह लड़का था। श्री अक्का जी को पधराकर के घर आ गए। पीछे श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पद्मनाभदास को आज्ञा दी कि जाकर सो जाओ। जब वे वहाँ पहुँचे जहाँ अन्य वैष्णव सो रहे थे तो वैष्णवों ने पूछा- "तुम क्या कर आये।" पद्मनाभ दास ने उन्हें सब समाचार सुना दिये। सब शांत सुनकर वैष्णवों ने कहा- "तूने श्री ठाकुरजी को बहुत श्रम कराया है।" इसके बाद वैष्णवों ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से पूछा-"महाराज, पद्मनाभदास ने श्रीठाकुरजी को बहुत श्रम कराया है।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "यह जो कुछ हुआ है मेरी इच्छा से हुआ है। तुम पद्मनाभदास से कुछ भी मत कहो।"

[प्रसङ्ग - ३]

और एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु श्री गोकुल से अडेल को जा रहे थे। उनके साथ एक व्यापारी भी कुछ वस्तु लेकर चल दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु कन्नौज के बीच पधारे तो व्यापारी भी साथ ही था। उसके ऊपर कुछ चोरों ने हमला कर दिया और उसकी सब वस्तुएँ लूट ली। श्री आचार्य जी महाप्रभु आप तो दामोदरदास सम्बल वाले के यहाँ पधारे। वहाँ उन्होंने रसोई करके श्री ठाकुरजी के लिए भोग समर्पण किया। इतने में ही वह व्यापारी रोते-पीटते हुए आया। उसने पूछा- "श्री आचार्य जी महाप्रभु क्या कर रहे हैं"। तो पद्मनाभदास ने कहा- "भोजन कर रहे होंगे।" व्यापारी बोला- "हमारा तो सारा माल लुट गया है और श्री आचार्य जी भोजन कर रहे है।" पद्मनाभदास ने मन में विचार किया- "श्री आचार्य जी महाप्रभु सुनेंगे तो भोजन नहीं करेंगे। दो घडी अवार (देर) हो जायेगी।" अत: पद्मनाभदास उस व्यापारी की बाँह पकड़कर उसे एक शाह (साहूकार) की दुकान पर ले गए। उस शाह ने पद्मनाभदास का बहुत सम्मान किया और कहा- "आज्ञा करो, कैसे पधारे हो?" पद्मनाभदास ने उस शाह से कहा - "इस व्यापारी को इतने द्रव्य की चाहना है सो दे दो, हम द्रव्य के ब्याज का खत-पत्र लिख देंगे।" शाह ने कहा- "पद्मनाभदास तुमको जितना द्रव्य वांछनीय है, ले जाओ, खत-पत्र की क्या बात है।" पद्मनाभदास ने कहा- "पहिले तो खत पत्र लिखूँगा, पीछे द्रव्य लूँगा। बिना खत-पत्र लिखे, मैं द्रव्य नहीं लूँगा।" शाह ने कहा- "जैसी आपकी इच्छा।" पद्मनाभदास ने खत-पत्र लिखा और शाह ने व्यापारी को द्रव्य दिया। वह व्यापारी अपना द्रव्य लेकर अपने घर लौट गया। पद्मनाभदास भी अपने घर लौट आए। पद्मनाभदास से श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पूछा-

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

"पद्मनाभदास, तू कहाँ गया था?" पद्मनामदास ने कहा- "महाराज, मैं एक काम से गया था।" श्री आचार्य जी महाप्रभु तो साक्षात् ईश्वर स्वरूप थे, तत्काल जान गए। पद्मनाभदास से श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "हमने तो उस व्यापारी को साथ नहीं लिया था। उसको माल दिया। वह तो पीछे रह गया था तो हम क्या करें?" तूने बहुत बुरा किया जो ऋण लेकर उसे पैसा दिया।" पद्मनाभदास ने कहा- "महाराज यह बात तो सत्य है। वह व्यापारी पुकारता तो आपके भोजन में दो घड़ी का विलम्ब होता तो मेरा जीवन ही वृथा हो जाता। ऋण तो मैं कल चुका दूँगा, यह कितनी सी बात है?" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा "तूने धर्म रहन (गहने) लिख दिया। ऐसा क्यो?" पद्मनाभदास ने कहा- "महाराज ऐसा गाढा लिखा है कि बिना दिये छुटकारा न मिले।" श्री आचार्य जी महाप्रभु अडेल पधार गए। पद्मनाभदास एक राजा के यहाँ गए। उस राजा ने पद्मनाभदास का बहुत सम्मान किया और राजा ने कहा- "कृपा करके मुझे कुछ (ज्ञानवार्ता) सुनाओ।" पद्मनाभदास ने कहा- "राजन्, श्री भागवत तो नहीं सुनाऊँगा यदि इच्छा हो तो महाभारत सुनाऊँ।" राजा ने कहा- "महाराज, महाभारत ही सुनाओ।" अतः महाभारत की कथा कहने लगे। जब युद्ध का प्रसङ्ग आया तो सभी (वीर-क्षत्रियों) के हथियार छुड़ा कर रखवा दिये तब कथा कहने लगे। कथा प्रसङ्ग में वीररस का ऐसा उद्रेक हुआ कि वे क्षत्रिय आपस में सब लात-मुक्को से लड़ने लगे। कथा बहुत दिनों तक चली। जब महाभारत की कथा सम्पूर्ण हुई तो राजा ने बहुत सी दक्षिणा देने का मन बनाया। पद्मनाभदास ने कहा- "इतना द्रव्य (दक्षिणा) तो मैं लूँगा नहीं। मेरे माथे ऋण है, अतः उतना ही द्रव्य दक्षिणार्थ स्वीकार करूँगा। इसके पश्चात् उस शाह का मूल-ब्याज जितना बनता था, उतनी दक्षिणा स्वीकार करके, शेष धन को राजा के लिए लौटा दिया। शाह का सम्पूर्ण द्रव्य चुकाकर खत-पत्र फाड़ दिया।"

[प्रसङ्ग - ४]

पद्मनाभदास के एक कुमारी (अविवाहित) बेटी थी, उसके निमित्त एक वर की चाहना थी, जो श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक हो। उन्होंने तदर्थ वैष्णवों से पूछा- "वैष्णवों ने बताया, एक वार श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक है, परन्तु वह सनाढ्य ब्राह्मण है।" पद्मनाभदास ने लौकिक का त्याग तो कर दिया लेकिन व्यवहार पर ध्यान नहीं दिया। वैष्णवों ने कहा- "यह भला वैष्णव है, इसे बेटी दे दीजिए।" पद्मनाभदास ने उस वैष्णव के टीका (तिलक) कर दिया और विवाह की तिथि निश्चय करके अपने

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

घर आए। उनकी बड़ी बेटी का नाम तुलसा था। उसने जब वर का विवरण सुना तो कहा– ''वर तो सनाढ्य ब्राह्मण है और हम लोग कान्यकुब्ज ब्राह्मण है सो यह विवाह कैसे हो सकता है।'' पद्मनाभदास ने कहा– ''अब तो जो हो गया सो ही ठीक है।'' तुलसा ने कहा ''सगाई फेर दो।'' पद्मनाभदास ने कहा ''सगाई कैसे फेरी जावे ? लाओ एक छुरी लाओ, मेरा अँगूठा काटो (जिससे तिलक किया गया है)।'' तुलसा ने कहा– ''अँगूठा कैसे काटा जाएगा ?'' पद्मनाभदास ने कहा– ''फिर सगाई कैसे फेरी जावे ?'' पद्मनाभदास ने विवाह कर दिया। जाति के सभी देखते (झक मार कर) रह गए। वैष्णव के कहने का विश्वास करके सगाई नहीं लोटाई।

[प्रसङ्ग - ५]

अन्य एक क्षत्राणी पद्मनाभदास के घर प्रतिदिन आया करती थी। एक दिन तुलसा ने क्षत्राणी से कहा– ''तू नित्य क्यों आती है ?'' उस क्षत्राणी ने कहा– ''पद्मनाभदास बड़े भगवदीय हैं और महापुरुष हैं। मेरे सन्तति नहीं होती है। तुम पद्मनाभदास को मेरी ओर से विनती करो।'' एक दिन तुलसा ने पद्मनाभदास से क्षत्राणी की व्यथा का वर्णन किया और उसके मनोरथ सिद्धि हेतु विनती की। पद्मनाभदास ने तुलसा से कहा– ''जल लाओ।'' तुलसा ने जल लाकर आगे रख दिया। पद्मनाभदास ने जल लेकर, अँगूठे का चरणोदक करके, क्षत्राणी को चरणोदक दे दिया और कहा– ''जा तेरे पुत्र होगा, उसका नाम मथुरादास रखना।'' पीछे उसके पुत्र हुआ।

[प्रसङ्ग - ६]

अन्य एक समय की बात है, बड़े रामदास जी अपने सेव्य श्री ठाकुरजी को पद्मनाभदास के घर पधरा कर आप श्रीनाथजी की सेवा करने लगे। श्रीनाथजी के भीतरिया हो गए। पद्मनाभदास श्रीठाकुरजी की सेवा करने लगे। कितने ही दिन के पीछे मुगलों की फौज (सेना) आई, उसने गाँव को लूट लिया। अतः श्री ठाकुरजी को मुगल ले गया। पद्मनाभदास ने उस मुगल का सात दिन तक पीछा किया। जलपान भी नहीं किया। उस मुगल की पत्नी ने कहा– ''यह ब्राह्मण जल पान भी नहीं कर रहा है। इसको अन्न जल छोड़े सात दिन हो गए हैं। यह ब्राह्मण मर जाएगा। यदि तेरे माथे इसकी हत्या लग गई तो मैं तेरा साथ छोड़ दूँगी। नहीं तो इसका जो श्री ठाकुर जी (देवता) तेरे पास है वह इसे पुनः दे दो।'' तब उस मुगल ने पद्मनाभदास को श्री ठाकुरजी को पुनः लौटा दिया। श्री ठाकुरजी को लेकर पद्मनाभदास अपने घर आ गए। श्री ठाकुरजी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

को पञ्चामृत से स्नान कराया, अंगवस्त्र धारण करा कर शृङ्गार किया। रसोई करके भोग समर्पित किया। तत्पश्चात् समयानुसार भोग सराय कर अनोसर किया, फिर आप स्वयं ने भी महाप्रसाद लिया। जिस दिन से कन्नौज में श्री ठाकुर जी मुगल के हाथ पड़े, रामदास ने भी यह बात जान ली अतः उस दिन से बड़े रामदास ने भी महाप्रसाद नहीं लिया लेकिन श्रीनाथजी की सेवा सावधानी से करते रहे। यह बात रामदास ने घर बैठे ही जान ली थी। इस लिये रामदास ने भी सात दिन तक जलपान नहीं किया। यह जानकर पद्मनाभदास श्रीनाथजी के दर्शन करने तथा रामदास ने मिलने के लिए श्रीनाथजी के द्वार आए। श्रीनाथजी के दर्शन किए और रामदास से मिले। रामदास ने पद्मनाभदास से कहा "तुमने बहुत दुःख पाया हैं।" तब पद्मनाभदास ने कहा- "मैंने दुःख पाया, वह तो न्याय के अनुसार ठीक है लेकिन तुम तो सेवा मेरे माथे पधरा कर आए थे, तुमने सात दिन तक महाप्रसाद नहीं लिया, ऐसा क्यों हुआ ?" रामदास ने कहा- "तुम कहते हो, यह तो सत्य है, लेकिन मैंने भी बहुत दिन तक सेवा की थी, अतः इतना सम्बन्ध तो होना चाहिए। फिर कितने ही दिन तक वहाँ रहकर पद्मनाभदास श्रीनाथजी तथा रामदास से विदा होकर अपने घर आए और सेवा करने लग गए।"

[प्रसङ्ग - ७]

अन्य एक समय पद्मनाभदास अपने सेव्य श्री ठाकुर जी श्रीमथुरानाथ जी तथा अपने कुटुम्ब को लेकर अडेल आकर रहने लगे लेकिन वहाँ द्रव्य का बहुत संकोच था अतः श्री ठाकुरजी को छोला (चना) तलकर भोग समर्पण करते थे। पहिले दिन छोलाओं को अच्छी तरह बीन कर भिगो देते औरदूसरे दिन भलीभाँति तल कर परोसते। एक मुट्ठी भर कर कहते यह तो दाल है। फिर एक मुट्ठी भर कर कहते यह रोटी है। इस प्रकार जितने शाक नहीं होते, उतने शाकों का नाम ले लेकर एक एक मुट्ठी समर्पण करते। इस तरह प्रतिदिन करते रहे। श्री ठाकुर जी भी वही आरोगते थे। कुछ दिन बाद एक वैष्णव ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के आगे निवेदन किया- "महाराज, पद्मनाभदास श्री ठाकुर जी को इस प्रकार भोग समर्पित करते है।" एक दिन श्री आचार्य जी श्री महाप्रभु भोग समर्पण के समय आप स्वयं पद्मनाभदास के घर पधारे। जिस प्रकार रोजाना भोग समर्पण करते थे उसी प्रकार पद्मनाभदास ने भोग समर्पण किया। जब भोग समर्पित किया तो पद्मनाभदास ने कहा- "महाराज, यह खीर है, यह भात है, यह दाल है, यह शाक है, यह श्रीखण्ड है, यह रोटी है, यह बड़ा है।" इस

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

प्रकार सभी सामग्रियों का नाम लेकर छोलाओं की ढेरी बनाई। यह देखकर श्री आचार्य जी महाप्रभु का हृदय भर आया। वे बोले- "द्रव्य के संकोच के कारण ऐसा करते हो।" फिर श्री आचार्य जी महाप्रभु तो अपने घर पधारे और अक्का जी से कहा- "पद्मनाभदास के घर प्रतिदिन रसोई की सामग्री भेजते रहना।" दूसरे दिन श्री आचार्यजी महाप्रभु ने पद्मनाभदास के घर सीधा-सामग्री भेजी तो पद्मनाभदास ने तुलसा से कहा- "अब प्रभु हमें अपने समीप से दूर हटाना चाहते हैं।" इसके बाद दो चार दिन कासामान लेकर फिर पद्मनाभदास ने अपने सेव्य श्री ठाकुरजी श्री मथुरानाथ जी से कहा- "महाराज का मन हो तो श्री आचार्य जी महाप्रभु के पास आपको पधरा आऊँ, वहाँ सकल सामग्री सिद्ध हैं।" श्री मथुरानाथजी ने कहा- "मुझे तो तेरा किया ही अच्छा लगता है। मैं तेरे यहाँ ही बहुत प्रसन्न हूँ। तू कुछ भी संकोच मत कर।" तब तो पद्मनाभदास ने भाड़े की नाव मँगाई, उसमें श्री ठाकुर जी को पधराया और सब कुटुम्ब को नाव में बैठाकर आप श्री आचार्य जी महाप्रभु से विदा होने के लिए गए। सीधा-सामग्री जो दो-चार दिन की आई थी उसे भण्डारी को लौटा कर आप स्वयं श्री आचार्य जी महाप्रभु से विदा होकर, दर्शन करके, पुनः दण्डवत प्रणाम करके बोला- "महाराज हम तो चलते हैं।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पूछा- "श्री मथुरादास जी कहाँ है?" पद्मनाभदास ने कहा "श्री ठाकुरजी तो नाव में विराज रहे हैं। श्री ठाकुरजी को नाव में पधराकर मैं महाराज के दर्शन करने तथा विदा होने के लिए आया हूँ।" श्रीआचार्य जी महाप्रभु ने पद्मनाभदास को विदा किया। इसके पश्चात् भण्डारी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से आकर कहा- "महाराज, पद्मनाभदास के घर सीधा-सामग्री दो-चार दिन भेजी थी, उसे पद्मनाभदास लौटा गए हैं।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "हमने सीधा सामग्री भिजवाई थी, इसलिए पद्मनाभदास गया, अन्यथा नहीं जाता।" यह बात श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपने श्रीमुख से कही थी, यह बात पद्मनाभदास की वार्ता में श्री गोकुलनाथ जी "श्री सर्वोत्तम की टीका में लिखा है। पद्मनाभदास जैसा भक्त तो बिरला 'कोटिष्वपि दुर्लभा' (करोड़ों में से कोई एक) है। पद्मनाभदास का श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक ऐसे कृपापात्र भगवदीय है, इनकी वार्ता का पार नहीं है। पद्मनाभदास की ऐसी ऐसी कितनी ही वार्ताएँ है।"

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पद्मनाभदास की बेटी तुलसा की वार्ता

[वैष्णव - ५, प्रसङ्ग - १]

एक समय एक वैष्णव जो श्री आचार्य जी महाप्रभु का कृपापात्र सेवक था, तुलसा के घर आया। उसने श्री ठाकुर जी का दर्शन किया और राजभोग समर्पित किया। तुलसा ने उस वैष्णव को कहा- "उठो स्नान करके महाप्रसाद ग्रहण करो।" उस वैष्णव ने कहा- "मैं तो घर जाकर ही महाप्रसाद लूँगा और तब स्नान करूँगा।" यह सुनकर तुलसा चुप हो गई। इसके बाद वह वैष्णव उठकर अपने घर गया, तो तुलसा के मन में बहुत खेद हुआ कि एक वैष्णव इस घर से बिना महाप्रसाद लिये ही चला गया। पुनः मन में आया कि जाति व्यवहार के लिए सखड़ी का विचार किया होगा, सखड़ी नहीं लेनी होगी। अतः कोई बात नहीं, कल ध्यान करके महाप्रसाद लिवाऊँगी। इसके बाद मैदा छान कर सामग्री सिद्ध कराई। जब रात्रि हुई तो श्री मथुरानाथजी जो पद्मनाभदास के सेव्य ठाकुर ने स्वप्न में तुलसा को बताया "कल उस वैष्णव को सखड़ी महाप्रसाद लिवाना, वह कल अपने घर में महाप्रसाद नहीं लेगा। फिर उस वैष्णव को स्वप्न में निर्देशित किया "कल तुम तुलसा के यहाँ सखड़ी महाप्रसाद लेना।" इसके बाद प्रातः काल तुलसा ने स्नान किया, पूड़ी उतारी, श्रीठाकुरजी को जगाकर सेवा करने लगी। इतने में ही वह वैष्णव आया, दर्शन करके बैठ गया। वह वहाँ पर बैठा ही रहा। तुलसा भोग समर्पण करके बाहर आई और उस वैष्णव से कहा- "उठो स्नान करो और महाप्रसाद लो।" उस वैष्णव ने स्वीकृति दी। उस वैष्णव ने स्नान किया और तिलक मुद्राधारण कर नाम-स्मरण किया। इतने में ही राजभोग सराया गया। उस वैष्णव ने दर्शन किए। फिर तुलसा ने श्री ठाकुर जी को अनोसर करके तुलसा बाहर आ गई। उस वैष्णव के समक्ष बूरा-पूड़ी सामग्री परोस दी गई और कहा कि महाप्रसाद ग्रहण करें। उस वैष्णव ने कहा- "यह तो मैं नही लूँगा। मैं तो सखड़ी महाप्रसाद लूँगा।" तुलसा ने कहा- "आप कोई संकोच मत करो। यह जाति का व्यवहार है।" उस वैष्णव ने कहा- "यह तो सच है, पहले तो मेरे मन में यही विचार आया था, लेकिन अब तो आज्ञा हुई है।" फिर तो उस वैष्णव ने सखड़ी महाप्रसाद लिया तो दोनों परस्पर बड़े प्रसन्न हुए।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

[प्रसङ्ग - २]

पुनः एक दिन तुलसा के घर श्री गुसाँईजी पधारे। तुलसा ने भलीभाँती से सेवा की। इससे श्री गुसाँईजी बहुत प्रसन्न हुए। अन्य एक दिन श्री गुसाँईजी भोजन करके पौढ़े थे तब तुलसा ने भगवद्वार्ता की। अति प्रसन्नता में श्री गुसाँईजी ने कहा- ''पद्मनाभदास की सन्तति को ऐसा ही होना चाहिए।'' श्री गुसाँईजी ने तुलसा से पूछा- ''श्री ठाकुर जी सानुभावता जताते हैं।'' तुलसा ने कहा- ''महाराज, अब तो पेटभर भोजन तो करते है और नींद भर कर सोते हैं। श्री आचार्य जी महाप्रभु के ग्रन्थों का पाठ करते हैं।'' इस पर श्री गुसाँईजी बहुत प्रसन्न हुए। वह तुलसा ऐसी भगवदीय थी कि श्री ठाकुरजी उनकी आर्ति (दुःख) को सह नहीं सके। इसलिये श्री गुसाँईजी बहुत प्रसन्न रहते थे। इनकी वार्ता का उल्लेख कहाँ तक करें।

अथ पद्मनाभदास का बेटा, उसकी बहू पार्वती की वार्ता

[वैष्णव - ६, प्रसङ्ग - १]

वह पार्वती श्री ठाकुरजी की सेवा बहुत अच्छी तरह से मन लगाकर करती थी। पुरुषोत्तम महरा इन्हें भलीभाँति जानता था। जब कन्नौज जाता तो पार्वती के घर ठहरता था। कितने ही दिनों के बाद पार्वती के हाथ-पैर श्वेत हो गए। तबसे श्री ठाकुर जी की रसोईकरने एवं स्पर्श करने में बात-बात में ग्लानि होती थी। पार्वती ने पुरुषोत्तमदास महरा को पत्र लिखा जिसमें लिखा था कि वे (पुरुषोत्तम महरा) पार्वती की ओर से श्रीगुसाँई जी को विनय करें कि उसकी देह इस प्रकार की हो गई हैकि सेवा व पाक करने में बहुत ग्लानि होती है। अतः क्या किया जावे? पुरुषोत्तम महरा ने पार्वती का पत्र श्रीगुसाँईजी को पढ़कर सुना दिया। विनती करके भेंट केलिए मोहर (स्वर्ण मुद्रा) उनके आगे समर्पित कर दी। श्रीगुसाँईजी ने आज्ञा दी कि वे दो-चार दिन में इस विषय में कहेंगे। जब दो- चार दिन बीत गए तो श्रीगुसाँईजी ने आज्ञा दी कि पार्वती को पत्र लिखिए और उसे स्पष्ट लिख दें कि वह श्री ठाकुरजी की सेवा ठीक प्रकार से करे, मन में किसी भी बात की ग्लानि नहीं लाए। श्री ठाकुर जी स्वयं ही उसके रोग को दूर कर देंगे। पुरुषोत्तम महरा ने पार्वती को पत्र लिख दिया और श्री गुसाँईजी ने अपने श्रीमुख से जो आज्ञा की वह भी लिख दिया। वह पत्र जब पार्वती के पास पहुँचा तो बाँचकर श्रीगुसाँईजी की आज्ञा के अनुसार प्रसन्नता से सेवा करने लग गई। मन में कोई भी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

ग्लानि नहीं लाती थी। फिर तीन-चार माह में उसके हाथ-पैर स्वत: ठीक हो गए, तो पार्वती बहुत प्रसन्न हुई और प्रसन्नता से सेवा करने लग गई। पुन: श्री गुर्साईजी को पत्र लिखा और भेंट भेजी। पत्र में स्पष्ट लिखा कि महाराज के प्रताप से रोग ठीक हो गया है। पत्र बाँचकर श्री गुसाँई जी बहुत प्रसन्न हुए। वह पार्वती बड़ी कृपापात्र भगवदीय थी। प्रभु की आज्ञा प्रमाण से चलती थी। श्री गुसाँईजी इसके ऊपर सदा प्रसन्न रहते थे। यह वार्ता पद्मनाभदास के कुटुम्ब से सम्बन्धित है। इसलिए पद्मनाभदास बड़े भगवदीय हैं, इसलिए इनकी वार्ता का उल्लेख कहाँ तक किया जाए।

अथ पद्मनाभदास का नाती, पार्वती का बेटा रघुनाथ की वार्ता

[वैष्णव - ७, प्रसङ्ग - १]

वह रघुनाथदास बनारस में रहकर बहुत शास्त्र पढ़कर श्री गोकुल आया तो उसने श्रीगुसाँईजी को दण्डवत प्रणाम किया। श्रीगुसाँईजी बड़े होने के नाते से इनके उपर कृपा करते थे। इन्हें कथा श्रवण कराते थे। एक दिन परमानन्द सोनी ने इनसे पूछा- "रघुनाथदास, तुमने बहुत शास्त्र पढ़े हैं, तुम पण्डित हो अत: आज श्री गुसाँईजी ने जो कथा कही है, वह हमें कहो।" रघुनाथदास ने परमानन्द सोनी से कहा- "तुम तो सत्य ही पूछते हो, लेकिन मैं तो कुछ समझता ही नहीं हूँ।" परमानन्द सोनी ने यह बात श्रीगुसाँई जी के आगे कही- "महाराज, रघुनाथदास तो कुछ समझता ही नहीं है।" श्रीगुसाँईजी ने रघुनाथदास को दो-चार ग्रन्थ पढ़ाए और मार्ग की प्रणालिका बताई तो रघुनाथदास समझने लग गए और रघुनाथदास बहुत बड़ा पण्डित हुआ।

कितने ही दिनों के बाद अपने घर कन्नौज में आया और माता से कहा- "मैं न्यारा (पृथक्) रहूँगा और श्री ठाकुर जी की सेवा करूँगा।" माता ने कहा- "भले ही तू सेवा कर।" पीछे वह न्यारा हो गया। उसकी माता जल भर कर लाती थी। पार्वती पात्र माँजती। श्री ठाकुरजी की सेवा (नीकी) भलीभाँति से करती थी। परिचर्या सभी करती थी। जब राजभोग सरता तो अपने घर अकेली लीटी (बाटी) करके श्री ठाकुरजी को भोग समर्पित कर भोग सरा कर आप प्रसाद लेती। इस तरह करती। इस प्रकार करते हुए पाँच-सात दिन बीते तो अपने सेव्य श्रीठाकुरजी ने कहा- "अरी पार्वती, मेरा गला खर खराता है। अकेली लीटी खाने से ऐसा हुआ है, दाल तो बनाया कर।" तब पार्वती

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

ने कहा- ''महाराज तुम तो सालों से दाल भात अरोगते हो।'' श्री ठाकुर जी ने कहा- ''मैं तो तेरा किया आरोगता हूँ।'' फिर तो दाल भात आदि सभी मसालेदार (सालन) करने लग गई। इससे पार्वती बड़ी कृपा पात्र भगवदीय थी। यह वार्ता पद्मनाभदास के सब परिवार की हुई। वे पद्मनाभदास श्री आचार्य महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हैं। इनकी वार्ताएँ ऐसी ऐसी कितनी ही है सो कहाँ तक लिखें।

अथ अडेल में रहने वाली रजो क्षत्राणी की वार्ता

[वैष्णव - ८, प्रसङ्ग - १]

वह क्षत्राणी नित्य पकवान सामग्री तैयार कर श्री आचार्य जी महाप्रभु के लिए लाती थी। श्री आचार्य जी महाप्रभु उस सामग्री को अरोगते थे। यह उसका नित्य नियम था। एक दिन लक्ष्मण भट्टजी का श्राद्ध दिन आया। श्री आर्चाजी महाप्रभु ने ब्राह्मणों को भोजन के हेतु बुलाया था। वहाँ थोड़े से धृत की आवश्यकता थी। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने एक वैष्णव से कहा- ''जाओ, रजो क्षत्राणी के यहाँ से धृत ले आओ।'' उस वैष्णव ने रजो से जाकर कहा- ''रजो श्री आचार्यजी महाप्रभु ने धृत मंगाया है।'' रजो ने उस वैष्णव से पूछा - ''धृत किस लिए चाहिए ?'' उस वैष्णव ने कहा- ''आज लक्ष्मण भट्टजी का श्राद्ध दिन है। अतः ब्राह्मणों को भोजन के लिए बुलाया है। रसोई में थोड़े से धृत की आवश्यकता (वाञ्छा) है। इसलिए मंगाया है।'' रजो ने कहा- ''मेरे यहाँ तो धृत नहीं है।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने उस वैष्णव से कहा- ''तू पुनः जा और खीझ कर कहना कि श्री आचार्य जी महाप्रभु ने धृत मंगाया है।'' वह वैष्णव पुनः गया और कहा- ''श्री आचार्य जी महाप्रभु खीज रहे है, अतः थोड़ा सा धृत देओ।'' रजो ने तब भी धृत नहीं दिया। उस वैष्णव ने आकर कह दिया कि रजो धृत नहीं देती है। उस वैष्णव को पुनः भेजा और कहा- ''तू इस बार फिर जाओ और कहना कि श्री आचार्यजी महाप्रभु खीझ रहे है अतः धृत दे दो।'' लेकिन रजो ने फिर भी धृत नहीं दिया। उस वैष्णव ने आकर कह दिया कि रजो धृत नहीं देती है। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अन्यत्र से धृत माँगकर काम चलाया। जब रात्रि के समय रजो पकवान लेकर आई तो रजो को देखकर आचार्य जी महाप्रभु पीठ फेर कर बैठ गए। रजो ने कहा- ''महाराज मेरा अपराध क्या है ?'' श्री आचार्यजी महाप्रभु ने कहा- ''यदि तेरे यहाँ धृत नहीं था तो सामग्री कहाँ से करके लाई है।'' रजो ने कहा- ''मैं कोई लक्ष्मण भट्ट की सेविका तो हूँ नहीं, मेरे धृत नहीं था, इसलिए मैंने नहीं दिया। लेकिन आपके यहाँ तो धृत था, आपने ही क्यों नहीं दिया ?'' श्री आचार्य जीमहाप्रभु ने कहा- ''मेरे यहाँ तो श्री ठाकुर जी का धृत था, मैं कैसे देता ?'' रजो ने कहा- ''मैं

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

भी श्री ठाकुरजी के धृत को क्योंकर देती ?'' इस पर श्री आचार्य जी महाप्रभु कुछ नहीं बोले। तब रजो ने सामग्री आगे रखी और कहा- ''राज, आरोगो।'' श्री आचार्य जी ने कहा- ''आज श्राद्ध दिन है अत: दूसरी बार प्रसाद नहीं लेना है।'' रजो ने कहा- ''महाराज तुम्हारे घर का हो सो ग्रहण मत करो, यह तो आपको ले लेना चाहिए।'' तब रजो के आग्रह से श्री आचार्य जी महाप्रभु ने प्रसाद आरोग लिया। रजो श्री आचार्य जी महाप्रभु की ऐसी कृपापात्र भगवदीय थी अत: रजो की वार्ता भी कहाँ तक लिखी जाएँ?

अथ पुरुषोत्तम क्षत्री-बनारस में रहते-उनकी वार्ता

[वैष्णव - ९, प्रसङ्ग - १]

सेठ पुरुषोत्तमदास को श्री आचार्य जी महाप्रभु की आज्ञा थी कि जो कोई भी व्यक्ति नाम लेने आवे। उसे वे नाम-दान कर दिया करें। इसलिए श्री पुरुषोत्तमदास नाम-दान करते थे और अपने घर में श्री मदन मोहन जी की सेवा करते थे। वे कभी भी श्री विश्वेश्वर नाथ महादेव के दर्शन करने के लिए नहीं जाते थे। इस प्रकार बहुत दिन व्यतीत हो गए। एक दिन श्री विश्वेश्वर नाथ महादेव ने सेठ पुरुषोत्तम से स्वप्न में कहा- ''सेठजी, तुम हमसे गाँव का नाता (व्यवहार) तो रखो, हमको प्रसाद तो दिया करो।'' प्रात:काल उठकर सेठ पुरुषोत्तमदास सेवा से बाहर आए और वस्त्र धारण कर दो प्रसादी बीड़ा (पान) लेकर तथा डबरा (पात्र) में प्रसाद लेकर विश्वेश्वर महादेव के दर्शनार्थ चल दिए। गाँव के लोगों को आश्चर्य हुआ- सेठ पुरुषोत्तमदास तो कभी दर्शन के लिए नहीं आते थे, आज क्यों आए हैं? सेठ पुरुषोत्तमदास देवालय में गए और विश्वेश्वर महादेव के आगे दो बीड़ा और प्रसाद रखकर श्री कृष्ण-स्मरण (जय श्री कृष्ण) कह कर चल दिए, वहाँ बड़े-बड़े पण्डितों ने यह देखकर सेठ पुरुषोत्तमदास से कहा- सेठ पुरुषोत्तमदास ने दण्डवत् प्रणाम कुछ भी नहीं किया, श्रीकृष्ण स्मरण कह कर चल दिये। यह बात उचित नहीं है। सेठ पुरुषोत्तमदास ने कहा- ''तुम लोग महादेव जी से पूछ लेना, तुम से महादेव जी स्वयं ही कह देंगे।'' उन ब्राह्मणों में से एक ब्राह्मण महादेवजी का बड़ा कृपापात्र था, उससे महादेव जी ने स्वप्न में कहा- ''हमने सेठ पुरुषोत्तमदास से प्रसाद की याचना की थी, इसलिए वे हमें प्रसाद देने आए थे। हमारा और इनका व्यवहार जयश्रीकृष्ण का है इसलिए इनसे तुम लोग कुछ भी मत कहो।'' इसके बाद तो पुरुषोत्तमदास बड़े-बड़े उत्सवों का प्रसाद ले जाया करते थे। एक दिन महादेव जी ने कालभैरव से कहा- ''सेठ पुरुषोत्तमदास वैष्णवों के घर से देर-

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

सवेर आते हैं अतः इनके घर का चौकी पहरा देते रहा करो।'' एक दिन पुरुषोत्तमदास वैष्णवों के घर विलम्ब से आए तो उन्होंने काल भैरव को घर के द्वार पर खड़ा हुआ देखा। सेठ पुरुषोत्तमदास ने उससे पूछा- ''तू कौन है?'' काल भैरव ने कहा- ''मैं काल भैरव हूँ, मुझे महादेवजी ने तुम्हारे घर का चौकी पहरा देने का निर्देश दिया है।'' सेठ पुरुषोत्तमदास खिड़की देकर भीतर चले गए।

[प्रसङ्ग - २]

अन्य एक दक्षिण देश का ब्राह्मण शैव था। वह महादेव जी का कृपापात्र था। उस ब्राह्मण को महादेवजी के साक्षात् दर्शन होते थे। वह ब्राह्मण प्रतिदिन महादेव जी के दर्शन करके ही जलपान करता था। एक बार जन्माष्टमी के उत्सव पर विश्वेश्वर नाथ महादेव जी सेठ पुरुषोत्तमदास के घर श्री ठाकुरजी के दर्शन करने के लिए गए। अतः वह ब्राह्मण महादेव जी के दर्शन नहीं कर पाया। नवमी के दिन महादेव जी सेठ पुरुषोत्तमदास के घर से विदा होकर आए तो ब्राह्मण को उनके दर्शन प्राप्त हो सके। उस ब्राह्मण ने महादेव जी से पूछा- ''हम कल से आज दौपहर तक आपके दर्शन नहीं कर सके, इसका क्या कारण है?'' महादेव जी ने कहा- ''हम सेठ पुरुषोत्तमदास के घर जन्माष्टमी का उत्सव देखने गए थे। अभी-अभी सेठ पुरुषोत्तमदास के घर से विदा होकर चले आ रहे हैं।'' उस ब्राह्मण ने कहा- ''सेठ पुरुषोत्तमदास कौन है, जिसके घर आप स्वयं उत्सव देखने जाते है?'' महादेव जी ने कहा- ''सेठ पुरुषोत्तमदास बड़े भगवद्भक्त हैं।'' उस ब्राह्मण ने कहा- ''मुझे भी भगवद्भक्त बना दीजिए।'' महादेवजी ने कहा- ''सेठ पुरुषोत्तमदास के पास जाकर नाम ले आओ।'' ब्राह्मण ने कहा- ''मुझे तो आप नाम देदो।'' महादेवजी ने कहा- ''मैं तुझे नाम दे सकता हूँ, लेकिन मेरा दिया हुआ नाम तुम्हें फलेगा नहीं। अतः तुम उन्हीं से नाम ग्रहण करो। वे तुम्हें नाम दान कर देंगे।'' वह ब्राह्मण सेठ पुरुषोत्तमदास के यहाँ नाम ग्रहण करने गया। सेठजी के पास भीतर खबर कराई गई कि एक ब्राह्मण आया है। तब सेठ पुरुषोत्तम ने कहा- ''सिर खाली करने के लिए आया होगा अतः उसे बैठाया जाए।'' थोड़ी देर बाद सेठ पुरुषोत्तमदास सेवा से बाहर आए तो उस ब्राह्मण ने दण्डवत् प्रणाम किया। सेठ पुरुषोत्तम ने कहा- ''ऐसा अनुचित क्यों करते हो? हम तो क्षत्रिय हैं और तुम ब्राह्मण हो, ऐसा कैसे घटेगा?'' उस ब्राह्मण ने कहा- ''हमें आप नाम दान करें।'' सेठ पुरुषोत्तमदास ने कहा- ''मैं आपको नाम नहीं दूँगा।'' उस ब्राह्मण ने पुनः आग्रह किया किन्तु सेठ पुरुषोत्तमदास ने नाम नहीं दिया। महादेव जी ने कहा- ''तू फिर जा और

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

हमारा नाम लेना। उनसे कहना मुझे महादेवजी ने नाम लेने आपके पास भेजा है।'' उस ब्राह्मण ने पुनः आकर निवेदन किया और महादेवजी एतदर्थ भेजा है ऐसा कहा तो सेठ पुरुषोत्तमदास ने नाम दिया और नाम सुनाने के बाद उन्होंने ब्राह्मण को हाथ जोड़कर श्री कृष्ण स्मरण कहा। ब्राह्मण ने कहा- ''अब आप मुझे प्रणाम क्यों करते हो।'' सेठ पुरुषोत्तमदास ने कहा- ''अब तुम भगवद्भक्त हो गए। मेरे लिए तुम वन्दनीय हों। तुम्हारे और हमारे वन्दनीय श्री आचार्य जी महाप्रभु है। मैं तो श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से ही नाम देता हूँ।'' इसके बाद वह ब्राह्मण श्री आचार्य जी महापभु के पास अडेल आया तो श्री आचार्य जी महाप्रभु के पास नाम समर्पण कराया। कितने ही दिनों तक अडेल में रहकर श्री आचार्य जी महाप्रभु के ग्रन्थों का अध्ययन किया।

[प्रसङ्ग - ३]

अन्य एक समय सेठ पुरुषोत्तमदास बैठे-बैठे मन्दिर-वस्त्र कर रहे थे इतने में ही उनका बेटा गोपालदास श्री ठाकुरजी का शयन भोग सराने के लिए स्नान करके मन्दिर में प्रवेश किया तो उसने सेठजी को मन्दिर में वस्त्र करते देखा। गोपालदास के मन में विचार आया- ''अब तो सेठजी वृद्ध हो गए हैं अतः अब मुझे ही तत्परता से सेवा करनी चाहिए। उसके मन की यह बात सेठ पुरुषोत्तमदास ने जान ली और कहा- ''बेटा, सामने आओ।'' उसने सामने से जाकर देखा तो उसे सेठजी बीस-पच्चीस वर्ष की उम्र के प्रतीत हुए। पुरुषोत्तम ने कहा- ''बेटा, भगवदीय तो सदा तरुण ही रहते है। अतः उनके किए सेवा क्रम में ऐसा चिन्तन कभी भी नहीं करना चाहिए।''

[प्रसङ्ग - ४]

पुनः एक समय सेठपुरुषोत्तमदास झारखण्ड में मंदार मधुसूदन ठाकुर जी के मन्दिर में थे। यह मन्दिर मन्दार पर्वत के ऊपर है। उस पर्वत का भी महत्व है कि उस पर्वत पर से गिर जाने पर चोट नहीं लगती है। गिरते समय अपने समस्त पापों का स्मरण कर ले और गिरने से देह छूट जाए तो देह छूटते समय कोई कामना हो वह दूसरे जन्म में पूर्ण हो। ऐसे पुनीत स्थल पर एक बार श्री आचार्य जी महाप्रभु पधारे। उनके साथ सेठ पुरुषोत्तमदास और आचार्य जी महाप्रभु का सेवक एक ब्राह्मण भी था। ये दोनों मन्दार मधुसूदन जी के दर्शनार्थ पर्वत के ऊपर चढ़ गए। वहाँ उन्होंने मन्दार मधुसूदन जी के दर्शन किए। रात्रि हो जाने पर वे दोनों वहीं पर सो गए। देर रात में वहाँ एक ब्राह्मण आया जो सिद्ध था। उसने सेठ पुरुषोत्तमदास के साथी ब्राह्मण से पूछा- ''तुम कौन हो?'' वह ब्राह्मण बोला ''हम तो

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक वैष्णव हैं।'' उस सिद्ध ने कहा- ''मेरे पास एक मणि है यदि तुम लेना चाहो तो वह मणि तुम्हें दे सकता हूँ।'' वैष्णव ने पूछा- ''यह मणि किस काम आती है।'' सिद्ध ने कहा- ''यह मणि इच्छित (वाञ्छानुसार) पदार्थ देती है।'' वैष्णव ब्राह्मण ने कहा- ''मैं तो विरक्त हूँ, मणि लेकर क्या करूँगा। लेकिन साथ एक क्षत्रिय है, वह गृहस्थ है, इस समय सो रहा है, यदि उसे मणि देना चाहो तो उसे जगाऊँ।'' सिद्ध ब्राह्मण ने कहा- ''जगाओ।'' तब वैष्णव ब्राह्मण ने सेठ पुरुषोत्तमदास को जगाया और कहा- ''यह ब्राह्मण मणि दे रहा है, ले लो।'' सेठ पुरुषोत्तम दास ने कहा- ''यह मणि किस काम आती है?'' सिद्ध ब्राह्मण ने उसे मणि का प्रभाव बताया। सेठ पुरुषोत्तम दास ने कहा- ''यह मणि हमारे काम की नहीं है अतः हम तो यह मणि नहीं लेंगे।'' सिद्ध ब्राह्मण पुनः वैष्णव ब्राह्मण के पास गया। वैष्णव ब्राह्मण ने सेठ पुरुषोत्तम से कहा- ''तुम तो गृहस्थ हो, बहु कुटुम्बी हो तथा तुम्हारे माथे पर सेवा भार भी है। तुम यह मणि क्यों नहीं लेते हो? तुम्हारा मणि लेना उचित है।'' सेठ पुरुषोत्तमदास ने कहा- ''अरे बावले ब्राह्मण, मैं श्री ठाकुरजी और श्री आचार्यजी महाप्रभु का आश्रय छोड़कर मणि का आश्रय करुँ? तूने ही इस मणि को क्यों नहीं ले लिया?'' उस ब्राह्मण ने कहा- ''मैं तो विरक्त हूँ। मैं मणि लेकर क्या करूँगा। मुझे तो जगदीश कहीं न कहीं से सेर चून देगा ही। जगदीश के किसी वस्तु की कमीं नहीं है।'' इस पर सेठ पुरुषोत्तमदास ने उस वैष्णव से कहा- ''यदि तुझे जगदीश सेर (चून) आटा देगा तो क्या मुझे जगदीश दस सेर चून नहीं देगा। जगदीश के यहाँ किसी बात की न्यूनता नहीं है।'' इस प्रकार कहते हुए दोनों ने उस मणि को नहीं लिया। सेठ पुरुषोत्तमदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय हैं।

[प्रसङ्ग - ५]

पुनः एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु सेठ पुरुषोत्तमदास के घर पधारे। उस समय दामोदरदास हरसानी भी श्री आचार्य जी महाप्रभु के साथ थे। श्री आचार्यजी महाप्रभु ने सेठ पुरुषोत्तमदास के सेव्य श्री ठाकुरजी श्री मदन मोहन जी को पञ्चामृत से स्नान कराया। आप स्वयं ने ही पाक क्रिया का सम्पादन किया। श्री ठाकुरजी को भोग समर्पित किया। भोग सराया और श्री आचार्यजी महाप्रभु ने भोजन किया। दामोदर हरसानी ने श्री आचार्यजी महाप्रभु से पूछा- ''राज, यह क्या?'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- ''यह (सेठ पुरुषोत्तमदास) मेरी आज्ञा से ही नाम देता है, तथापि मुझे इसकी इतनी मर्यादा तो करनी ही चाहिए।'' सेठ पुरुषोत्तमदास श्री आचार्यजी महाप्रभु के ऐसे

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

कृपापात्र भगवदीय हैं। इनकी वार्ता का कोई पार नहीं है अत: इनके बारें में कहाँ तक लिखें।

पुरुषोत्तमदास की बेटी रुक्मणि की वार्ता

[वैष्णव - १०, प्रसङ्ग - १]

एक समय श्री गुसाँई जी काशी में पधारे थे। वहाँ सूर्य ग्रहण हुआ। श्री गुसाँईजी मणिकर्णिका घाट पर स्नान करने के लिए पधारे। उस समय रुक्मणि भी मदन मोहनजी को स्नान कराकर स्वयं भी मणिकर्णिका पर स्नान के लिए गई। क्योंकि उसे ज्ञात हुआ था कि श्री गुसाँईजी मणिकर्णिका घाट पर पधारें हैं। श्री गुसाँई जी से एक वैष्णव ने कहा- ''रुक्मणि, आगे आओ।'' उसे अपने पास बुला लिया। श्री गुसाँईजी ने पूछा ''तू कितने दिनों के बाद गंगा स्नान करने आई है ?'' रुक्मणि ने कहा- ''महाराज चौबीस वर्ष पीछे आई हूँ।'' यह सुनकर श्री गुसाँईजी का हृदय भर आया। उन्होंने कहा- ''यह ऐसी भगवदीय है, इसे एक क्षण का भी गंगा स्नान के लिए भी अवकाश नहीं है।'' श्री गुसाँईजी बहुत प्रसन्न हुए। रुक्मणि को देखकर श्री गुसाँई जी ने कहा- ''इसके ऋण से ठाकुरजी कैसे उऋण होंगे।''

[प्रसङ्ग-२]

पुन: क्षत्रिय लोग कार्तिक मास में गंगास्नान करते तो रुक्मणि ने सेठ पुरुषोत्तमदास से कहा- ''यदि तुम आज्ञा करो तो, मैं गंगा स्नान कर आऊँ।'' सेठ पुरुषोत्तमदास ने कहा- ''तुम गंगा स्नान करो और तुम्हें जो चाहिए वह भी लो।'' रुक्मणि ने कहा- ''खाँड और धृत दिला दिया। तब तो रुक्मणि प्रहर भर रात्रि के शेष रहते उठ बैठती और (नौतन) नूतन सिद्ध सामग्री करके श्री ठाकुर जी को आरोगाती और प्रसाद वैष्णवों को लिवाती (खिलाती) थी। इस तरह करते रहने पर एक दिन सेठ पुरुषोत्तमदास ने रुक्मणि से कहा- ''तू गंगा स्नान करने कब जाती है ? हमने तो तुम्हें कभी गंगा स्नान हेतु जाते हुए नहीं देखा। तू कार्तिक स्नान कब करती है ?'' रुक्मणि ने कहा- ''मुझे स्नान से क्या काम है ? मैं तो इस तरह से करती हूँ।'' यह सुनकर सेठ पुरुषोत्तमदास बहुत प्रसन्न हुए। श्री गुसाँईजी स्वयं अपने श्रीमुख से इसकी प्रशंसा करते थे। रुक्मणि ऐसी कृपापात्र भगवदीय है।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

[प्रसङ्ग-३]

पुनः कितने ही दिनों के बाद रुक्मणि की देह अशक्त हुई। उसने विचार किया कि अब यह देह छूट जाए तो अच्छा रहे। यदि देह रहते श्री ठाकुर जी की सेवा नहीं हो पाए तो देह किस काम की है। कितने ही दिनों के पीछे रुक्मणि की देह छूट गई। एक वैष्णव ने श्री गुसाँईजी से कहा– "महाराज, रुक्मणि ने गंगा प्राप्त कर ली है।" श्री गुसाँईजी ने अपने श्री मुख से कहा– "यों मत कहो कि रुक्मणि ने गंगा पाई अपितु यों कहो कि गंगा ने रुक्मणि को पा लिया है।" वह रुक्मणि ऐसी भगवदीय श्री आचार्य जी महप्रभु की कृपापात्र थी, उसकी कथा अनिर्वचनीय है, उसके बारे में कहाँ तक लिखा जाए?

अथ पुरुषोत्तमदास का बेटा गोपालदास की वार्ता

[वैष्णव-११, प्रसङ्ग-१]

गोपालदास से श्री मदनमोहन जी का सानुभाव था, जो चाहते थे माँग लेते थे। इस प्रकार उस पर कृपा करते ही रहते थे। गोपाल दास कीर्तन भी बहुत करते थे। जब गोपालदास की देह अशक्त हो गई तो भगवन्नाम का उच्चारण करते। उनके नामोच्चारण के साथ ही मदन मोहन जी हुँकारा देते थे। ऐसी कृपा किया करते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु के ग्रन्थ सुबोधिनी जी श्री भागवत निबन्ध और रहस्य ग्रन्थों का पाठ भी करते थे इस तरह भगवल्लीला में मग्न रहकर सदैव लीला का विचार करते रहते थे। इस प्रकार समस्त समय व्यतीत किया। जब गोपालदास की देह छूटी तो श्री गुसाँईजी ने सुनकर स्वयं अपने श्रीमुख से गोपालदास की सराहना की। वे गोपालदास ऐसे भगवदीय थे। सब वार्ताएँ सेठ पुरुषोत्तमदास के परिवार की हुई। इनकी वार्ताओं का कोई पार नहीं है। कहाँ तक लिखें?

अथ रामदास सारस्वत ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव-१२, प्रसङ्ग-१]

वे रामदास श्री ठाकुरजी की सेवा भलीभाँति से करते थे। अपरस (अस्पर्श) में ही जल भरते और अपरस में ही बीड़ा रखते थे। रामदास के पास द्रव्य बहुत था, वह भी कितने ही दिनों के बाद खर्च हो गया। थोड़ा सा ही द्रव्य शेष रह गया तो उन्होंने मन में विचार किया कि कुछ आमदनी हो तो अच्छा रहे अतः उसने

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

वह द्रव्य ताँतीन (जुलाहों) को ब्याज पर उधार दिया। ब्याज बहुत आने लगा। लोभ के कारण रामदास ने ताँतियों से व्यवहार किया था। (पूर्व देश में फटे वस्त्रों को बुनने वालों को ताँती कहते है।) रामदास के सेव्य श्री ठाकुर जी श्री नवनीत प्रिय जी ने एक दिन रामदास से कहा- ''रामदास, तू तो हमें ताँतियों पर आश्रित रखता है।'' रामदास यह बात सुनकर चौंक पड़े। वे तत्काल ही ताँतियों के पास गए और बोले- ''हमारा द्रव्य लौटा दो।'' ताँतियों ने रामदास से पूछा ''क्या कारण है कि आप द्रव्य वापिस माँगते हो।'' रामदास ने कहा- ''हम द्रव्य को इकट्ठा कर रहे हैं।'' कुछ दिनों बाद ताँतियों ने द्रव्य लौटा दिया। द्रव्य लेकर घर में रख लिया और पूर्ववत् सेवा करने लग गए। जब सारा द्रव्य खर्च (व्यतीत) हो गया तो बनियो से उधार करने लग गए। जब उस बनिया की दुकान पर ऋण अधिक हो गया तो अन्य बनिया से उधार लेने लग गए किन्तु उस बनिया की दुकान के आगे से आना-जाना बन्द कर दिया। एक दिन उस बनिया ने रामदास से कहा कि तुमने हमारी दुकान के आगे से निकलना भी बन्द कर दिया और उधार लेना भी बन्द कर दिया है। इसलिए अब हमारा हिसाब चुकता कर दो। बनिया ने कड़ा तकाजा किया। श्री ठाकुरजी रामदास का रूप धारण करके बनिया की दुकान पर गए और अपने श्रीमुख से कहा- ''लाओ तुम्हारा लेखा, तुम्हारा सारा लेखा चुका दें।'' बनिया ने बही निकाली। हिसाब लगाया। उसका जितना द्रव्य बनता था उसे चुकाकर एक सौ रुपया अधिक देकर श्री ठाकुरजी ने अपने हाथ से बही में लिख दिए। यह बात रामदास को नहीं बताई। एक दिन रामदास को बुलाने के लिए वैष्णव आए। उन वैष्णवों के पीछे-पीछे रामदास भी चल दिए। जब उस बनिया की दुकान आने को हुई तो रामदास कुछ आनाकानी देकर बनिया की दूकान के आगे से निकले। बनिया ने आवाज लगाकर कहा- ''रामदास जी तुमने हमसे उधार बन्द कर दिया है, यह तो हमारा अभाग्य है, लेकिन आपका जो अधिक द्रव्य हम पर शेष है, उसे तो वापस ले जाओ।'' रामदास ने कहा- ''मैं अभी लौटकर आता हूँ।'' रामदास ने मन में विचार किया ''मैंने तो इसे कुछ दिया ही नहीं है, और यह कहता है कि अधिक द्रव्य शेष है, उसे उठा लो। यह क्या बात है ? हो सकता है, यह श्री ठाकुर जी की ओर से कुछ हुआ हो।'' इसके बाद रामदास वैष्णव के घर से, वापिस लौटकर उस बनिया की दुकान पर गए और लेखा मँगवाया। उस बनिया ने कहा- ''लेखा में

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

क्या देखोगे?'' तब उस बनिया ने बही दिखाई। उस बही में रामदास ने श्री ठाकुरजी के हस्ताक्षर देखें तो चुप हो गए। घर आकर रामदास ने अपनी स्त्री से कहा ''मैं अब घर मैं नहीं रहूँगा, नौकरी करूँगा।'' उन्होंने सिपाहगरी करने का विचार किया। एक घोड़ा मोल खरीदा। हथियार बाँधने लग गए। जल भरना और बीड़ा अपरस में लाना बन्द हो गया। बिना अपरस ही जल और बीड़ा की सेवा होने लगी। एक दिन रामदास अडेल आए तो हथियार बाँधे ही श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन किए व दण्डवत् प्रणाम किया। श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन किए व दण्डवत प्रणाम किया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपने श्रीमुख से ''धन्य-धन्य'' कहकर बोले - ''रामदास तू धन्य है।'' समीप में बैठे हुए वैष्णवों ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा ''आप इसे धन्य क्यों कहते है ? अब तो यह अपरस में भी नहीं रहता है सिपाहियों में नौकरी करता है। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा कि यह धन्य इसलिए है कि यह श्री ठाकुरजी से श्रम नहीं कराता है। इसके समान कोई धैर्यवान नहीं है।'' उस समय श्री आचार्य जी महाप्रभु गंगा स्नान को पधारे, उस मार्ग में एक गड्ढा देखा। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- ''यह गड्ढा अभी भी भरा नहीं है।'' इतना सुनकर सभी वैष्णव गड्ढे को भरने में लग गए। बागा पहने ही (वेश धारण किए ही) रामदास भी एक टोकरा लेकर गड्ढा भरने लग गया। श्री आचार्य जी महाप्रभु गंगा स्नान करके वापिस पधारे तो गड्ढा भर दिया गया, वहाँ रामदास को देखकर श्री आचार्यजी महाप्रभु बहुत प्रसन्न हुए।

[प्रसङ्ग-२]

रामदास के कोई सन्तान नहीं थी, उनकी स्त्री ने रामदास से कहा- ''तुम दूसरा विवाह कर लो, तुम्हारे बालक होगा।'' रामदास ने कहा- ''हमें तो बालक की कोई इच्छा नहीं है।'' उनकी स्त्री ने कहा- ''मुझे तो बालक की इच्छा है।'' रामदास ने कहा- ''यदि तुझे बालक की इच्छा है तो हमारे नवनीत प्रियजी की बाल भाव से सेवा करो। जैसे बालक को खिलाना, पिलाना, खेल रचाना, उससे प्रेम करना वैसे ही तुम श्री नवनीत प्रियजी को लाड़ करो। तुम्हारे ही बालक हो जाएगा। तब तो रामदास की पत्नी ने श्री नवनीत प्रियजी की बालभाव से सेवा करने लगी। उन्होंने बड़ी आतुरता से सेवा की। सेवा के प्रभाव से रामदास की पत्नी के ही बालक हो गया। वे रामदास ऐसे श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

आचार्य जी महाप्रभ के कृपापात्र भगवदीय हैं। अतः इनकी वार्ता का पार नहीं है। इनकी वार्ताओं का उल्लेख कहाँ तक किया जाएँ।''

अथ गदाधर सारस्वत ब्राह्मण-कण्डा में रहने वाले की वार्ता

[वैष्णव-१३, प्रसङ्ग-१]

गदाधर के माथे पर श्री मदनमोहन जी की सेवा थी श्री ठाकुरजी बड़े गौर वर्ण के थे। नित्य प्रति जैसा कुछ यजमान के यहाँ से आता था, वैसा ही वे श्री ठाकुरजी को समर्पण कर देते थे। एक दिन यजमान के यहाँ से कुछ नहीं आया तो उसने जल छानकर ही समर्पण कर दिया। मन में खेद बहुत हुआ। हृदय में अग्नि सी उठने लगी, इस प्रकार करते हुए रात्रि हो गई, एक यजमान द्वार पर आया, पुकार कर किवाड़ खोलने को कहा- तो गदाधर ने किवाड़ खोले। उस यजमान ने एक बागा, चार रुपया तथा कुछ सामग्री गदाधर दास को दी और कहा कि मेरे पिता का श्राद्ध दिन था अतः यह उसकी दक्षिणा लो। गदाधर दास ने सभी सामान ले लिया। बागा (वस्त्र) और सामग्री घर मे रखकर आप बाजार में एक हलवाई की दुकान पर गए। उससे पूछा- ''कौनसी मिठाई अच्छी और ताजा बनाई है ?'' हलवाई ने कहा- ''मिठाई में जलेबी अभी-अभी तैयार की है, अभी तो इनमें से किसी को बेची भी नहीं है ?'' गदाधर दास ने सारी जलेबी तुला कर, मूल्य चुकाकर घर आ गए। इसके बाद गदाधर ने स्नान किया, श्री ठाकुरजी को भोग समर्पित किया। समयानुसार भोग सराकर अनोसर किया। फिर वैष्णवों को बुलाकर महाप्रसाद सभी वैष्णवों को बाँट दिया और आप स्वयं भूखे ही सो गए। दूसरे दिन प्रातः काल उठकर सीधा सामग्री लाए। स्नान करके रसोई तैयार की। श्री ठाकुरजी की सेवा शृंगार कर भोग समर्पण किया। भोग सराकर पुनः वैष्णवों को बुलाया। वैष्णव जब प्रसाद लेने आए तो उन्होंने कहा- ''रात्रि को महाप्रसाद लिया था, बड़ा स्वादिष्ट था। किस उत्सव पर यह भोग समर्पित किया था ?'' वैष्णवों केपूछने पर गदाधर ने सारी बात स्पष्ट कर दी। वैष्णव बहुत प्रसन्न हुए और कहा- ''गदाधर ने सत्य कहा है।''

[प्रसङ्ग-२]

पुनः एक दिन गदाधर दास ने सारे वैष्णवों को महाप्रसाद लेने के लिए बुलाया। लेकिन शाक-सालन कुछ भी नहीं था। गदाधर दास ने कहा- ''ऐसा कोई वैष्णव है जो शाक सालन ले आए ?'' उन वैष्णवों में से एक वैष्णव ने कहा- ''मैं

CC-0. In Public Domain. Digitized by Muthulakshmi Research Academy

ले आऊँगा।'' वह वैष्णव वेणीदास का भाई माधोदास था जो बड़ा विषयी था, उसने वैश्या अपने घर में रखी हुई थी। गदाधरदास ने कहा- ''भले ही ले आओ।'' माधोदास गया और बथुआ की भाजी ले आया और उसे रसाई में दे दिया। इसके बाद रसोई सिद्ध हुई। श्री ठाकुरजी को भोग समर्पित किया, पीछे भोग सराकर अनोसर करने के बाद वैष्णवों को भोजन करने हेतु बैठाया। भाजी अत्यन्त स्वादिष्ट बनी थी। गदाधर के आशीर्वाद से माधोदास उत्तम वैष्णव हो गया। गदाधरदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे। इनकी वार्ता का कोई पार नहीं है, कहाँ तक लिखें?

अथ वेणीदास माधोदास दोनों भाइयों की वार्ता

[वैष्णव-१४, प्रसङ्ग-१]

बड़ा भाई वेणीदास और छोटा भाई माधोदास। यही माधोदास गदाधरदास के घर बथुआ की भाजी लेकर आया था। यह माधव दास बहुत विषयी था। उसने अपने घर में वैश्या रख ली थी अतः सभी वैष्णव उस माधोदास की निन्दा करते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने भी सुना कि माधोदास बड़ा विषयी है, घर में वैश्या रखी है। एक दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु ने माधोदास से पूछा- ''क्यों रे माधोदास, तू ने घर में वैश्या रखी है?'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु से माधोदास ने कहा- ''महाराज, मेरा मन आसक्त हुआ है, इसलिए रखी है।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु चुप हो गए। आपने तीन बार माधोदास से पूछा तो तीनों बार माधोदास ने उसी प्रकार उत्तर दिया कि ''महाराज, मेरा मन आसक्त हुआ है। इसलिए वेश्या रखी है।'' तब वैष्णवों ने श्री आचार्य जी महाप्रभु ने उन वैष्णवों से कहा- ''उसका मन उस वैश्या में आसक्त हुआ है अतः श्री ठाकुरजी को उसका मन फेरते हुए कुछ देर लगेगी।'' गदाधर ने उसे आशीर्वाद दिया है इसलिए उसको दृढ़ भक्ति होगी। इस माधोदास की बुद्धि श्री ठाकुरजी के अनुग्रह से कुछ दिन बाद फिर गई तो उसने वैश्या को दूर कर दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से वह माधोदास उत्तम वैष्णव हो गया।

[प्रसङ्ग-२]

पुनः कुछ दिन बाद एक सुन्दर मोतियों की माला बिक्री हेतु आई, उसे देखकर माधोदास ने अपने बड़े भाई वेणीदास से कहा- ''यह माला तो श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

ठाकुरजी के कण्ठ के योग्य (लायक) है।'' बड़े भाई वेणीदास से कहा- ''इस माला की ही क्या बात है, हमारे पास जो कुछ भी है, सब श्री नवनीत प्रियजी का है।'' इस प्रकार कह कर उसने बात टाल दी। माधोदास ने कहा- ''अपने घर में जो है, वह सब श्री ठाकुरजी का है तो माला क्यों नहीं ले लेते हो।'' वेणीदास ने कहा- ''हम लोग गृहस्थ हैं, हमें विवाह आदि सभी कार्य करने है, ऐसा होगा तो कैसे चलेगा?'' छोटे भाई माधोदास ने कहा- ''मैं तो न्यारा (अलग) होऊंगा।'' यह करकर वह न्यारा हो गया। सभी वस्तुएँ बाँट ली। जो द्रव्य उसके बाँटे में मिला, उससे कुछ वस्तु खरीद कर, दक्षिण देश को चला गया। वहाँ उसने उन वस्तुओं को बेचकर व्यापार किया। बहुत सा द्रव्य अर्जित किया। उस द्रव्य से एक उत्तमोत्तम मोतियों की माला खरीदी और घर को चल दिया। मार्ग में एक नदी को पार करने के लिए नाव में बैठे। तब श्री नवनीत प्रियजी लाल छड़ी हाथ में लेकर आए और कहा- ''नाव को डुबा दूँ?'' माधोदास ने कहा- ''निजेच्छातः करिष्यति'' (अपनी इच्छा के अनुसार करें)। श्री ठाकुरजी ने कहा- ''तू क्यों गया था? माधोदास ने कहा- ''महाराज, मैं तो माला लेने गया था।'' तब श्री नवनीत प्रियजी ने कहा- ''क्या हमारे यहाँ मालाएँ नहीं थी? हमारे पास बहुत सी मालाएँ है।'' माधोदास ने कहा- ''आपके पास तो बहुत है, परन्तु सबके पास तो नहीं है? उसका उपाय तो करना था।'' इसके बाद नाव डूबती जैसी प्रतीत हुई। नाव में बैठे हुए सब में हलचल मच गई किन्तु माधोदास का मन बहुत प्रसन्न हुआ। सभी ने माधोदास को प्रसन्न देखकर जान लिया कि यह कोई महान् पुरुष है। माधोदास वहाँ से घर आ गए। श्री आचार्य जी महाप्रभु को दण्डवत प्रणाम किया और माला उनके हाथ पर रख दी। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पूछा- ''नाव डूबसे से कैसे बची?'' तब माधोदास ने सम्पूर्ण वृतान्त सुना दिया। वैष्णव जो निकट ही बेठे थे श्री आचार्य जी महाप्रभु से बोले यह वही माधोदास है जिसका श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से श्री ठाकुरजी ने मन फेर दिया और इसके हृदय में भगवद्भाव उत्पन्न हो गया। अन्या (वैश्या) के ऊपर जो आसक्ति थी, वह श्री ठाकुरजी के प्रति हो गई। ये माधोदास ऐसे भगवदीय थे। इन वेणी दास और माधोदास की वार्ता का पार नहीं है, सो इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ हरिवंश पाठक, सारस्वत ब्राह्मण-बनारस में रहने वाले की वार्ता

[वैष्णव-१५, प्रसङ्ग-१]

ये हरिवंश पाठक पटना गए थे। वहाँ के प्रशासक अधिकारी से उनका बहुत मेल-मिलाप था। उस अधिकारी ने अपने मन में सोचा- "यदि वह मुझसे कुछ माँगे तो मैं इसे कुछ दूँ।" लेकिन हरिवंश पाठक ने कुछ भी नहीं माँगा। इस प्रकार रहते हुए कुछ दिन व्यतीत हुए, अब डोल-उत्सव के दो दिन ही शेष रह गए। श्री ठाकुरजी ने उससे स्वप्न में कहा- "क्या तू मुझे डोल (झूला) में नहीं झुलाएगा ?" हरिवंश पाठक ने मन में विचार किया- "अब क्या करना चाहिए ?" हरिवंश पाठक अधिकारी के पास गया और जाकर कहा- "मैं आपके पास कुछ माँगने आया हूँ अतः मुझे कुछ दीजिए।" अधिकारी ने कहा- "क्या चाहिए, बताओ ?" हरिवंश पाठक ने कहा- "मुझे दो दिन में बनारस पहुँचना है।" अधिकारी ने कहा- "बहुत अच्छा" अधिकारी ने घोड़ा और मनुष्य साथ कर दिये, पेड़े में (परदे में) डाक-चौकी बनाई। अपने घर आ गया। फिर मंदिर में आकर डोल सिद्ध (तैयार) किया। डोल की सभी सामग्री सिद्ध करके, श्री ठाकुरजी को डोल में पधराया। मन बहुत प्रसन्न हुआ। थोड़े ही दिन बाद वह पुनः पटना गया, तो अधिकारी ने कहा- "तुम्हें ऐसी जल्दी थी ?" हरिवंश पाठक ने कहा- "कुछ जरूरी काम था।" हरिवंश पाठक ने मन की बात नहीं बताई। वे हरिवंश पाठक ऐसे श्री आचार्य जी महाप्रभु के कृपापात्र भगवदीय थे, अतः इनकी वार्ता अनिर्वचनीय है, कहाँ तक उल्लेख करें।

अथ गोविन्द दास भल्ला की वार्ता

[वैष्णव-१६, प्रसङ्ग-१]

गोविन्द दास भल्ला के पास द्रव्य बहुत था। वे श्री आचार्य जी महा प्रभु के सेवक हो गए। गोविन्द दास ने श्री आचार्य यहां प्रभु से पूछा - "महाराज मेरे द्रव्य बहुत है, मैं इसका क्या करूँ ?" श्री आचार्य जी महा प्रभु ने कहा "श्री ठाकुर जी की सेवा कर।" गोविन्द दास ने कहा "महाराज सेवा करूँ, स्त्री तो अनुकूल है ही नहीं ?" श्री आचार्य

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

जी महाप्रभु ने कहा "तू स्त्री को त्याग दे।" गोविन्द दास ने स्त्री को त्याग दिया। फिर गोविन्द दास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से पूछा "महाराज, द्रव्य का क्या करूँ?" श्री आचार्य जी महा प्रभु ने कहा "द्रव्य के चार भाग कर।" गोविन्द दास ने द्रव्य को चार भाग में बाँट दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा -"एक भाग तो श्री नाथ जी को समर्पित कर। एक भाग अपनी स्त्री को दे। एक भाग-सेवा के लिए सुरक्षित रख ले।" तब गोविन्द दास ने कहा - "महाराज, कुछ आप भी अंगीकार करें।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "एक भाग हमें दे दे।" सब विभागों को यथा भाग समर्पित करके अपने भाग का द्रव्य लेकर आप स्वयं महावन में आ गए महा प्रसाद वैष्णवों को भोजन कराते थे। यदि वैष्णव नहीं मिलते थे तो गायों को खिला दिया करते। उसमें से आप स्वयं रंचक (स्वल्प) भाग भी नहीं लेते थे। अपने लिए पृथक लीटी (रेखा) करके भोग सपर्पित करते और प्रसाद लेते थे। इस प्रकार सेवा करते हुए समस्त धन व्यतीत हो गया। तब श्री गोवर्द्धननाथ जी की सेवा में आ गए। श्री गोवर्द्धन नाथ जी की सेवा करते, परिचारिकी करते, रसोई की टहल करते, दोनों समय के पात्र मांजते। रात्रि के सवा या डेढ प्रहर शेष रहते उठकर गागर (जलघड़ा) लेकर चलते और मथुरा में विश्राम घाट पर स्नान करके वहीं से यमुना जल की गागर भरकर राजभोग से पहले आ पहुँचते थे। पुनः पात्र मांजकर रसोई पोतकर अपनी सब सेवा से निवृत्त होकर नीचे आते थे। फिर तिलक पोंछकर माला उतार गाँठ बाँधकर आसपास के गाँवों से कोरी (अन्न) भिक्षा माँग कर लाते थे। लगभग पाँच सेर आहार करते थे। अतः जब तक आहार के बराबर भिक्षा जुड़ती तब लौटते थे। तब स्वयं ही अनाज पीसकर रोटी बनाते। श्री नाथ जी की ध्वजा के सम्मुख दिखाकर उसमें चरणोदक मिलाकर प्रसाद लेते थे। इस प्रकार जीवन का निर्वाह करते थे। उनकी यह चर्या श्री नाथ जी को रुचिकर नहीं हुई अतः उन्होंने श्री आचार्य महाप्रभु से कहा - "तुम्हारा एक सेवक मुझे बहुत कष्ट देता है।" श्री आचार्य जी महाप्रभु अडेल से चलकर आगरा पधारे और वहां वैष्णवों से पूछा - "श्री ठाकुर जी को किस ने रूष्ट किया है?" वैष्णवों ने कहा - "महाराज, हमें तो इसका कुछ भी ज्ञान नहीं हैं।" वहां से श्री आचार्य जी महाप्रभु मथुरा पधारे और यहाँ भी वैष्णवों से श्री आचार्य जी महाप्रभु ने वही प्रश्न किया। उन वैष्णवों ने भी यही कहा कि उन्हें तो कुछ भी ज्ञात नहीं है। इसके बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

श्रीजी के द्वार पर पधारे। वहाँ श्री नाथजी के दोनों कपोलों को हाथ से स्पर्श करते हुए कहा – "बाबा उदास (अनमने) कैसे हो?" तब श्री ठाकुर जी ने कहा – "तुम्हारे सेवक हमें बहुत खिझाते हैं।" तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने समस्त सेवकों से उन सबकी सेवा के विषय में जानकारी प्राप्त की। वे क्या-क्या सेवा करते है और प्रसाद कहाँ लेते हैं। सभी ने अपनी अपनी सेवा का विवरण दिया और प्रसाद लेने का प्रकार भी बताया। फिर गोविन्ददास से पूछा – "तू क्या सेवा करता है?" उसने भी समस्त सेवा का विवरण दिया और प्रसाद लेने का प्रकार भी बताया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने मन में जान लिया कि श्री ठाकुर जी को इसने रुष्ट किया है। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने गोविन्ददास भल्ला से कहा – "तुम श्री ठाकुर जी की रसोई में प्रसाद लिया करो।" इस पर गोविन्ददास भल्ला ने कहा – "श्री गुरु का द्रव्य ऐसे कैसे ग्रहण करु" तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – "तू सेवा मत किया कर।" गोविन्ददास क्षत्रिय अहङ्कार से सेवा छोड़कर मथुरा चले गए। वहाँ पहुँचकर केशोराय की सेवा करने का अधिकार पत्र पठानों से प्राप्त कर सेवा करने लग गए। एक समय उसने श्री केशोराय की शैय्या निवार से बुनी। शैय्या की अद्‌भुत बुनाई बन पड़ी। श्री केशोराय उस शैय्या पर पौढने (शयन करने) लग गए। गाँव के अधिकारी को जानकारी हुई कि केशोराय की निवार की शैय्या बड़ी अद्‌भुत है अतः उसने उसी कारीगर से निवार बनवाई किन्तु निवार वैसी तैयार नहीं हो सकी जैसी कि श्री केशोराय की थी। अधिकारी ने आज्ञा दी कि " श्री केशोराय की शैय्या के ऊपर चढ बैठा। गोविन्ददास ने जैसे ही सुना कि अधिकारी श्री ठाकुर जी की शैय्या पर चढ कर बैठा है। गोविन्द दास ने अधिकारी को गाली दी और गुप्ती (छुरी) से अधिकारी को ठोर (जान से) मार दिया। अधिकारी के मनुष्यों ने गोविन्द दास को उसी स्थान पर जान से मार दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु के आगे किसी वैष्णव ने जाकर सारा वृतान्त सुना दिया और उसने पूछ लिया – "वैष्णव की ऐसी गति क्यों हुई?" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – "इसे पर लोक में कोई हानि नहीं है। परन्तु इसने हमारी आज्ञा नहीं मानी, इसलिए इसकी देह इस प्रकार छूटी है। यह गोविन्ददास पूर्व जन्म में श्री नन्दराय जी का भैंसा था, इसने मिट्टी-पानी बहुत ढोया था।" सो गोविन्ददास भल्ला श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, इसलिए इनकी वार्ता का कोई पार नहीं है, कहाँ तक लिखें?

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ अम्बा क्षत्राणी - कड़ा की रहने वाली - की वार्ता

[वैष्णव-१७, प्रसङ्ग-१]

अम्बा के दो बेटे थे। दोनों परम वैष्णव थे। वह स्वयं भी वैष्णव थी। उसके बेटे उसे अम्मा कहते थे। वह श्री ठाकुरजी की सेवा भी भलीभाँति से करती थी। उसके सेव्य श्री ठाकुर जी श्री बालकृष्ण जी भी उसे अम्मा कहते थे। कुछ दिन के बाद उसका एक बेटा मर गया। उसने श्री ठाकुर जी की रसोई बनाई। श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया और समयानुसार भोग सराने के बाद रोने लगी। अम्मा को रोते देखकर श्री ठाकुर जी बहुत खेद कर लगे। श्री ठाकुर जी कहने लगे - "अम्मा तू रोवे मत।" परन्तु वह रोने से बन्द ही नहीं हुई । ऐसा करते हुए उसका दूसरा बेटा भी मर गया। तब तो वह बहुत ही रोने लगी। श्री ठाकुर जी उसको रोने से रोकने लगे । लेकिन अम्मा रोती ही रहती। श्री ठाकुर जी ने श्री गुसाँई जी से कहा - "अम्मा रोती है, मुझे खेद होता है।" श्री गुसांई जी अम्मा के घर पधारे और कहा - "अम्मा तू रो मत। श्री ठाकुर को खेद होता है" अब तो अम्मा का रोना बन्द हो गया। अम्मा सेवा का सब साज करके स्नान करती और मंदिर में जाकर दोनों हाथों से सीधा लगाकर श्री ठाकुर जी को लगाती। इस प्रकार अच्छी तरह सेवा करती थी।

[प्रसङ्ग-२]

पुनः एक दिन दूध का कटोरा श्री ठाकुर जी के आगे भरकर रखा था उसी समय श्री गुसाँई जी अम्मा के घर पधारे। मंदिर का टेरा (पर्दा) सरका कर दर्शन करने लगे तो श्री गुसाँई जी ने श्री ठाकुर जी को दूध पीते हुए देखा। श्री गुसाँई जी देखकर पीछे फिर आए। अम्मा ने कहा "बाबा, आप पीछे क्यों फिर आए ?" श्री गुसाँई जी ने कहा - " श्री ठाकुर जी दूध पी रहे है।" अम्मा ने कहा - " श्री ठाकुर जी तो लडका (छोटा बच्चा) है, तुम क्या जानते नहीं हो ?" तब श्री गुसाँई जी दर्शन करके पीछे फिरे और अम्मा से कहा "यह दूध हमारे घर भिजवा देना।" तब अम्मा ने कहा "राज, आप ही तो आरोगने वाले हो, चाहे तो यहाँ आरोग लेओ, चाहो तो वहाँ आरोग लेना। श्री गुसाँई जी आप तो घर पधारे," तब अम्मा ने दूध श्री गुसाँई जी के घर भिजवा दिया। अम्मा से श्री ठाकुर जी का इस प्रकार सानुभाव था। प्रत्यक्ष वार्ता करते थे। जो वस्तु चाहते थे, सो माँग लेते थे। अम्मा श्री आचार्य जी महाप्रभु की ऐसी कृपा पात्र भगवदीय थी। अतः इनकी वार्ता का पार नहीं है। कहाँ तक लिखें ?

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ गज्जन धावन क्षत्रिय - आगरा निवासी - की वार्ता

[वैष्णव-१८, प्रसङ्ग-१]

गज्जन धावन श्री नवनीत प्रियजी की सेवा भलीभाँति से करते थे। श्री ठाकुर जी उनसे सानुभाव थे। गज्जन के साथ श्री नवनीत प्रिय जी खेला करते थे। कभी तो गज्जन को वे गाय बना लेते और कभी बछड़ा बना लेते। उसका मुख अपने पीताम्बर से पोंछते थे। जब उसे बछड़ा बनाते थे तो उसे भागने नहीं देते थे। पकड़ लिया करते थे, चलने भी नहीं देते थे। जब उसे घोड़ा बनाते थे तो उसके ऊपर सवारी करते थे। जब हाथी बनाते थे तो ऊपर गर्दन पर सवारी करते थे। गज्जन के घुटने घिस गए। श्री नवनीत प्रिय जी गज्जन धावन पर ऐसी कृपा करते थे। श्री ठाकुर जी को जो भी भोजन सामग्री की इच्छा होती, वे स्वयं ही माँग लेते थे। कितनी ही बातें हैं, उन्हें कहाँ तक लिखें। एक दिन श्री नवनीत प्रियजी ने गज्जन धावन से कहा - "हमें श्री गुसांई जी के घर पधराओ।" उस समय श्री आचार्य जी महाप्रभु गोकुल में थे अतः गज्जन धावन ने उनसे निवेदन किया कि श्री नवनीत प्रिय जी की ऐसी आज्ञा हुई है। वे आपके पास पधारना चाहते है। श्री आचार्य जी अधिकारी ने सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर दी। गज्जन धावन ने श्री नवनीत प्रिय जी को श्री आचार्य जी महाप्रभु के मन्दिर में पधरा दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने जैसा भी प्रस्ताव बना वैसे ही पधरा कर भोग समर्पित किया। फिर रात्रि में आपने बहुत सौंधे लगाकर श्री नवनीत प्रिय जी को अपनी शैय्या पर पौढाकर आपभी उन्हें लेकर सो गए। दूसरे दिन नवीन शैय्या सिद्ध कराई गई उसके ऊपर पौढाये, परन्तु वह शैय्या कुछ छोटी थी अतः श्री नवनीत प्रिय जी ने कहा - "मै तो इस शैय्या पर नहीं पौढ पाऊँगा।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "फिर ऐसे कैसे काम चलेगा?" श्री नवनीत प्रिय जी ने कहा - "कुछ भी बाधा नहीं है।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने आपने सौंधो लगाकर उन्हें अपने पास ही पौढा लिया। दूसरे दिन शैय्या बड़ी कराई गई, तब पौढे। वहाँ कुछ दिन रहकर श्री आचार्य जी महाप्रभु अडेल को पधारे, तब गज्जन भी साथ ही गया क्योंकि गज्जन धावन बिना श्री नवनीत प्रिय के एक क्षण भी नहीं रहते थे। ऐसे ही श्री नवनीत प्रिय भी गज्जन धावन के बिना एक क्षण भी नहीं रहते थे। एक दिन श्री नवनीत प्रिय जी के लिए पान लेने हेतु श्री अक्का जी ने गज्जन धावन को भेजा। गज्जनधावन यों तो कह नहीं सका कि श्री नवनीत प्रिय जी मुझसे हिले हुए हैं (मेरे बिना बेचैन होंगे) मैं कैसे जाऊँ? बिना बोले ही चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

मार्ग में उसे ज्वर आ गया। इसलिए वह वहाँ ही पड़ गया। यहाँ श्री अक्का जी ने श्री नवनीत प्रिय जी को भोग समर्पित किया। श्री नवनीत प्रिय जी ने श्री अक्का जी से कहा "गज्जन को बुलाओं। जब मेरा गज्जन आवेगा तब भोजन करूँगा।" श्री अक्का जी ने दो मनुष्यों को गज्जन को बुलाने के लिए भेजा। उन्होंने थोड़ी दूर पर गज्जन को पड़े हुए देखा। उसे ज्वर चढा हुआ था। मनुष्य उसे वहाँ से लिवाकर लाये। तब गज्जन स्वयं स्नान करके मन्दिर में गया तो उसका ज्वर उतर गया। गज्जन ने श्री नवनीत प्रिय जी से कहा – "बाबा भोजन क्यों नहीं कर रहे, अब भोजन करो।" श्री नवनीत प्रिय ने तब भोजन किया। गज्जन धावन से श्री नवनीत प्रिय जी ऐसे सानुभाव थे। श्री नवनीत प्रिय जी से एक क्षण ही अलग हुआ कि उसे ज्वर चढ आया। जब उनके निकट आ गया तो ज्वर उतर गया। इसलिए गज्जन धावन श्री नवनीत प्रिय जी के सदा पास ही रहते थे। ये गज्जन धावन श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र थे अतः इनकी वार्ता का पार नहीं है, कहां तक लिखें।

श्री नारायणदास ब्रह्मचारी सारस्वत ब्राह्मण - महावन में रहते - की वार्ता

[वैष्णव-१९, प्रसङ्ग-१]

नारायणदास के सेव्य श्री ठाकुर जी श्री गोकुल चन्द्रमा जी थे। नारायणदास श्री गोकुल चन्द्रमा जी की सेवा भलीभाँति से करते थे। वे गायों को घास भी धो-पोंछ कर खिलाते थे। उनका मन्तव्य था कि श्री ठाकुर जी दूध आरोगते है अतः दूध में कहीं रजःकण नहीं आ जाएँ। श्री आचार्यजी महाप्रभु जब श्री गोकुल पधारते तो नित्य प्रातःकाल श्री गोकुल से महावन श्री गोकुल चन्द्रमाजी की सेवा करने हेतु महावन पधारते थे और सेवा करके, भोग समर्पित करके वापिस श्री गोकुल पधारते थे। नारायणदास हाथ पाँव धोने के लिए जंगल में जहाँ से मिट्टी खोदते थे वहाँ ही द्रव्य निकलता परन्तु वे उस पर मिट्टी डालकर आ जाते थे, वे द्रव्य का स्पर्श नहीं करते थे। वे बड़े त्यागी थे।

एक दिन नारायणदास सो रहे थे तो खाट के आसपास द्रव्य का ढेर लग गया। नारायणदास ने देखा कि खाट के आसपास द्रव्य का ढेर लगा हुआ है। नारायणदास ने अपनी भतीजी से कहा – "बेटी, जल्दी उठ, घर में बहुत विगाड़ हो रहा है, शीघ्र

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

बुहारी लगाकर कूड़े को बाहर डाल आओ।'' उस समय नारायणदास तो शरीरिक क्रिया करने हेतु जंगल में गए, भतीजी ने वही किया, बस द्रव्य बुहार कर, कूड़े की तरह बाहर फेंक दिया। सभी स्थान को लीप दिया। नारायणदास स्नान करके मंदिर में गए। सेवा शृङ्गार करके श्री ठाकुर जी के सामने देखा तो श्री ठाकुर जी ने नारायणदास को अति सुन्दर दर्शन दिये। प्रसन्न श्री ठाकुर जी को देखकर नारायणदास ने कहा - ''महाराज, यह घटा क्यों उमड़ रही है, न जाने आज बरसेगी?'' पीछे स्वयं ने ही कहा - ''यह घटा श्री आचार्य जी महाप्रभु का जो सर्वस्व है, वहाँ बरसेगी।'' इसके बाद नारायणदास श्री गोकुल चन्द्रमाजी को राजभोग समर्पण करके बाहर आ बैठे। उनका हृदय भर गया मन में विचार उठे कि श्री ठाकुर जी किस भाँति से आरोगते है? उनकी भतीजी ने उनके मन की बात जानकर कहा - ''श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक जहाँ भोग समर्पित करते है श्री आचार्य जी महाप्रभु की कानि (मर्यादा) से श्री ठाकुर जी आरोगते हैं। तुम तो श्री आचार्य जी महाप्रभु के परमकृपा पात्र भगवदीय सेवक हो, तुम्हारा समर्पित किया हुआ भोग तो अवश्य ही आरोगेंगे। तुम सन्देह क्यों करते हो?'' नारायणदास ने कहा - ''बेटी, आरोगेंगे तब जानूँ। जब कोई वैष्णव अपने घर पर अचानक आकर महाप्रसाद लेगा तो जानूँगा कि श्री ठाकुर ने आरोगा होगा।'' वैष्णवों के ऊपर नारायणदास का ऐसा भाव था।

[प्रसङ्ग-२]

पुनः एक दिन नारायणदास, श्री गोकुल चन्द्रमा जी का शृङ्गार करके रसोई में गए। वहाँ शृङ्गार-भोग सिद्ध सराने के लिए थाल रखा इतने में एक वैष्णव ने नारायणदास के पास आकर बधाई दी। श्री आचार्य जी महाप्रभु नारायणदास ने सुनते ही ताती (गर्म) खीर डबरा में परोस कर भोग समर्पित कर उतावले (शीघ्र) ही श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन के लिए आए। आकर श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन करके दण्डवत् प्रणाम किया। श्री आचार्य जी महाप्रभु के चरणारवन्द के ऊपर मस्तक (टेका)। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने मस्तक पकड़ कर उसे अपने हाथ से उठाया और पूछा - ''श्री गोकुल चन्द्रमा जी के यहाँ क्या समय है?'' नारायणदास ने कहा - ''महाराज अभी अभी शृङ्गार-भोग समर्पित करके आया हूँ।'' यह सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु तत्काल पधारे। पहुँचते ही स्नान किया। हाथ धोकर आचमन झारी हाथ में लेकर, भोग सराने के लिए मन्दिर में पधारे। भीतर जाकर देखा तो श्री गोकुल चन्द्रमा जी का श्रीहस्त खीर में सना (भरा) हुआ है और श्री हस्तकमल को खेंच रहे हैं। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने गोकुल चन्द्रमा जी से कहा -

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

''महाराज, श्री हस्त को क्यों खेंच रहे हो ?'' तब श्री गोकुल चन्द्रमा जी ने कहा – ''तुमको आया जान केनारायणदास मेरे लिए गरम (ताती) (गरमागर्म) खीर समर्पित करके तुम्हारे पास चला गया। मेरे हाथ में खीर ताती लगी, सो मैने थोड़ी सी चाट के हाथ झटक दिया, इसलिए सारे मंदिर में छींट लग गई हैं। मेरे हाथ और ओष्ठ लाल हो गए हैं।'' इसी कारण से श्री गोकुल चन्द्रमा जी के हाथ और ओष्ठ आज भी लाल हैं। फिर तो श्री आचार्य जी महाप्रभु ने खीर को पंखा से शीतल किया। भोग समर्पित कर बाहर आए और नारायण दास पर खीझे और कहा – ''तूने श्री ठाकुर जी को (गरम) खीर समर्पित की।'' नारायणदास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से विनती की – ''मैं तो राज को पधारे जान कर उतावले में राज के पास आ गया।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – ''आज से पीछे कभी ऐसा काम मत करना।'' समय होने पर श्री आचार्य जी महाप्रभु ने भोग को सराया। तब श्री गोकुल चन्द्रमा जी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के दोनों हाथ पकड़कर कहा – ''तुम खीर महाप्रसाद ले ओ।'' तब श्री गोकुल चन्द्रमा जी ने कहा – ''महाराज, जाति व्यवहार की कठिनता है।'' तब श्री गोकुल चन्द्रमा जी ने कहा – ''यह मेरी आज्ञा है, अतः तुम कुछ भी विचार मत करो। खीर का महाप्रसाद लो।'' श्री गोकुलचन्द्रमाजी ने अपने आगे ही श्री आचार्य जी महाप्रभु को खीर का महाप्रसाद लिवाया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने खीर का महाप्रसाद ग्रहण किया उसी दिन से खीर अनसखड़ी में मानी जाती हैं। नारायणदास से श्री गोकुलचन्द्रमा जी इस प्रकार सेवा करवाते थे। वे नारायणदास ऐसे भगवदीय हैं, इसीलिए श्री गोकुल चन्द्रमा जी उन पर ऐसी कृपा करते थे।

[प्रसङ्ग–३]

पुनः कुछ दिन बाद नारायणदास की देह थकी। बहुत अशक्ति हो गई। एक दिन श्री गोकुल चन्द्रमा जी ने कहा – ''नारायणदास, तू कुछ माँग ले।'' नारायणदास ने कहा – ''मैं तो यही माँगता हूँ कि अब आप श्री गुसाँई जी के घर पधार कर सेवा ग्रहण करो।'' नारायणदास के मन में यह भाव था कि अन्यत्र श्री ठाकुर जी सुख का अनुभव नहीं करेंगे। सेवा भी कहीं अच्छी तरह से नहीं हो सकेगी। इसलिए नारायणदास ने श्री ठाकुर जी से यही माँग की थी। कुछ दिन बाद नारायणदास की देह छूट गई तब श्री गोकुल चन्द्रमा जी ने कितने ही दिन तक कृष्णदास स्वामी के पास सेवा कराई। पीछे श्री गुसाँई जी के घर मथुरा में पधारे। वहीं श्री गोकुल चन्द्रमाजी श्री रघुनाथ जी के माथे पधराये गए। नारायणदास ब्रह्मचारी श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे अतः इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखें।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ एक क्षत्राणी - महावन में रहती - की वार्ता

[वैष्णव-२०, प्रसङ्ग-१]

एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु पृथ्वी की परिक्रमा करते हुए महावन में पधारे। वहाँ एक क्षत्राणी को चार स्वरूप प्राप्त हुए थे। उसने चारों स्वरूप श्री आचार्य जी महाप्रभु के आगे लाकर भेंटकर दिए। उन चारों स्वरूपों में एक का नाम - श्री नवनीत प्रिय जी और दूसरे का नाम - श्री गोकुल चन्द्रमा जी, तृतीय का - श्री ललित त्रिभंगी जी और चतुर्थ का नाम - श्री लाडले जी था। ये चारों स्वरूप श्री आचार्य जी महाप्रभु ने चार वैष्णवों के माथे पधरा दिए। श्री गोकुल चन्द्रमा जी को नारायणदास ब्रह्मचारी के माथे पधराया। श्री लाडले जी जीयदास क्षत्री के माथे पधराए। श्री ललित त्रिभंगी देवा क्षत्रिय के माथे पधाराए और श्री नवनीत प्रिय जी गज्जन धावन के माथे पधराए। इस तरह चारों स्वरूप चार वैष्णवों के माथे पधरा दिए। चारों वैष्णवों से श्री आचार्य महाप्रभु ने क़हा - ''ये चारों स्वरूप मेरे सर्वस्व हैं अतः तुम्हारे माथे पधराए हैं। इनकी सेवा नीकी तरह से करना। जब तुम से सेवा नहीं बने तो इन्हें हमारे घर में पधरा जाना। फिर श्री नवनीत प्रिय जी ने तो गज्जन धावन के माथे सेवा कराई, वे पुनः श्री आचार्य जी महाप्रभु के घर पधारे। यह सबवृत्तान्त गज्जन धावन की वार्ता में वर्णित है।'' श्री गोकुल चन्द्रमा जी ने नारायण ब्रह्मचारी के माथे सेवा कराई। फिर कृष्णदास स्वामी के पास सेवा लेने के बाद श्री गुसाँई जी के घर पधारे। बाद में इन्हें श्री गुसाँई जी ने श्री रघुनाथ जी के माथे पधरा दिया। यह समस्त वृत्तान्त नारायणदास ब्रह्मचारी की वार्ता में लिखा है। श्री लाडिले जी की सेवा चर्चा का विवरण जीयदास की वार्ता में लिखा है। वे अब श्री आचार्य कुल में विराजमान हैं। श्री ललित त्रिभंजी जी अन्तर्ध्यान हो गए सो वृत्तान्त देवा क्षत्रिय कपूर की वार्ता में लिखा है। इस प्रकार वह क्षत्राणी श्री आचार्य जी महाप्रभु की ऐसी भगवदीय कृपा पात्र थी उसकी वार्ता कहाँ तक लिखे।

अथ जीयदास क्षत्री सूर - की वार्ता

[वैष्णव-२१, प्रसङ्ग-१]

जीयदास क्षत्रिय के माथे आचार्य जी महाप्रभु ने श्री लाडिले जी की सेवा दी थी। जीयदास से श्री लाडिले जी ने चार प्रहर सेवा कराई। जीयदास के चार बेटे थे। इनमें से

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पुरुषोत्तमदास व छबीलदास इन दोनों भाइयों ने एक दिन सेवा की। एक समय महामारी आई। कृष्णदास अकेले रह गए। कृष्णदास के मित्र हरजी और मथुरामल्ल क्षत्रिय थे। कृष्णदास और हरजी ने दोनों ने मिलकर सेवा की। बाद मैं जब कृष्णदास की भी देह छूट गई तो हर जी भाई ने डेढ वर्ष तक सेवा की। इसके बाद श्री लाडिले जी, श्री गुसाँई जी के घर पधारे जहाँ अभी तक विराज रहे हैं। वे जीयदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे। इनकी वार्ता का पार नहीं है कहाँ तक लिखें।

अथ देवा क्षत्रिय कपूर की वार्ता

[वैष्णव-२२, प्रसङ्ग-१]

देवा कपूर के माथे श्री आचार्य जी महाप्रभु ने श्री ललित त्रिभंगी जी की सेवा पधराई। जब तक देवा कपूर की देह रही तब तक उसने सेवा की। इसके पीछे देवा कपूर की स्त्री की देह छूटी उसका संस्कार करके लौटे और मन्दिर खोलकर देखा तो श्री ठाकुर जी नहीं मिले। सभी सामग्री यथास्थान विद्यमान पाई गई, केवल श्री ठाकुर जी ही नहीं मिले। न जाने कहाँ अन्तर्ध्यान हो गए। देवा कपूर के चार बेटे थे परन्तु उनसे सेवा नहीं कराई। श्री ठाकुर जी तो स्नेह के वशीभूत हैं। भगवत इच्छा ही ऐसी हुई। देवा कपूर और उनकी स्त्री श्री आचार्य जी महाप्रभु के कृपा पात्र भगवदीय थे। इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए।

श्री दिनकरदास सेठ की वार्ता

[वैष्णव-२३, प्रसङ्ग-१]

श्री आचार्य जी महाप्रभु अडेल में नित्य कथा करते थे। दिनकर दास सेठ की कथा में बहुत रूचि थी अत: वे प्रतिदिन कथा सुनते थे। एक दिन दिनकरदास रसोई कर रहे थे। आटा गूध दिया, उपले जला दिए, लीटी (रेखा) खींच रखी थी। इतने में श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक जलघड़िया जो श्री ठाकुर जी के लिए जल भरने के लिए आए। दिनकरदास ने पूछा - "श्री आचार्य जी महाप्रभु क्या कर रहे है?" जलघड़िया ने कहा - "पोथी खोली है, अब कथा कहेंगे।" दिनकर दास ने कच्ची आँगारवरी (बाटी) लीनीं, उन्हें सेका नहीं और शीघ्र ही उठकर वस्त्र धारण कर आ

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

गया। कथा सुनी। जब श्री आचार्य जी महाप्रभु कथा कह रहे थे तभी उस जलघड़िया ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा – "महाराज, दिनकरदास ने कच्ची अँगारवरी ले ली हैं, उन्हें सेका भी नहीं है।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दिनकरदास से पूछा – "तू कच्ची अँगारवी क्यों खाकर आया ?" दिनकर ने उत्तर दिया – "महाराज अँगारवी तो प्रतिदिन ही लूँगा लेकिन यह अमृतकथा कब कब सुनूँगा ?" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – "अब से जब तू रसोई करके, श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित कर प्रसाद ले, आ पहुँचेगा, तभी मैं पोथी खोलूँगा। तेरे आने से पहले कथा शुरू नहीं करेंगे। आज से तू ही हमारी कथा का प्रमुख श्रोता है, अतः तू निश्चिन्त्य होकर आना।" तब से दिनकरदास शीघ्र ही रसोईकर, भोग समर्पित कर, प्रसाद ग्रहण करके आता तो श्री आचार्य महाप्रभु कथा की पोथी (पुस्तक) खोलते थे। वे दिनकरदास सेठ श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय के सो इनकी वार्ता का पार नहीं है अतः इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखें।

अथ मुकुन्ददास कायस्थ की वार्ता

[वैष्णव-२४, प्रसङ्ग-१]

मुकुन्द दास कवि थे, कविता लिखा करते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु, श्री गुसाँई जी तथा श्री ठाकुर जी से सम्बन्धित बहुत से कवित्त लिखे थे। उन्होंने एक ग्रन्थ की रचना की थी। एक समय मुकुन्द दास उज्जैन के कारकुन (अधिकारी) होकर आए। वहाँ के पण्डितों ने मुकुन्ददास से कहा – "यदि तुम हमसे भागवतकथा सुनना चाहो तो हम तुम्हें कथा सुनाएँ।" मुकुन्द दास ने उनसे पूछा – "तुम लोग हमारी भागवत को जानते हो ?" उन पण्डितों ने कहा "क्या तुम्हारी भागवत अलग (न्यारी) है ?" तब मुकुन्द दास ने एक श्लोक का व्याख्यान करने एक माह तक सुनाया। उन्होंने किसी से भी कथा नहीं सुनी। यदि कोई पण्डित कथा कहने आता था तो उसकी कथा के क्रम में अनेक त्रुटि (दूषण) देकर आते थे। मुकुन्ददास की आचार्य जी महाप्रभु के चरण कमलों में भारी आस्था थी और सुबोधिनी जी का प्रगाढ अध्ययन था। सुबोधिनी उन्हें स्फुर्द स्वरूप (नवीन स्फुरणा देने वाली) थी। इस प्रकार रहते हुए मुकुन्ददास की उज्जैन में देह छूटी। किसी वैष्णव ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा – "ऐसे मत कहो, यों कहोकि अवन्तिका ने मुकुन्ददास को प्राप्त कर लिया। वे मुकुन्ददास श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भागवदीय थे, अतः इनकी वार्ता का कोई पार नहीं है। कहाँ तक वार्ता का उल्लेख करें।

अथ प्रभुदास जलोटा क्षत्रिय - सीहनन्दवासी की वार्ता

[वैष्णव-२५, प्रसङ्ग-१]

प्रभुदास के सेव्य ठाकुर श्री मदन मोहन जी, जो राजनगर सिकन्दर पुर में विराजे हैं। श्री आचार्य जी महाप्रभु मथुरा पधारे तो प्रभुदास भी उनके साथ थे। एक दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु स्नानकर सन्ध्या वन्दन कर रहे थे। वहाँ श्री यमुना जी के विश्रामघाट पर दो-चार वैष्णव भी बैठे थे। उसी समय रूप सनातन, कृष्णचैतन्य के सेवक ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से पूछा - "ये वैष्णव कौन है ?" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "हमारे सेवक है।" तब रूप सनातन ने पूछा - "ये इतने दुर्बल (दुबले) क्यों हैं ?" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "हमने इन्हें बहुत वर्जित किया (रोका) कि आप इस मार्ग पर मत चलो। लेकिन इन्होंने हमारा कहना नहीं माना, उसी का फल भोग रहे हैं।" परन्तु रूप सनातन कुछ भी नहीं समझ पाए। श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन पाकर रूपसनातन तो चले गए। फिर कुछ दिनों के बाद रूपसनातन के साथ का एक वैष्णव श्री जगन्नाथ जी के दर्शन करने के लिए गया। वहाँ कृष्ण चैतन्य मिले। कृष्ण चैतन्य ने उस वैष्णव से श्री आचार्य जी महाप्रभु के कुशल समाचार पूछे। उसने कहा - "बहुत ठीक है ?" पुनः पूछा - कहाँ मिले थे ? क्या कर रहे थे ? उस वैष्णव ने कृष्ण चैतन्य से कहा - "श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन करने के लिए रूप सनातन भी विश्रामघाट पर गए थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु से रूप सनातन ने अन्य एक वैष्णव की बात पूछी थी कि ये दुर्बल क्यों रहते हैं ? श्री आचार्य जी महाप्रभु ने प्रभुदास की बात कही - "मैंने इसको बहुत वर्जित किया, परन्तु इसने हमारा कहना नहीं माना, सो यह उसका फल भोगता है।" यह बात सुनकर कृष्ण चैतन्य को मूर्च्छा आ गई। एक मुहूर्त्त तक मूर्च्छा रही, पीछे पुनः सावधान होकर पूछा - "तुमने क्या बात कही थी ?" उस वैष्णव ने फिर कहा - "श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा था - "इस मार्ग में मत पडो।" तब कृष्ण चैतन्य को पुनः मूर्च्छा आ गई, जो दो मुहूर्त्त तक रही। पुनः सावधान होकर तीसरी बार पूछा तो पुनः मूर्च्छा आई। इस प्रकार तीनों बार मूर्च्छा आई। चौथी बार पुनः उस वैष्णव से पूछा तो उस वैष्णव ने उत्तर दिया - "अब मुझ से

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

नहीं कहा जाता है। यह ऐसी बात है जो विरही होता है वही उस बात को जानता है।" रूप सनातन इस विषय में क्या जाने?

[प्रसङ्ग-२]

और एक समय प्रभुदास ने रसोई जल्दी बनाई। दाल कच्ची रह गई और अँगारवरी (बाटी) जल गई। प्रभुदास के मन में आई, ऐसी सामग्री श्री ठाकुर जी को क्या समर्पित करूँ? इसलिए चरणोदक मिला कर प्रसाद ले लिया। श्री ठाकुर जी तो प्रतीक्षा ही करते रहे कि प्रभुदास भोग समर्पेगा और मैं आरोगूँगा। प्रभुदास जी ने बिगड़ी हुई सामग्री समझकर भोग समर्पित नहीं किया। श्री ठाकुर जी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा – "आज तूने श्री ठाकुर जी को बिना समर्पित किए ही प्रसाद ले लिया।" प्रभुदास ने कहा – "महाराज, सत्य बात तो यह है कि आज दाल तो कच्ची थी और अँगारवरी जल गई, इसलिए ऐसी सामग्री समझकर भोग समर्पित नहीं किया। चरणोदक मिलाकर प्रसाद ले लिया।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – "ऐसी रसोई क्यों करी? श्री ठाकुर जी ने तो बहुत समय तक बाट देखी कि प्रभुदास भोग समर्पेगा और मैं (श्री ठाकुर जी) आरोगूँगा। तैंने ऐसी रसोई क्यों करी? सावधान होकर क्यों नहीं बनाई।" बाद में तो सावधानी पूर्वक रसोई बनाने लगे।

[प्रसङ्ग-३]

एक बार श्री आचार्य जी महाप्रभु ब्रज में पधारे थे। प्रभुदास भी उनके साथ था। एक दिन श्री आचार्य श्री महाप्रभु ने ब्रज में श्री गोवर्द्धन के निकट स्थल पर भोग धराया, पीछे भोग सराया और प्रभुदास से प्रसाद लेने को कहा। प्रभुदास ने कहा – "मैंने तो अभी स्नान नहीं किया है।" तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने प्रभुदास से कहा – तू यह श्लोक देख –

श्लोक – वृक्षे वृक्षे वेणुधारी पत्रे पत्रे चतुर्भुजः।
यत्र वृन्दावनं तत्र लक्ष्यालक्ष्य कथा कुतः॥
जलादिना रजः पुण्यं रजसोऽपि जलं वरम्।
यत्र वृन्दावनं तत्र स्नानास्नान कथा कुतः॥

[जहाँ प्रत्येक वृक्ष पर वेणुधारी श्री कृष्ण के दर्शन है और पत्ते पत्ते पर चतुर्भुज भगवान है, ऐसे वृन्दावन समक्ष लक्ष्मी निवास की क्या चर्चा है? जहाँ के जल से रज

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

और रज से जल श्रेष्ठ है, उस वृन्दावन में स्नान करने और न करने की क्या चर्चा है ?]

यह श्लोक पढ कर प्रभुदास को सुनाया और व्रज का स्वरूप बताया। वृक्ष वृक्ष में वेणुधारी और पत्ते पत्ते पर पर चतुर्भुज के दर्शन कराए। ऐसा सादृश्य स्वरूप देखने के बाद प्रभुदास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु को दण्डवत प्रणाम किया और प्रसाद ग्रहण कर लिया। प्रभुदास के ऊपर श्री आचार्य जी महाप्रभु की ऐसी कृपा थी अपने आप कृपा थी कि अपने आप कृपा करके व्रज का स्वरूप प्रदर्शित किया।

[प्रसङ्ग-४]

अन्य एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु मन्दिर में थे तो उनके मन में श्री ठाकुर जी को दही का भोग समर्पित करने की इच्छा हुई। प्रभुदास उस समय बाहर थे। प्रभुदास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के अन्त: करण की बात को जान लिया। प्रभुदास बाहर गाँव में एक अहीरी के घर जाकर पूछा कि उसके यहाँ दही है? अहीरी ने सकारात्मक उत्तर 'हाँ' में दिया। प्रभुदास ने दही माँगा। अहीरी ने उन्हें दही दे दिया। प्रभुदास ने पूछा - "इसका मूल्य तो बता।" अहीरी ने कहा - "तू इसका क्या मूल्य देगा? अधिक से अधिक एक टका देगा कोई मुक्ति तो दे नहीं देगा?" प्रभुदास ने कहा - "ले एक टका तो नगद ले ले और तुझको मुक्ति भी दी।" अहीरी ने कहा - "तू मुझको लिखकर दे कि मुक्ति दीनी।" प्रभुदास ने लिख दिया। प्रभुदास दही लेकर घर आ गए। दही घर के भीतर भेज दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दही का भोग समर्पित किया और श्री ठाकुर जी ने भोग अरोगा। वह दही बहुत स्वादिष्ट था। सायं समय जब श्री गुसाँई जी दर्शन करने पधारे तो उन्होंने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा - "महाराज, प्रभुदास ने दही के ऊपर मुक्ति दी है और लिखकर भी दे आए है।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने प्रभुदास से पूछा - "प्रभुदास, वह दही बहुत स्वादिष्ट था, उसका मूल्य क्या दिया है?" प्रभुदास ने कहा - "महाराज, उस अहीरी ने एक टका और मुक्ति माँगी थी। सो एक टका और मुक्ति दी नी।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "तू ने कुछ भी नहीं दिया।" प्रभुदास ने कहा - "महाराज, मैं क्या करूँ, जो उसने माँगा, वह मैंने दिया। भक्ति माँगती तो मैं उसे भक्ति देता।" अहीरी की सखी ने उससे कहा - "तुझे तो ठग लिया।" अहीरी ने सखी से कहा - "तू क्या जाने? ये बड़े भगवद् भक्त हैं, इनका वचन सत्य है।" कुछ दिनों के बाद उस अहीरी का शरीर छूट गया, तब यमदूत आए और विष्णुदूत भी आए। आपस में झगड़ने लगे। यमदूतों से

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

विष्णुदूतों ने कहा ''श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक प्रभुदास ने इसे मुक्ति दी है, लिखा हुआ कागज इसकी साड़ी के छोर में बँधा हुआ हैं।'' यह बात अहीरी ने सगेभाई (सहोदरों) ने सुनी, लेकिन आँखों से कुछ भी नहीं दिखाई दिया। बाद में जब उस अहीरी का विष्णुदूत ले जाने लगे, तो अहीरी ने विष्णुदूतों से कहा - ''मेरी सखी को दर्शन दो, उसे अभी भी अविश्वास है।'' विष्णुदूतों ने अहीरी की सखी को दर्शन दिया। वह कहने लगीं - ''मुझे भी ले चलो।'' विष्णुदूतों ने कहा - ''हमारे हाथ में क्या है? हम तो सेवक हैं, तू प्रभुदास से कह।'' वह सखी प्रभुदास के पास गई प्रभुदास ने उसे श्री आचार्य जी महाप्रभु के द्वारा नाम दिलाया। जब उसका शरीर छूटा तो उसे भी विष्णुदूत ले गए। उसकी भी मुक्ति हुई। अहीरी के सगे सम्बंधियों ने उसकी साड़ी की खूँट (छोर) से कागज खोलकर देखा तो बाँच कर रोने लगे। प्रभुदास को श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से ऐसी सामर्थ्य थी। सो प्रभुदास बड़े भगवदीय थे, इनकी वार्ता कहाँ तक लिखें।

अथ प्रभुदास भाट सीहनन्द के वासी की वार्ता

[वैष्णव-२६, प्रसङ्ग-१]

वे प्रभुदास भाट श्री ठाकुर जी की सेवा नीकी भाँति से करते थे। बहुत दिन सेवा करने के बाद वे वृद्धावस्था के कारण बहुत अशक्त हो गए। उन्होंने यह जान लिया कि अब देह चार-पाँच दिन में छूटने वाली है। उसके शरीर की सावधानता मिट गई वे असावधान हो गए। उनके परिवार जन उन्हें प्रथोदक तीर्थ में ले गए। जब प्रथोदक तीर्थ आया तो वे सावधान हो गए। आँख खोलकर देखा जानलिया कि यह प्रथोदक तीर्थ है। प्रभुदास ने अपने जनों से पूछा - मुझे यहाँ क्यों लाए हो? तब सभी लोगों ने कहा - ''यह प्रथोदक तीर्थ है। तुम्हारा अन्तिम समय समझकर तुम्हें यहाँ लाए है।'' प्रभुदास ने कहा - ''मुझे प्रथोदक से क्या प्रयोजन है? मैं तो श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक हूँ। मुझे प्रथोदक तीर्थ क्या करेगा? मुझे यदि एक वर्ष तक भी यहाँ रखोगे तो भी मेरी देह यहाँ नहीं छूटेगी। मुझे तो सीहनन्द ले चलो। जब अपने श्री ठाकुर जी के चरण देखूँगा तब देह छूटेगी।'' तब पाँच-सात दिन तक वहाँ रहे। दिनों दिन उनका शरीर स्वस्थ होने लगा, वे सावधान हो गए। तब उन्हें सीहनन्द ले गए। वहाँ उन्होंने अपने सेव्य श्री ठाकुर जी का दर्शन किया और दण्डवत की। प्रभुदास ने श्री ठाकुर जी से कहा - ''श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

आचार्य जी महाप्रभु ने तुमको मेरे माथे पधराया है। ये लोग तो बाबले हैं जो आपका आश्रय छुड़ाकर मुझे तीर्थ क्षेत्र में ले गए। परन्तु श्री आचार्य जी महाप्रभु ऐसा कैसे होने देंगे कि मेरी देह तीर्थ पर छूटे। फिर तो श्री ठाकुर जी का सेवा शृङ्गार करके भोग समर्पित किया। भोग सराकर अनोसर किया। उन्होंने सभी से कह दिया कि वे सब जल्दी से जल्दी प्रसाद ले लें, पीछे मेरी देह छूटेगी। तब तो सभी लोगों ने प्रसाद लिया। सभी से प्रभुदास ने "जय श्री कृष्ण" कहा और तत्काल ही उसने देह छोड़ दी।"

सीहनन्द में एक कीरत चौधरी प्रभुदास की निन्दा करने लगा कि प्रभुदास प्रथोदक तीर्थ से लौट आया, वहाँ तो देह नहीं छोड़ी और सीहनन्द में आकर देह छोड़ी है। इस प्रकार वह निन्दा करता था। एक रात को कीरत चौधरी सो रहा था। चार व्यक्ति हाथ में मुग्दर लेकर आए और उन्होंने कीरत चौधरी को बहुत मारा। कीरत चौधरी ने उनसे पूछा – "मुझे क्यों मारते हो ?" उन्होंने कहाँ – "तू प्रभुदास की निन्दा क्यों करता है ?" कीरत चौधरी ने कहा – "मैं अब निंदा नहीं करूँगा ?" बहुत ही मनुहार की। उन मुग्दरधारियों ने कहा – "यदि पुनः निन्दा की तो तुम्हें इसी प्रकार मारेंगे।" कीरत चौधरी ने कहा – "अब से निन्दा नहीं करूँगा, भक्ति करूँगा।" फिर तो प्रभुदास का स्तुतिगान करने लगे। जब प्रभुदास की बात चलती तो कीरत चौधरी कहते – "वे बड़े महापुरूष थे।" तब लोगों ने कहा – "पहले तो तुम प्रभुदास की निन्दा करते थे, अब स्तुति क्यों करते हो ?" इस पर कीरत चौधरी ने अपनी देह की दशा बताई और उसने कहा – "रात्रि में चार जने आए और उन्होंने मार मार कर मेरी हड्डियों का चूर्ण बना दिया। इसलिए भगवदीय की निन्दा सर्वथा नहीं करनी चाहिए। यदि भगवदीय की निन्दा करेगा तो इस लोक में उसका यही हाल होगा और परलोक में अघोर नरक में जाएगा। इस प्रकार वे प्रभुदास भाट श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे, इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए।

अथ पुरुषोत्तमदास – आगरा में राजघाट पर रहने वाले – की वार्ता

[वैष्णव-२७, प्रसङ्ग-१]

एक समय श्री गुसाँई जी आगरा पधारे थे। वहाँ वे पुरुषोत्तमदास के घर उतरे थे। पुरुषोत्तमदास की स्त्री छुपी रही। श्री गुसाँई जी ने पुरुषोत्तमदास से पूछा – "तेरी स्त्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

कहाँ गई है ?'' पुरुषोत्तमदास ने कहा – ''जनेऊ टूटी होगी।'' इसके बाद श्री गुसाँई जी ने शीघ्र ही रसोई करी, दाल-भात व चार-पाँच शाक बनाये, रोटी बेलने के समय पुरुषोत्तमदास की स्त्री आई। श्री गुसाँई जी ने पूछा – ''अब तक तू कहाँ थी ?'' पुरुषोत्तमदास की स्त्री ने कहा – ''राज, मैं कुछ कार्य कर रही थी।'' फिर तो पुरुषोत्तमदास की स्त्री ने रोटी बेल-बेल कर दी, तो रसोई सिद्ध हुई। श्री गुसाँई जी ने भोग समर्पित किया। समयानुसार भोग सराया और उन्हीं थाल-कटोरा पडगी आदि पात्रों में श्री गुसाँई जी से निवेदन किया – ''राज, भोजन करिये।'' श्री गुसाँई जी ने कहा – ''ये तो श्री ठाकुर जी के पात्र हैं, इनमें भोजन कैसे करें ? हम इन पात्रों में भोजन नहीं करेंगे।'' तब पुरुषोत्तमदास और उनकी स्त्री ने कहाँ – ''महाराज की कृपा से द्रव्य थोड़े ही निपट गया है, नये पात्र मँगा देंगे, आप तो इन्हीं में भोजन करिये।'' श्री गुसाँई जी भोजन करने के लिए बैठ गए। पुरूषोत्तम दास की स्त्री निकट बैठकर पंखा करने लगी और कहा – ''महाराज सामग्री आरोगिये।'' श्री गुसाँई जी ने कहा – ''जो मुझे रूचेगा, मैं आरोगूँगा।'' पुरूषोत्तम दास ने कहा – ''महाराज, श्री नन्दराय जी के घर कैसे आरोगते है ?'' ऐसा कहकर स्त्री-पुरुष दोनों ने श्री गुसाँई जी को बहुत सारी सामग्री खिलाई। उनके संकोच के लिए श्री गुसाँई जी ने कहा – ''जो तुम कहोगे, सो करेंगे।'' भोजन करने के बाद अपने सेव्य श्री ठाकुर जी की शैय्या पर पिछोरा (चादर) बिछा कर श्री गुसाँई जी को पौढाया। पुरुषोत्तमदास चरण सेवा करने लगे। उनकी स्त्री पंखा करने लगी। एक घड़ी के बाद श्री गुसाँई जी ने दोनों स्त्री पुरुषों को प्रसाद ग्रहण करने की आज्ञा प्रदान की। उन्होंने कहा – ''महाराज, महाप्रसाद तो हम रोजाना ही लेते हैं, तुम्हारी सेवा कभी कभी प्राप्त होती है ?'' वे दोनों स्त्री-पुरुष श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे इसलिए इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए।

अथ त्रिपुरदास कायस्थ – शेरगढवासी – की वार्ता

[वैष्णव-२८, प्रसङ्ग-१]

त्रिपुरदास की श्री आचार्य जी महाप्रभु व श्री गोवर्द्धन नाथ जी के विषय में बहुत ममता थी। जहाँ भी बैठते या खड़े होते, वे श्री नाथ जी को कभी पीठ नहीं देते थे। त्रिपुरादास एक तुर्क की नौंकरी करते थे। उन्होंने परगने से बहुत कमाई की थी। जो भी वस्तु आती थी, पहले श्रीनाथ जी को पहुँचाते थे। शाक आदि तो पहुँचते ही रहते थे।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

एक दिन उस तुर्क ने त्रिपुरदास को कारागृह में बन्द कर दिया। उस पर अपराध लगाया कि उसने बहुत सा द्रव्य अनैतिक रूप से खाया है। एक दिन जब वह तुर्क सोया हुआ था, कोई चार जने हाथ में मुग्दर लेकर आए। उन्होंने उस तुर्क को खाट से उल्टा पटक दिया और बहुत मार लगाई। उस तुर्क ने उनसे पुछा – "मुझे क्यों मारते हो ?" उन्होंने कहा – "तूने त्रिपुरदास को कारागृह में क्यों बन्द किया है ?" वह तुर्क बहुत बिल बिलाया (गिड़गिड़ाया)। हा–हा–कार किया, भूमि पर नाक रगड़ी (घीसी) और उनसे कहा – "मुझे मत मारो, मैं त्रिपुरदास को अभी छोड़ दूँगा।" उन व्यक्तियों ने कहा – "यदि तुम त्रिपुरदास को नहीं छोड़ोगे तो हम तुम्हें इसी तरह प्रतिदिन मारेंगे।" ऐसा कहकर वे लोग उसे छोड़कर चले गए। उस तुर्क ने आकर अपने लोगों से कहा – "त्रिपुरदास को बन्दी खाने से अभी छोड़ दो।" तुर्क के व्यक्ति त्रिपुरदास को छोड़ने के लिए रात्रि में ही गए। त्रिपुरदास ने कहा – "अब रात्रि में, मैं कहाँ जाऊँगा, यदि मुझे छोड़ना चाहते हो तो प्रातःकाल के समय में छोड़ना।" तुर्क के व्यक्ति वापिस आए और बोले – "साहब, त्रिपुरदास कहता है कि अब रात्रि बहुत हो गई है अतः उसे सुबह होते ही छोड़ें।" तुर्क ने अपने व्यक्तियों से कहा – "त्रिपुरदास को बेग ही छोड़ कर लाओ।" तुर्क के व्यक्ति उस त्रिपुरदास को शीघ्र ही छोड़कर लाए उस तुर्क ने त्रिपुरदास से कहा – "तुम अपने घर जाओ।" त्रिपुरदास ने कहा – "अब तो रात्रि बहुत हो गई है, सुबह जाऊँगा।" उस तुर्क ने त्रिपुरदास से कहा – "तू यहाँ रात्रि में रुक कर किसी के प्राण लेना चाहता है, क्या ?" अभी अभी इसी समय यहाँ से अपने घर के लिए रवाना हो जाओ। त्रिपुरदास अपने घर आ गए।

[प्रसङ्ग–२]

फिर कितने ही दिन पीछे त्रिपुरदास उसी तुर्क के साथ पुनः अटक गए। एक दिन रसोइया ने त्रिपुरदास से कहा – जो चरणोदक महाप्रसाद निपट (समाप्त हो) गया है। थोड़ा भी शेष नहीं है। त्रिपुरदास ने रसोइया से कहा – "तू ने हमसे पहले क्यों नहीं कहा ? हम चरणोदक महाप्रसाद मँगा देते। अब क्या करें ?" रसोइया चुप रह गया। प्रातःकाल उठकर त्रिपुरदास उस तुर्क के दरबार में जाने लगे तो रसोइया से कहा – "रसोई करके श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित कर देना और प्रसाद ले लेना, हमारी प्रतीक्षा मत करना। मेरा आना नहीं होगा।" मन में यह भी निश्चय किया "जब तक यह देह चलेगी तब तक काम काज करना होगा। जब देह नहीं चलेगी तो पड़ा रहूँगा लेकिन

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

चरणोदक महाप्रसाद लिए बिना जल पान नहीं करूँगा।'' यह निश्चय करके तुर्क के दरबार में गए। इधर रसोइया ने स्नान किया और रसोई बनाने लगा। जब उसकी आधी रसोई बन गई इतने में एक लडका, जिसकी उम्र लगभग दस वर्ष की होगी, तीन थैली लाया। एक थैली में चरणामृत, अन्य एक थैली में श्री आचार्य जी महाप्रभु का चरणामृत तथा एक थैली में श्री नाथजी का महाप्रसाद, वे तीनों थैली उस लड़के ने रसोइया को दीं और कहा – ''ये तीनों थैली त्रिपुरदास ने भेजी हैं।'' थैली देकर लड़का तुरन्त ही चला गया। रसोई सिद्ध हो गई। तब श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया, फिर समयानुसार भोग सराया। रसोइया ने त्रिपुरदास को बुलाने के लिए एक आदमी भेजा लेकिन त्रिपुरदास नहीं आए। जब दो-तीन बार आदमी बुलाने को भेजा तो त्रिपुरदास ने पुछवाया कि उसे रसोइया क्यों बुलाता है ? वह तो बिना चरणामृत महाप्रसाद ग्रहण किए, जलपान नहीं करेगा। रसोइया ने उनसे कहवाया कि चरणामृत महाप्रसाद तो उन्हीं ने भिजवाया है। एक लड़का लगभग दस वर्ष की उम्र का, तीन थैली दे गया है। त्रिपुरदास ने आकर उससे पूछा – ''वह लड़का कहाँ है ?'' तब उसने अपने आपको धिक्कारा – ''मैंने ऐसा हठ क्यों किया ? जो श्री ठाकुर जी को श्रम करना पड़ा।'' इस प्रकार वह बहुत धिक्कारने लगा कि श्री ठाकुर जी से उसने बहुत श्रम कराया है। फिर स्नान करके चरणामृत महाप्रसाद लिया। इसके बाद श्री ठाकुर जी को समर्पित किया हुआ महाप्रसाद ग्रहण किया।

[प्रसङ्ग-३]

पुनः कुछ दिनों के बाद त्रिपुरदास की चाकरी (नौकरी) छूट गई। शीतकाल के दिन आए, श्री नाथ जी को कवाय (रजाई) भेजे तो कैसे भेजे। इतनी सामर्थ्य घर में भी नहीं थी। प्रतिवर्ष श्री नाथ जी के लिए रजाई भेजी जाती थी। त्रिपुरदास बहुत चिन्तित हुए। उनके घर में एक पीतल की दवात थी, उसे बेचकर, उसके दामों से गजी (रजाई का कपड़ा) मँगाई और उसे रँगाया। उसकी रजाई बनाकर श्री नाथ जी को रजाई भेजी। रँगी हुई रजाई देखकर भण्डारी ने भण्डार में डाल दिया। कुछ दिन बाद श्री गुसाँई जी श्री नाथजी द्वार पधारे। जब श्री गुँसाई जी श्री नाथ जी का शृङ्गार करने लगे तो श्री नाथ जी ने कहा – ''मुझे शीत बहुत लगती है।'' श्री गुसाँई जी ने दूसरी अँगीठी मँगाई। दूसरी अँगीठी के आने पर भी कहा – ''मुझे शीत लगती है।'' श्री गुसाँई जी ने तीसरी अँगीठी मँगाई फिर भी यही कहा – ''मुझे शीत बहुत लगती है।'' तब तो श्री गुसाँई जी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

ने भण्डारी को बुलाया और उससे पूछा – ''किन-किन वैष्णवों की रजाइयाँ आई है।'' तब जिस जिस भी वैष्णव की रजाई आई थी, उस उस का नाम लेकर बताया। श्री गुसाँई जी ने कहा – ''त्रिपुरदास की रजाई नहीं आई ?'' भण्डारी ने कहा – ''त्रिपुरदास की एक रंगीन रजाई आई है। सो भण्डार में पड़ी है।'' श्री गुँसाई जी ने कहा – ''वह रंगीन रजाई लाओ।'' भण्डारी ने उस रंगीन रजाई को लाकर श्री गुसाँजी को बताया। वह कुछ मैली सी हो रही थी अत: श्री गुँसाई जी ने उ े झाड़ पोंछकर दरजी से उस पर मगजी सिद्ध कराई। वह रजाई श्री नाथ जी को ओढाई तो श्री नाथ जी ने कहा – ''हाँ, ओ अब शीत की निवृत्ति हुई है।'' श्री नाथ जी अपने भक्त के ऐसे पक्षपाती हैं और भक्तिभाव की वस्तु को इस प्रकार प्रेम से अङ्गीकार (स्वीकार) करते है। वे त्रिपुरदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, अत: इनकी वार्ता कहाँ तक लिखें।

अथ पूरनमल खत्री की वार्ता

[वैष्णव-२९, प्रसङ्ग-१]

पूरनमल खत्री के पास धन बहुत था। उसे श्रीनाथ जी की आज्ञा हुई – ''तू मेरा मन्दिर संभलवा दे।'' पूरनमल श्री आचार्य जी महाप्रभु के पास आया और कहा – ''महाराज, मुझे श्रीनाथ जी ने मन्दिर सँभलवाने की आज्ञा दी है।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – ''मन्दिर तो शीघ्र ही सँभलवा दो।'' पूरनमल ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से नामग्रहण किया। फिर मन्दिर उठाने (बनवाने) लगा तो उसका समस्त द्रव्य नींव खोदने में ही लग गया। जब सारा द्रव्य खर्च हो (निपट) गया तो वह (पूरनमल) पूर्व में चाकरी के लिए चला गया। इसके बाद कुछ राजसी (राजा से सम्बंध रखने वाले) लोगों ने कहा – ''महाराज, आज्ञा हो तो हम मंदिर को सँभलवा दे।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने श्री नाथ जी से पूछा – ''महाराज ये राजसी लोग मन्दिर सँभलवाने को कहते हैं। आपकी क्या आज्ञा है?'' श्री नाथजी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा – ''जब पूरनमल आएगा, वहीं मन्दिर को सँभलाएगा।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने राजसी लोगों की सेवा को स्वीकार नहीं किया। कुछ दिन बाद पूरनमल पूर्व से बहुत द्रव्य कमाकर लाया। पूरनमल ने कितने ही दिनों बाद मन्दिर को सँभलाया। फिर श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अच्छा मुहूर्त देखकर श्री ठाकुर जी को पाट (सिंहासन) बैठाया। उस समय पूरनमल ने बहुत द्रव्य खर्च किया।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

[प्रसङ्ग-२]

पुनः श्री गुसाँई जी श्रीनाथ जी द्वार पधारे तो पूरनमल श्री नाथजी के दर्शन के लिए आया। उसने अत्यन्त आनन्द से दर्शन किए। श्री गुसाँई जी ने कहा - "पूरनमल तेरे मन में और कुछ मनोरथ है, उसे प्रकट कर मन में मत रख।" पूरनमल ने श्री गुसाँई जी से कहा - "महाराज, मेरे मन में एक मनोरथ है, जो अति सुगन्ध से परिपूर्ण अरगजा अपने हाथ से श्रीनाथजी को समर्पित करूँ।" श्री गुसाँई जी ने उसे आज्ञा दी जा समर्पण कर दे। पूरनमल ने अत्युत्तम सुगन्धित अरगजा करके श्री नाथ जी को समर्पित किया। इससे पूरनमल का मन बहुत प्रसन्न हुआ। पूरनमल श्री नाथ जी के पास से पुनः श्री गुसाँई जी के समीप आए तो श्री गुसाँई जी पूरनमल के ऊपर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने अपना उपरना (दुपट्टा) पूरनमल को ओढाया। इससे पूरनमल ने अत्यन्त आनन्द का अनुभव किया। श्री गुसाँई जी ने श्री नाथ जी को पञ्चामृत से स्नान कराया। अङ्गवस्त्र करके सेवा शृङ्गार किया और रसोई करके भोग समर्पित किया। समयानुसार भोग सराने के बाद श्री गुसाँई जी ने श्री नाथ जी का प्रसादी गद्दर पूरनमल को ओढाया। इस प्रकार प्रतिवर्ष प्रसादी गद्दर, श्री गुसाँई जी, पूरनमल को देने लगे। वे पूरनमल श्री गुसाँईजी तथा श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, इसलिए इनकी वार्ता (कथा) कहाँ तक लिखी जाए।

यादवेन्द्रदास कुम्हार की वार्ता

[वैष्णव-३०, प्रसङ्ग-१]

श्री आचार्य जी महाप्रभु तथा श्री गुसाँई जी जब परदेश को पधारते थे तो यादवेन्द्रदास इनके साथ सामग्री लेकर चला करता था। हंडवाई, कनात, बिना बाँस की छोटी रावटी तथा एक दिन का सीधा सामान आदि संग लेकर चला करते थे। रसोई की चाकरी सभी करते थे तथा रात्रि के समय पहरा दिया करते थे।

[प्रसङ्ग-२]

एक बार श्री गुसाँई जी गोकुल में विराज रहे थे। एक प्रहर रात्रि व्यतीत होने पर श्री गुसाँई जी ने कहा "इस समय मन्दिर की नींव खोदी जाए तो मन्दिर दृढ और मजबूत बने, यह इस समय ऐसा सुन्दर मुहूर्त है।" यों कहकर श्री गुसाँई जी तो पौढ गए। यादवेन्द्र दास ने एक प्रहर भर में नींव खोद दी, साफ-सुथरी करली। जब पिछली

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

रात्रि में श्री गुसाँई जी पौढ कर उठे तो मिट्टी का ढेर देखकर कहा – ''यह मिट्टी कहाँ की है?'' वैष्णवों ने कहा – ''यादवेन्द्र दास ने खोदी है।'' श्री गुसाँई जी ने यादवेन्द्र दास से पूछा – ''यह नींव तू ने खोदी है।'' यादवेन्द्र दास ने कहा – ''महाराज, रात्रि को उस समय आपने आज्ञा की थी, उसी समय खोदी है।'' नींव भी इतनी बड़ी और चौड़ी खोदी कि दस–पन्द्रह राज – मजदूर, एक महिने तक लगे रहे, तो भी पूर्णतः नहीं भरी जा सकती है। ऐसी सामर्थ्य यादवेन्द्रदास में श्री ठाकुर जी की कृपा से विद्यमान थी।

[प्रसङ्ग–३]

यादवेन्द्रदास ने श्री नाथ जी का कूआँ अपने ही हाथों से खोदा था और जो मिट्टी निकली उसकी ईंटें पकाईं। अपने हाथ से ही कूआँ की चिनाई करी। परन्तु जल खारा निकला। यादवेन्द्र दास सोरों गया, वहाँ श्री गंगा जी में से जल ले लेकर अंजलि भर कर डालने लगे और कहने लगे – ''उस कूए का जल आप जैसा मीठा करो।'' इस प्रकार कहकर तर्पण किया। इस प्रकार करते करते जब यह जान लिया कि अब जल मीठा हो गया। यादवेन्द्र दास श्री गंगा जी में से बाहर निकले और सीधे श्री नाथद्वार आए। उस कूए का जल श्री नाथ जी को अङ्गीकार कराया। श्री यादवेन्द्र दास श्री आचार्य महाप्रभु के ऐसे परम कृपा पात्र भगवदीय थे। इससे इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखा जाए।

अथ गुसाँईदास सारस्वत ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव–३१, प्रसङ्ग–१]

एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु के लिए एक ठाकुर जी का स्वरूप प्राप्त हुआ। वह स्वरूप गुसाँई दास के माथे पधरा दिया और कहा कि इसकी सेवा नीकी (भली) भाँति से करना। गुसाँईदास बहुत अच्छी तरह सेवा करने लगे। गुसाँईदास से श्री ठाकुर जी सानुभाव हो गए। बोलने लगे। कुछ दिन बाद गुसाँई दास ने एक वैष्णव से कहा – ''तुम यहाँ रहो तो हमको सहायता हो। हम तुम मिलकर सेवा करें।'' परन्तु उस ब्राह्मण ने ''हाँ'' नहीं की। एक दिन श्री ठाकुर जी ने गुसाँईदास से कहा – ''मुझे तू उस ब्राह्मण के माथे पधरा दे।'' इसके बाद वैष्णव से गुसाँईदास ने कहा – ''श्री ठाकुर जी की ऐसी आज्ञा हुई है कि मुझे उस वैष्णव के माथे पधरा दो।'' भगवद् इच्छा

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

ऐसी ही प्रतीत होती है। तब उस वैष्णव ने गुसाँई दास से कहा – "तुम क्या करोगे?" गुसाँई दास ने कहा – "मै तो बद्रिकाश्रम जाऊँगा। वहाँ मेरी देह छूटेगी।" तब उस वैष्णव ने कहा – "श्री ठाकुर जी की गति जानी नहीं जाती है, जो तुम्हारी देह वहाँ नहीं छूटी ओर तुम यहाँ पुनः आए तथा श्री ठाकुर जी को पुनः लेने लगे तो मैं वापिस नहीं दूँगा।" गुसाँई दास ने कहा – "श्री ठाकुर जी ऐसा तो नहीं करेंगे, कदाचित् ऐसा करेंगे तो तुम्हारे द्वार पर प्रहरी बनकर रहूँगा। श्री ठाकुर जी के दर्शन किया करूँगा।" यह सुनकर उस वैष्णव ने श्री ठाकुर जी को अपने यहाँ पधरा लिया। (भलीभांति) नीकी तरह से सेवा करने लग गया और गुसाँईदास बद्रीकाश्रम चले गए। वहाँ गुसाँईदास की देह छूट गई। जब उस वैष्णव ने गुसाँईदास की देह छूटने की सुनी तो वह और भी नीकी तरह से सेवा करने लगा। वह वैष्णव श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से उत्तम श्रेणी का वैष्णव हो गया। वे गुसाँई दास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, इसलिए उनकी कथा का विस्तार कहाँ तक लिखें।

अथ माधोदास भट्ट – काश्मीर के वासी – की वार्ता

[वैष्णव-३२, प्रसङ्ग-१]

माधोभट्ट पहले तो केशव भट्ट के सेवक थे। केशव भट्ट, श्री आचार्य जी महाप्रभु के पास आए। वे उनके पास बहुत दिन तक रहे। श्री आचार्य जी महाप्रभु कथा कहते और केशव भट्ट कथा सुनते थे। मधोभट्ट श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवकों के बीच में बैठते थे। भगवद् वार्ता होती। एक दिन केशवभट्ट ने माधोभट्ट से कहा – "तू मेरा साथ छोड़कर, वहाँ उन सेवकों के मध्य क्यों बैठता है? वहाँ बैठकर तू हँसी – ठिठोली करता है।" माधोभट्ट ने केशव भट्ट से कहा – "मुझे तुम्हारे साथ और तुम्हारी कथा से वहाँ की हँसी-ठिठोली अच्छी लगती है। इसलिए मै वहाँ जाता हूँ।" केशवभट्ट ने जान लिया कि अब यह हमारे काम का नहीं रहा, अब यह हमारे काम से गया। केशवभट्ट ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा – "मैंने आपके द्वारा श्री भागवत की कथा तो सुनी लेकिन कुछ बोध नहीं हुआ।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – "तुम मेरे बराबर बैठकर कथा सुनते हो और मुझे में जाति सम्बंध का भाव रखते हो, इसलिए तुम्हें कुछ भी बोध नहीं हुआ। माधोभट्ट को भागवत की स्फूर्ति हुई है। इसे दैवी सृष्टि का प्रकार ज्ञातव्य है।" जब श्री भागवत की कथा सम्पूर्ण हुई तो केशवभट्ट ने श्री आचार्य जी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

महाप्रभु से कहा – ''कुछ गुरुदक्षिणा ग्रहण करो।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – ''हम तो कुछ भी नहीं लेते हैं।'' केशवभट्ट ने कहा – ''मैं तुमको एक सेवक समर्पित करता हूँ।'' इस प्रकार केशवभट्ट ने माधोभट्ट को श्री आचार्य जी महाप्रभु को समर्पित कर दिया। केशवभट्ट, श्री आचार्य जी महाप्रभु से विदा होकर अपने देश को चले गए। बाद में, माधोभट्ट ने, श्री आचार्य जी महाप्रभु से नाम ग्रहण किया और समर्पण कराया।

[प्रसङ्ग–२]

पुनश्च, जिस ग्राम में माधोभट्ट रहते थे उसी ग्राम में एक बड़ा गृहस्थी भी निवास करता था। उसका एक बेटा था। वह मर गया तो गृहस्थी रोने लगा, और विलाप करने लगा। वह कहने लगा – ''यदि कोई इसे जीवित कर देगा, तो मैं भी जीवन धारण करूँगा, नहीं तो, मैं भी मरूँगा।'' इस प्रकार कहकर बहुत शोक करने लगा। वहाँ एक वैष्णव पेडे (पालकी)में जाता था। उस गृहस्थ को विलाप करते देखकर बोला – ''इस ग्राम में माधो जैसे भगवदीय निवास करते हैं, वे बड़े भगवदीय महापुरुष है, तू उनके पास जा, वे कृपा करेंगे तो तेरा लड़का जीवित हो जाएगा।'' तब तो वह गृहस्थ माधोभट्ट के पास आया और बहुत विलाप करने लगा। वह माधोभट्ट से बोला – ''यदि मेरा यह लड़का जीवित हो जाएगा तो मैं भी जी लूँगा, नहीं तो, मैं भी मर जाऊँगा।'' इस तरह उसे रोता देखकर माधोभट्ट को दया आ गई। उन्होंने मन में विचारा – ''यदि इस गृहस्थ का यह लड़का जीवित हो जाए तो बहुत अच्छा रहे। यह गृहस्थी अच्छा है। बहुत ही विलाप कर रहा है। दुख पा रहा है।'' इस प्रकार माधोभट्ट को बड़ा खेद हुआ। माधोभट्ट ने मन्दिर में जाकर श्री ठाकुर जी से विनती की और एक श्लोक श्री ठाकुर से कहा –

श्लोक – ''दयालोरसमर्थस्य दुखायैव दयालुता।
विश्वोद्धरण दक्षस्य सा तवैकस्य शोभते॥''

[अर्थ – विश्व का उद्धार करने में दक्ष दयालु की दयालुता सदैव असमर्थ के दुःखों को दूर करने के लिए होती है। वह दयालुता आपको ही शोभा देती है।]

यह श्लोक सुनकर श्री ठाकुर जी ने कहा – ''यह कितनी सी बात है, यदि तुम्हें उस पर दया आई है तो उससे कह दो कि तुम्हारा बेटा जीवित हो जाएगा।'' फिर तो माधोभट्ट श्री ठाकुर जी को पौढा कर बाहर आए और उस गृहस्थ से कहा – ''जा, तेरा

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

बेटा जीवित हो जाएगा।" परन्तु उस गृहस्थ को विश्वास नहीं हुआ। उसने मन में विचार किया – "जीवित नहीं हुआ तो मैं क्या करूँगा?" मुख से तो कुछ भी नहीं बोला लेकिन उसके मन में विश्वास नहीं हुआ। इतने में ही घर के लोग दौड़कर आए और बोले – "तेरा बेटा जीवित हो गया है, उसकी बधाई दो।" तब तो उस गृहस्थ ने माधोभट्ट को दण्डवत किया और घर आकर बधैया को बधाई दी। बहुत हर्षित हुआ। बाद में माधोभट्ट ने अपने मन में विचार किया – "यह बहुत अनुचित किया अब ये लोग इसी प्रकार से नित्य दुःखी हुआ करेंगे। अतः अब इस ग्राम में नहीं रहना चाहिए।" यह विचार करके आधीरात के व्यतीत होने पर श्री ठाकुर जी को जगाकर सम्पुट झापी (कटोरदान) में पधराकर, तुरन्त ही ग्राम को छोड़कर चल दिए। वहाँ से वे अडेल में आकर श्री आचार्य जी महाप्रभु के पास आकर रहे। दया के आने से स्थल छूटा और आधीरात के समय श्री ठाकुर जी को जगाकर वहाँ से भागना पड़ा। इसलिए भगवदीय जो भी काम करे वह विचार करके ही करे, सर्वथा नहीं करे।

[प्रसङ्ग-३]

श्री आचार्य जी महाप्रभु श्री भागवत की सुबोधिनी का व्याख्यान करते और माधोभट्ट वेग से लिखते जाते थे। जिस स्थल पर उनकी (माधोभट्ट को) समझ में नहीं आता था, वहाँ लेखनी छोडकर बैठ जाते। तब श्री आचार्य जी महाप्रभु, माधोभट्ट को समझाकर अर्थ कहते थे। माधोभट्ट समझकर के ही आगे लिखते थे। माधोभट्ट श्री आचार्य जी महाप्रभु के सामने इस भाँति से बैठते थे कि उनका पाँव श्री आचार्य जी महाप्रभु को दिखाई न दे। ऐसी सावधानी से रहते थे।

[प्रसङ्ग-४]

अन्यच्च, एक बार श्री आचार्य जी महाप्रभु परदेश पधारे तो माधोभट्ट भी उनके साथ थे। तब श्री आचार्य जी महाप्रभु पेड़े में एक गाँव में उतरे। रात में डेढ प्रहर बीतने पर माधोभट्ट गाँव से बाहर लघुशङ्का के लिए गए। वहाँ चोरों ने तीर चलाया, वह माधोभट्ट को लगा। श्री आचार्य जी महाप्रभु का नामोच्चारण करते हुए माधोभट्ट ने वहीं देह छोड़ दी। इतने में ही श्री आचार्य जी महाप्रभु के साथ के वैष्णव आ गए। उन्होंने देखा माधोभट्ट की देह छूट गई है। वैष्णवों को बड़ा सन्देह हुआ कि माधोदास जैसे वैष्णव की ऐसी गति क्यों हुई? साथ के वैष्णवों ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से पूछा – "महाराज, यह क्या बात है? माधोदास जैसे वैष्णव की ऐसी गति क्यों कर हुई?" श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

आचार्यजी महाप्रभु ने वैष्णवों से कहा – ''माधोदास ने तो श्री ठाकुर जी के चरण चाँपे (सेवा की), इसलिए इनके लिए कोई कर्तव्य शेष नहीं रहा। परन्तु इनसे एक भगवद अपराध बन पड़ा था।'' वैष्णवों ने पूछा – ''महाराज, ऐसा क्या अपराध बना ?'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – ''यह माधोदास पहले श्री ठाकुर जी की शैय्या केऊपर फूल बिछाया करते थे। एक दिन बिना जाने ही फूलों में सूई रह गई, माधोदास ने इसे जाना भी नहीं। उस सूई का स्पर्श श्री ठाकुर जी के अङ्ग से हुआ। वह अपराध ऐसा बना तथापि इसकी देह सावधानता से छूटी है। इसने भगवन्नाम का स्मरण किया है। श्रीनाथ जी के निकट देह छूटी है। मेरी मान-मर्यादा का ध्यान रखते हुए श्रीनाथजी बुरी गति कभी नहीं करेंगे। अपने ही पास रखेंगे। यह वचनामृत श्री आचार्यजी महाप्रभु ने अपने श्री मुख से कहा।'' अत: वैष्णवों को श्री ठाकुर जी की सेवा नीकी भाँति से सावधानी पूर्वक करनी चाहिए। वे माधोदास भट्ट श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, इनकी वार्ता का उल्लेख कहाँ तक किया जाए।

अथ गोपालदास की वार्ता

[वैष्णव-३३, प्रसङ्ग-१]

गोपालदास ने राहगीरों के लिए अपने घर के पास विश्राम के लिए स्थल बनाया हुआ था। उसका प्रमुख हेतु था कि कोई वैष्णव भगवद्भक्त आकर ठहरे तो, वहाँ उससे भगवद वार्ता हो सके। एक समय उज्जैन के निवासी पद्म रावल द्वारिका से लौट रहे थे, वे रात्रि को उस गाँव में आए और विश्रामस्थल पर ठहरे। गोपालदास सेवा से निवृत्त होकर पद्म रावल के पास आए। उनसे पूछा – ''तुम कहाँ से आए हो ?'' पद्मरावल ने कहा ''हम द्वारिका से आए हैं।'' गोपालदास ने श्री रणछोड़ जी के कुशल समाचार पूछे। पद्मरावल ने वहाँ के समाचार गोपालदास को सुनाए। फिर पद्मरावल की बाल्यावस्था की चर्चा हुई। पद्मरावल द्वारिका में बहुत दिन रहे थे। वे रणछोड़ जी के दर्शन किया करते थे। जब खर्च के लिए द्रव्य (खर्च हो जाता) तो अपने घर आते। उनके यजमान आजन कुनवी गाँव के निवासी मावजी पटेल थे। जब पद्मरावल द्वारिका से लौटकर आते, तब मावजी पटेल उन्हें खर्चे के लिए द्रव्य देते, उसे लेकर वे पुन: द्वारिका जी चले जाया करते थे। इस प्रकार एक वर्ष में तीन बार द्वारिका जाते थे। उन्हें श्री रणछोड़जी से बहुत आसक्ति थी। पद्मरावल ने

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

रणछोड़ जी की वार्ता गोपालदास के आगे कही। गोपालदास ने अपने मन में विचारा कि जैसी पद्मरावल के लिए श्री रणछोड़ जी के दर्शन में आसक्ति है, वैसी यदि श्री आचार्य जी महाप्रभु के विषय में हो तो इनका मनोरथ सिद्ध हो। अतः इनसे इस विषय में कुछ कहना चाहिए। तब गोपालदास ने पद्मरावल से पूछा – ''तुमसे कभी श्री रणछोड़ जी ने कुछ बातें की हैं। तुमसे वे कुछ बोलते हैं, माँगते हैं।'' पद्मरावल ने कहा – ''मुझसे तो कभी भी नहीं बोले, कुछ भी नहीं कहा।'' पद्मरावल ने गोपालदास से पुनः पूछा – ''क्या रणछोड जी किसी से बोलते है ?'' गोपालदास ने कहा – ''हाँ–हाँ, बोलते हैं।'' तब गोपालदास ने उनसे श्री आचार्य जी महाप्रभु की वार्ता कही। यह भी कहा कि श्रीरणछोड़ जी इतने दिन से हैं। (दर्शनादि द्वारा उनकी भक्ति की है) और श्री रणछोड़ जी श्री आचार्य जी महाप्रभु कहाँ हैं ?'' तब गोपालदास ने कहा – ''वे तो अडेल में हैं।'' पद्मरावल ने पूछा – ''जैसे दर्शन श्री रणछोड़ जी देते हैं, वैसे वे भी मुझे दर्शन देंगे ?'' गोपालदास ने कहा – ''हाँ, वे भी दर्शन देंगे।'' अब तो पद्मरावल के मन में विश्वास जाग्रत हो गया। पद्मरावल के मन में श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन पाने की आतुरता हो गई। मैं कब श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन पाऊँगा ? वे रात को वहीं रहे। प्रातःकाल गोपालदास से विदा होकर चले। मार्ग में विचार करने लगे – ''मै कब जाऊँ ? कब श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन प्राप्त करूँ ?'' यह सोचते सोचते अपने घर उज्जैन आ गए। चित्त में भारी आतुरता रही और उदासी भी रही। वे मावजी पटेल से मिले मावजी पटेल ने पूछा – ''गुरू जी, इस बार आपका मन प्रसन्न नहीं है, क्या बात है ?'' पद्मरावल ने गोपालदास से जो कुछ सुना था, वह सब मावजी पटेल को सुना दिया। यह भी कहा कि श्री रणछोड़ जी अडेल में प्रगट हुए हैं, मेरा मन उनके दर्शन करने के लिए आतुर है। न जाने कब दर्शनों का संयोग बनेगा ?'' मावजी पटेल ने कहा – ''तुम श्री रणछोड़ जी के दर्शन करने के लिए जाते हो तो मुझे भी अपने साथ ले चलो।'' पद्मरावल ने कहा – ''तुम तो राजसी लोग हो, तुम्हारे साथ बहुत लोग होंगे। दर्शन तो एकान्त भाव के है अतः मुझे तुम्हारा प्रस्ताव रुचिकर नहीं लग रहा है। मावजी ने कहा – ''मैं तो तुम्हारे साथ अकेला ही चलूँगा।'' पद्मरावल ने प्रस्ताव की स्वीकृति दे दी। माव जी पटेल ने अपनी स्त्री से कहा – ''मैं तो पद्मरावल के साथ अडेल दर्शन करने जा रहा हूँ।'' मावजी पटेल की स्त्री ने कहा – ''वहाँ क्या है ?'' मावजी पटेल ने कहा – ''वहाँ श्री वल्लभाचार्य जी प्रगट हुए हैं। वे साक्षात् श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

रणछोड़ जी ही प्रकट हैं। जैसे श्री रणछोड़ जी दर्शन देते हैं वैसे ही श्री आचार्य जी महाप्रभु दर्शन देते हैं।'' यह सुनकर मावजी पटेल की स्त्री के मन में बहुत उत्साह हुआ। उसने कहा - ''यह सुनकर मावजी पटेल की स्त्री मन में बहुत उत्साह हुआ। उसने कहा - ''आपके साथ, मैं भी चलूँगी।'' मावजी पटेल ने कहा - ''मैं तो अपने पैरों से चलूँगा, तू कैसे चलेगी?'' तब स्त्री ने कहा - ''मैं भी अपने पावों से चलूँगी, मेरी गोदी में कोई लड़का तो है, नहीं, जो मुझे चला नहीं जाएगा।'' मावजी पटेल ने कहा - ''यदि हम-तुम दोनों ही चलेंगे तो घर किसके भरोसे रहेगा?'' स्त्री बोली - ''मेरा घर से कुछ भी प्रयोजन नहीं हैं, मैं तो सर्वथा आपके साथ चलूँगी।'' मावजी पटेल ने मन में विचारा कि इसे दर्शनों की बहुत आतुरता है। इसका भी मनोरथ सिद्ध होना चाहिए। यह सोचकर घर की व्यवस्था, किसी भले मनुष्य को सौंपकर मावजी पटेल, उसकी स्त्री बिरजो और पद्मरावल तीनों ही चल दिए। जब प्रयाग पहुँचे तो दूर से ही अडेल के दर्शन हुए। तीनों को बहुत आतुरता हुई। उस समय श्री आचार्य जी महाप्रभु, श्री यमुना जी पर संध्या वन्दन कर रहे थे। उनके समीप दो-चार सेवक भी थे। इन तीनों को श्री आचार्य जी महाप्रभु का दर्शन हुआ। अब तो इन्हें अत्यधिक आतुरता हुई। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने इन्हें देखा और अपने सेवकों से कहा - ''यह नाव पार ले जाओ, पद्मरावल श्री रणछोड़ जी के सेवक आए है। इन तीनों को नाव में बैठाकर शीघ्र ही ले आओ।'' वैष्णव लोग नाव लेकर पार गए। उन्होंने कहा - ''पद्मरावल आदि तीन जने जो भी हों, वे शीघ्र आओ, श्री आचार्य जी महाप्रभु ने उन्हें लेने हेतु नाव भेजी है। यह सुनक पद्मरावल, मावजी पटेल और उनकी स्त्री विरजो, तीनों ही नाव में बैठकर यमुना जी के पार पहुँच गए। वहाँ उन्हें श्री आचार्य जी महाप्रभु का दर्शन हुआ। पद्मराव ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से नाम ग्रहण किया। नाम पाकर उठे तो पद्मरावल ने प्रसन्न होकर कहा -''तू क्या कहता है?'' पद्मरावल ने कहा - ''मुझे गोपालदास ने कहा है, इसलिए निवेदन कराइयेगा।'' पद्मरावल ने विनती करके यह भी कहा - ''महाराज, मावजी पटेल और मावजी पटेल की स्त्री विरजो, ये दोनों भी आपकी शरण में आए हैं। अतः इनको भी नाम निवेदन कराइयेगा।'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु भीतर पधारे और पद्मरावल से कहा - ''तुम महाप्रसाद यहाँ ही लेना।'' पद्मरावल ने विनती करके कहा - ''महाराज, मुझे आपने रणछोड़ जी के रूप में दर्शन दिया है अतः आप उस स्वरूप से आरोगोगे, मैं तभी धन्य होऊँगा।'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

का दर्शन, भोजन करते समय, श्री रणछोड़ जी का दर्शन हुआ। पद्मरावल ने साक्षत् श्री रणछोड़ जी को प्रसाद आरोगते देखा। अब तो पद्मरावल को दृढ विश्वास हो गया। श्री आचार्य जी महाप्रभु जब भोजन करके विराजे तब महाप्रसाद की पत्तल पद्मरावल को कृपा करके प्रदान की। पद्मरावल ने हाथ जोड़कर विनती की - "महाराज, मेरे लिए क्या आज्ञा है ?" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "तुम श्री ठाकुर जी की सेवा करो।" पद्मरावल ने कहा - "महाराज, जैसा मेरा मन आपके स्वरूप का दर्शन करने में लगा है, ऐसा मन श्री ठाकुर जी की सेवा मै लगे तो ही सेवा हो सकती है।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "तुम श्री ठाकुर जी की सेवा करो। तुम्हारा सम्पूर्ण मनोरथ श्री ठाकुर जी पूर्ण करेंगे।" तब पद्मरावल, श्री आचार्य जी महाप्रभु से विदा लेकर अपने देश को चले गए। पद्मरावल अपने देश में जाकर श्री ठाकुर जी की सेवा करने लगे। अपने सेव्य श्री ठाकुर जी की शैय्या बनवाई। शैय्या छोटी रह गई। श्री ठाकुर जी ने कहा - "इस शैय्या पर, मुझ पर सोया नहीं जाता है।" फिर पद्मरावल ने दूसरी शैय्या बड़ी बनवाई, उस पर श्री ठाकुर जी पौढने लगे और श्री ठाकुर जी सानुभाव प्रगट करने लग गए। एक बार पद्मरावल की स्त्री ने श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया। उसमें खीर उष्ण थी। श्री ठाकुर ने खीर में अपना श्री हस्त डाला, तो खीर बहुत उष्ण (तप्त) लगी। श्री ठाकुर जी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा और हस्त कमल दिखाया, जो लाल हो रहा था। उस समय पद्मरावल श्री आचार्य जी महाप्रभु के समीप बैठे थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पद्मरावल से कहा - "तेरी स्त्री ने श्री ठाकुर जी को उष्ण (तप्त) खीर समर्पित की है। श्री ठाकुर जी को ताती खीर समर्पित नहीं करनीं।" पद्मरावल ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा - "श्री ठाकुर जी ने एक मुहूर्त तक खीर (शीतल) क्यों नहीं होने दी।" इस पर श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "श्री ठाकुर जी तो बालक हैं। श्री ठाकुर जी को भोग धरे पीछे वे विलम्ब सहन नहीं कर सकें। इसलिए भोग धरें तो बहुत गर्म नहीं धरना चाहिए। पद्मरावल को श्री आचार्य जी महाप्रभु ने ऐसी आज्ञा दी और ऐसा अनुभव जनाया तो वह सावधान होकर सेवा करने लग गए। श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से श्री ठाकुर जी भी सानुभावता बताने (जताने) लग गए। जो उन्हें चाहता था, वे माँग लेते थे। अपनी सारी बातें कह देते थे। वे पद्मरावल गोपालदास के संग के कारण ऐसे भगवदीय थे, उनकी वार्ता कहाँ तक लिखें।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ पद्मरावल साँचौरा ब्रह्मण - उज्जैनवासी की वार्ता

[वैष्णव-३४, प्रसङ्ग-१]

वह पद्मरावल साँचौरा अडेल में आकर श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक हुए। उनका विवरण बाँसवाड़ा के निवासी गोपालदास की वार्ता में विस्तार से लिखा है। वे पद्मरावल जब अपने देश को जाने लगे तो उन्होंने श्री आचार्य जी महाप्रभु से विनती की – "महाराज, मैं तो बड़ा मूर्ख और जड़ हूँ। मैं कुछ भी नहीं जानता हूँ। मेरी ही जाति का एक ब्राह्मण महा कर्म जड़ है और स्मार्त है। वह मुझे बहुत दुख देता है।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपने चरणारविन्द का चन्दन और चरणामृत देकर कहा – "तुझे सम्पूर्ण सिद्धान्त रहस्य (ज्ञान) की स्फुरणा होगी।" उसने चन्दन और चरणामृत का सेवन किया उसे सम्पूर्ण सिद्धान्त की स्फुरणा (ज्ञात) हो गई। तब वे अपने देश में आए। उनसे बड़े बड़े ब्राह्मण प्रश्न पूछने लगे। जिन जिन ने भी उनसे प्रश्न किया, उन्होंने उस उस ब्राह्मण को यथा – तथ्य उत्तर दिया। पद्मरावल को श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से ऐसी विद्या (ज्ञान) की स्फुरणा हुई जो बड़े बड़े पण्डितों को जीतकर, उन्हें विदा किया। वे पण्डित पद्मरावल के प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सके।

[प्रसङ्ग-२]

अन्यच्च, पद्मरावल द्वारिका में श्री रणछोड़ जी के दर्शन करने हेतु चले, तो श्री रणछोड़ जी ने उनसे स्वप्न में कहा – "राजनगर में हमारा एक सेवक है, तुम उसके घर जाना और पाक (भोजन प्रसादी) सिद्ध करना।" पद्मरावल ने कहा – "महाराज, मैं तो उसे जानता भी नहीं हूँ और बिना बुलाए मैं किसके घर जाऊँ?" तब श्री रणछोड़ जी ने कहा – "वह तुम्हें स्वयं ही बुलाने के लिए आएगा।" इसके बाद श्री रणछोड़ जी ने अपने सेवकों से कहा – "पद्मरावल आएँगे, उनकी सेवा तू नीकी तरह करना। उन्हें अपने घर पधरा कर पद्मरावल को भली भाँति से रसोई करवाना।" उस सेवक ने कहा – "महाराज, मैं उनको कैसे जानूँगा?" श्री रणछोड़ जी कहा – "वे प्रसिद्ध हैं, तू उन्हें अपने आप ही जान जाएगा।" कुछ दिन बाद पद्मरावल वहाँ (राजनगर में) पहुँचे। गाँव के बाहर उतरे। उनके साथ एक विद्यार्थी था, उससे पद्मरावल ने कहा – "तू गाँव में जाकर कोरी (अन्न आदि) भिक्षा कर ला।" वह विद्यार्थी गाँव में गया और चार-पाँच घरों से कोरी भिक्षा माँग कर ले आया। इसके बाद पद्मरावल ने कहा – "तू जिस-जिस

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

घर से अन्न आदि माँगकर लाया, उस उस के यहाँ उसका दिया हुआ अन्नादि पुनः (वापिस) लौटा आ।'' वह विद्यार्थी जब पुनः वापिस लौटाने गया तो एक गृहस्थ ने कहा – ''तुम भिक्षा ले गए पुनः (लौटाने) क्यों आए हो?'' विद्यार्थी ने कहा – ''मैं क्या करूँ? हमारे बड़े गुरु हैं। उनकी आज्ञा का पालन करना हमारा धर्म है, अतः लौटाने आया हूँ।'' उस गृहस्थ ने पूछा – ''तुम्हारे गुरु का नाम क्या है?'' तब उस विद्यार्थी ने कहा – ''मेरे गुरु का नाम पद्मरावल है।'' वह गृहस्थ वही श्री रणछोड़ जी का सेवक था अतः विद्यार्थी के साथ चला आया। आकर पद्मरावल से कहा – ''मेरे घर पधारो।'' पद्मरावल ने कहा – ''मैं तो किसी के घर नहीं जाता हूँ।'' उसने कहा – ''मुझे तो श्री रणछोड़ जी की आज्ञा हुई है कि पद्मरावल जी को मैं अपने घर पधराऊँ। भली भाँति रसोई करने की व्यवस्था करूँ।'' पद्मरावल उसके साथ उसके घर पधारे। उसने भलीभाँति से रसोई बनाने की व्यवस्था की। पद्मरावल ने रसोई बनाकर श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया और बाद में प्रसाद ग्रहण किया। रात्रि में उसी के घर शयन किया। प्रातःकाल जब पद्मरावल चलने लगे तो श्री रणछोड़ जी के सेवक ने उन्हें रोकना चाहा, लेकिन वे रुके नहीं।

[प्रसङ्ग-३]

अन्य एक दिन आटा अधिक मिला और घृत थोड़ा मिला। अतः जितनी रोटी चुपड़ गई वे तो ऊपर रखीं और जो कोरी रह गईं, वे नीचे रखीं। श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया और कहा – ''महाराज, बिना चुपड़ी रोटी रहने देना, जो रोटियाँ चुपड़ गईं हैं, उनको आरोग लेना। श्री ठाकुर जी ने तो सभी रोटियों को आरोग लिया।'' फिर पद्मरावल जी से कहा – ''तू ने मेरे आगे बिना चुपड़ी रोटी क्यों धरी? मेरे आगे तो जो भोग धरोगे, मैं तो सभी को आरोगूँगा।'' बाद में जब महाप्रसाद लेने को बेठे तो रोटियों में अद्भुत स्वाद का अनुभव हुआ। जितनी रोटियाँ बचीं पद्मरावल ने, उन्हें साथ में बाँध लिया। नित्यप्रति जब भोग समर्पित करने के बाद प्रसाद ग्रहण करते तो उन रोटियों में से एक टूक अवश्य लिया करते थे। पाँच-सात दिन वहाँ रहकर श्री रणछोड़ जी से विदा होकर चले तो मार्ग में गोपालदास बाँसवाड़ा के घर आए। रात्रि में वहीं पर विश्राम किया। पद्मरावल ने गोपालदास से कहा – ''तुम्हारी कृपा से मुझे श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन हुए और तुम्हारी कृपा से उन्होंने मुझ पर कृपा की।'' वे पद्मरावल श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, उनकी वार्ता का उल्लेख कहाँ तक किया जाए?

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ पुरुषोत्तम जोशी - साँचौरा ब्राह्मण - की कथा

[वैष्णव-३५, प्रसङ्ग-१]

एक समय पुरुषोत्तम जोशी ने बनारस के लिए प्रस्थान किया। मार्ग में उज्जैन आया। वहाँ आकर उन्होंने पूछा - "पद्मरावल के बेटा, ऐसे क्यों हुए। वे तो बड़े सीधे सच्चे ब्राह्मण थे। फिर कृष्णदास ने सुना कि पुरुषोत्तम जोशी को अपने घर में पधराया। उन्हें भली भाँति से प्रसाद लिवाया। बहुत प्रसन्न हुए। चार दिन तक रहने के बाद पुरुषोत्तम जोशी ने अपनी स्त्री से पूछा - "क्या कृष्णभट्ट सो गए?" उसने कहा - "हाँ, सो गए है।" तब पुरुषोत्तम जोशी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु की वार्ता कही। कृष्णभट्ट ने सोचा - "पुरुषोत्तम जोशी ने मेरे सामने श्री आचार्य जी महाप्रभु की वार्ता नहीं कही। क्या कारण है ? मैं ही कुछ चर्चा चलाता हूँ।" जब श्री गोकुल जी पहुँचने में पाँच-सात दिन की विलम्ब शेष रही, तब कृष्णभट्ट ने प्रसङ्ग चलाया। पुरुषोत्तम जोशी घोड़े पर सवार थे। वे अत्यधिक विह्वल हो गए। तब कृष्णभट्ट ने पुरुषोत्तम जोशी की स्त्री से कहा - "एक और से इन्हें आप पकड़े रहो तथा दूसरी ओर से मैं पकड़ लेता हूँ।" कृष्णभट्ट ने पुनः वार्ता चलाई तो पुरुषोत्तम जोशी पुनः अत्यधिक विह्वल हो गए। उन पर घोड़े पर रहा नहीं गया अतः दोनों और से दोनों ने उन्हें पकड़ लिया। इस प्रकार करते करते अपनी मंजिल गोकुल पर पहुँच गए। जब पुरुषोत्तम जोशी को घोड़े से नीचे उतारने लगे तो वे बोले - "मुझे घोड़े से क्यों उतारते हो?" कृष्णभट्ट ने कहा - "आज की मंजिल गोकुल का मुकाम आ गया है, इसलिए उतारते हैं।" पुरुषोत्तम जोशी की मंजिल आने का आभास नहीं हुआ। वे तो भगवद् वार्ता में रसाविष्ट हो गए थे। सम्पूर्ण दिन व्यतीत हो गया लेकिन उन्हें तो प्रसाद लेने की भी खबर नहीं रही। ऐसा करते हुए कुछ दिन में श्री गोकुल जी में आ पहुँचे। वहाँ पुरुषोत्तम जोशी ने श्री गुसाँई जी के दर्शन किये पुरुषोत्तम जोशी से पूछा - "महाराज, कृष्णभट्ट के ऊपर ऐसी कृपा किस कारण से है?" श्री गुसाँई जी ने कहा - "इसका चाचा हरिवंश जी का संगी है। इसलिए इस पर ऐसी कृपा है।" तब तो पुरुषोत्तम जोशी का गर्व निवृत्त हो गया। वे बहुत प्रसन्न हुए। अब तो वे कृष्णभट्ट से स्वयं ही वार्ता पूछने लग गए। कितने ही दिनों तक श्री गोकुल जी में रहकर श्री गुसाँई जी से विदा होकर चल दिए। मार्ग में भगवद् वार्ता करते हुए उज्जैन में आ गए। दोनों जने बहुत ही प्रसन्न रहे। वे पुरुषोत्तम जोशी श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, इसलिए उनकी कथा को कहाँ तक लिखें?

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ जगन्नाथ जोशी की वार्ता

[वैष्णव-३६, प्रसङ्ग-१]

जगन्नाथ जोशी ने श्री ठाकुर जी को बागा पहनाकर सारा शृङ्गार किया और राजभोग का थाल आगे लाकर रखा। जगन्नाथ जोशी ने मन में विचारा कि श्री ठाकुर जी बागा धारण किये ही यदि आरोगेगे तो थाल छू (स्पर्श) जाएगा। श्री ठाकुर जी ने जगन्नाथ जोशी के मन की बात को जान लिया अतः थाल में लात मारकर उसे गिरा दिया। तब तो जगन्नाथ जोशी ने पुनः पाक करके शीघ्र ही थाल परोस कर श्री ठाकुर जी के आगे लाकर रखा। श्री ठाकुर जी ने पुनः लातमार कर थाल गिरा दिया। अतः पुनः तीसरी बार पाक करके श्री ठाकुर जी के सम्मुख थाल परोस कर रखा। तब भी श्री ठाकुर जी ने लातमार कर थाल को पटक दिया। तब चौथी बार पाक करने लगा। उस समय जगन्नाथ जोशी अधिक श्रमित हो गए। माथा नीचा करके विचार करने लगे - "मुझसे क्या अपराध हुआ है जो श्री ठाकुर जी भोग नहीं आरोगते हैं ? थाल को बार-बार गिरा देते है ?" फिर तो जगन्नाथ जोशी ने बार-बार विनती की। तब श्री ठाकुर जी ने कहा - "तू थाल को छूने से डरता है तो हमारे सामने थाल क्यों रखता है ?" इतना सुनकर जगन्नाथ जोशी एक दम चौंक उठे। पृथ्वी पर नाक रगड़कर बहुत मनुहार की ओर कहा - "महाराज, मैं तो कुछ जानता नहीं हूँ। मेरा अपराध क्षमा करें।" इसके बाद श्री ठाकुर जी ने भोग तो अरोगा लेकिन दो माह तब कोई बात नहीं की। जब जगन्नाथ दास ने बहुत विनती की तब बोलने लगे, ऐसा सरल भाव था।

[प्रसङ्ग-२]

जगन्नाथ जोशी श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित करते, उसमें ताती (तप्त) खीर बहुत समर्पण करते थे। श्री ठाकुर जी वैसी ही उष्ण खीर आरोगते थे। कितने ही दिन बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु गुजरात पधारे तो खिरालू में जगन्नाथ जोशी के घर उतरे। उन्होंने वहाँ श्री ठाकुर जी के दर्शन किए तो श्री ठाकुर जी के ओष्ठ लाल (रक्तिम) देखे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने श्री ठाकुर जी से पूछा - महाराज, आपके जिह्वा और ओष्ठ राते (रक्तिम) क्यों है ?" तब श्री ठाकुर जी ने कहा - "जगन्नाथ जोशी मुझ को ताती (तप्त) खीर उष्ण बहुत समर्पित करते हैं। मैं वैसी ही खीर को आरोगता हूँ।" तब जगन्नाथ जोशी से श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "तुम ताती खीर श्री ठाकुर जी को

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

क्यों समर्पित करते हो ?'' जगन्नाथ जोशी ने कहा – ''महाराज, हम तो कुछ जानते नहीं हैं, हमें तो ऐसा लगता है कि ताती खीर का भोग अच्छा होता है।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – ''खीर सुहाती परोसनी चाहिए, अधिक ताती नहीं परोसनी चाहिए।'' तब से जगन्नाथ जोशी सुहाती खीर परोसने लगे।

[प्रसङ्ग-३]

अन्यदा एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन करने के लिए जगन्नाथ जोशी अडेल के लिए रवाना हुए। मार्ग में अन्नकूट का दिन आया। उस समय उनके साथ एक सेवक था, उससे कहा – ''दाल-चावल-घृत-शक्कर आदि और कुछ भी नहीं मिला। उस सेवक ने आकर कह दिया कि गाँव में कुछ भी नहीं मिला है। हाँ यहाँ ज्वार तो मिलती है।'' तब जगन्नाथ जोशी ने कहा – ''भले ही ज्वार ही ले आओ।'' सेवक गाँव में गया और ज्वार ले ली। उसे छान-बीन कर कूट फटक चुन कर साफ करके ले आए। जगन्नाथ जोशी ने ज्वार का ठोमर किया। तब उस सेवक ने कहा – ''जो भूसी निकली है, उसे टोकरा में करके ऊपर रखो, उसकी भाप (बाष्प) से जल्दी हो जाएगा।'' जगन्नाथ जोशी ने कहा – ''भले ही रख दो।'' अब तो ठोमर खदक ने लगा। उसी समय वह टोकरा उसमें गिर गया। सभी कुछ एक साथ मिल गया। इसे भगवदिच्छा समझकर जैसा भी बन पाया श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया। भोग सरा कर महा प्रसाद लिया। रात्रि के समय जब जगन्नाथ जोशी ने शयन किया, तो श्री ठाकुर जी ने कहा – ''मेरे पेटे में दर्द होता है।'' उसी समय जगन्नाथ जोशी ने सुतिवा (भुनी) सोंठ और अजवायन समर्पण किया, लेकिन मन में पश्चात्ताप बहुत हुआ। थोड़ी देर बाद श्री ठाकुर जी ने कहा – ''अब मेरे पेट में शान्ति है।'' यह सुनकर जगन्नाथ जोशी को सुख हुआ।

[प्रसङ्ग-४]

पुनः एक समय जगन्नाथ जोशी अपने सेव्य श्री ठाकुर जी का उत्थापन करके पास ही खड़े होकर श्री ठाकुर जी को मूँठा (पंखा) कर रहे थे। अन्य वैष्णव लोग दर्शन कर रहे थे। उसी समय एक गरासिया राजपूत आया। वह अवैष्णव था। वह आकर वैष्णवों में खड़ा हो गया। वहाँ एक वृद्धा फूल की माला लेकर आई। उसने वह माला दूर से ही श्री ठाकुर जी पर डाली। जगन्नाथ जोशी को इस कृत्य पर क्रोध आ गया। उन्होंने उस माला को वैष्णवों की ओर फैंका। वह माला एक वैष्णव के गले में

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

जा गिरी। यह देखकर उस गरासिया राजपूत को भी क्रोधावेश हुआ। उस राजपूत ने समझा था कि जगन्नाथ जोशी ने जानबूझ कर वह माला उस वैष्णव को दी और उसे नहीं दी। उसने मन में विचार किया कि मैं असली राजपूत की सन्तान होऊँगा तो जगन्नाथ जोशी को मोका पाकर ठौर मार दूँगा। वह राजपूत तलवार लेकर अवसर की तलाश में घूमा करता था। एक दिन उसका दाव लग गया। जगन्नाथ जोशी कहीं बाहर से घूमकर आ रहे थे तो उस राजपूत ने पीछे से तलवार का प्रहार किया। श्री ठाकुर जी ने अपने श्री हस्त से तलवार को रोक लिया और अपने श्री मुख से कहा – "इसे मत मार।" अब तो वह राजपूत रुक गया। जब जगन्नाथ जोशी ने पीछे फिरकर देखा तो श्री ठाकुर जी को श्रमित होते हुए पीछे खड़े देखा। तब जगन्नाथ जोशी ने उस गरासिया को फटकार कर कहा – "पापी, तूने यह क्या किया?" वह राजपूत बहुत शर्मिन्दा हुआ और तलवार पटकर कर जगन्नाथ जोशी के चरणों में गिर गया। उसने कहा – "मेरे ऊपर कृपा करिये, अनुग्रह करिये।" उसने जगन्नाथ जोशी के दोनों पैर अपने हाथों से पकड़ लिए। जगन्नाथ जोशी को उस पर दया आ गई। तब तो उसे क्षमा करके नामदान किया, निवेदन कराया, तब वह भला वैष्णव हुआ। वह दीन वैष्णवों के बीच में खड़ा हुआ था, उसका उसे यह फल सिद्ध हुआ। जगन्नाथ जोशी ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे। इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए?

अथ जगन्नाथ जोशी की माता की वार्ता

[वैष्णव-३७, प्रसङ्ग-१]

जगन्नाथ जोशी की माता के दो बेटे थे। बड़े थे नरहरि जोशी और छोटे जगन्नाथ जोशी। खिरालू गाँव के रहने वाले थे। इनकी माता ने इन दोनों भाइयों से कहा – "तुम जाकर श्री आचार्य जी महाप्रभु से नाम ग्रहण करो और समर्पण कराकर आओ।" दोनों ही बेटों के हाथ में एक-एक मुहर दी। वे उन मुहरों को लाठी में छुपाकर दोनों भाई अडेल के लिए रवाना हुए। कुछ दिनों में अडेल जा पहुँचे। श्री आचार्य जी महाप्रभु वहाँ पर विराजमान नहीं थे। वे पुरुषोत्तम क्षेत्र में श्री जगन्नाथ राय जी के दर्शनार्थ पधारे थे। इन दोनों भाइयों ने विचार किया कि हम बिना नाम पाये लौटकर अपने गाँव जाएँगे तो माता खीझेगी कि बिना नाम समर्पण के क्यों लौट आए? इसलिए हम भी दोनों पुरुषोत्तम क्षेत्र को ही क्यों नहीं चले जाएँ? यह विचार करके पुरुषोत्तम क्षेत्र के लिए

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

चल दिए। कुछ ही दिनों यें वे पुरुषोत्तम क्षेत्र जा पहुँचे। वहाँ पहुँचकर एक वैष्णव से पूछ लिया – "श्री आचार्य जी महाप्रभु कहाँ रहते है ?" उस वैष्णव ने उनका घर बता दिया। वहाँ पर ये दोनों भाई चले गए। श्री आचार्य जी महाप्रभु का दर्शन करके बैठ गए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पूछा – "तुम्हारी माता जी ठीक हैं ?" इन्हें यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि ये तो हमे जानते हैं। हमने तो पहले इनके कभी दर्शन भी नहीं किए थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने फिर पूछा – "श्री ठाकुर जी के दर्शन कर आए ?" तब इन दोनों ने कहा – "महाराज, हमने श्री ठाकुर जी के दर्शन नहीं किए।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने इन्हें आज्ञा दी – "जाओ, दर्शन कर आओ।" तब ये दोनों भाई दर्शन करने को गए। वहाँ इन दोनों ने देखा – "श्री आचार्य जी महाप्रभु, श्री जगन्नाथ जी के पास खड़े हैं।" इन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह क्या बात है ? अभी-अभी हम दोनों ने इन्हें घर पर देखा है। फिर मन में विचारा कि अन्य किसी लघु मार्ग से ये हमसे भी पहले यहाँ पहुँच गए होंगे। वे दर्शन करके बड़ी त्वरित गति से पुनः घर पहुँचे तो उन्हें घर में उसी स्थिति में पाया, जिसमें ये इन्हें यहाँ छोड़ गए थे। इन्होंने आकर श्री आचार्य जी महाप्रभु को दण्डवत् प्रणाम किया। दोनों भाई आश्चर्य से एक दूसरे का मुँह देखने लगे। तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – "दर्शन कर आए ? तुम्हारे मन का सन्देह भी निवृत्त हुआ या नहीं ?" वे बोले – "महाराज, सन्देह तो निवृत्त हो गया।" फिर श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – "तुम्हारी माता ने जो मुहर भेजी (पठाई) हैं, उन्हें लाओं।" तब लाठी में से मुहर निकाल कर सम्मुख रखीं। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने इन्हें नाम दिया, निवेदन कराया। अपना माहात्म्य इन दोनों भाइयों के सम्मुख इस प्रकार से प्रगट किया कि इन्हें स्वरूपासक्ति हुई। कुछ दिन यहाँ रहकर, फिर श्री आचार्य जी महाप्रभु से आज्ञा लेकर घर के लिए प्रस्थान किया। मार्ग में श्री आचार्य जी महाप्रभु के स्वरूप का चिन्तन करते हुए घर पहुँच गए। उन्होंने अपनी माता को सारा वृत्तान्त सुना दिया। उनकी माता बहुत प्रसन्न हुई। श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से भले भगवदीय हुए। इनकी वार्ता का वर्णन कहाँ तक करें ?

अथ नरहरि जोशी-जगन्नाथ जोशी के बड़े भाई - की वार्ता

[वैष्णव-३८, प्रसङ्ग-१]

एक समय नरहरि जोशी पुरुषोत्तम क्षेत्र में श्री जगन्नाथ जी के दर्शन करने के लिए

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

चले। वे अपनी, मंजिल पर पहुँचे और स्नान करके रसोई बनाई श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया। उन्होंने देखा – "एक दस वर्ष का बालक एक वृक्ष से नीचे उतरा और उनके पास आकर खड़ा हो गया।" उस बालक को देखकर नरहरि जोशी को बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह लड़का कहाँ से आया है ? उस लड़के ने हाथ फैला कर नरहरि जोशी से कुछ माँगा। नरहरि जोशी ने अपने मन में विचार किया – "यह सुन्दर लड़का मेरे सामने क्यों हाथ पसारता है, क्या माँगता है ?" तब नरहरि जोशी ने दो रोटी घी से चुपड़ कर उसके ऊपर दाल धर कर, बालक के हाथ पर धर दी। तब वह बालक इमली के ऊपर चढ गया। फिर नरहरि जोशी ने देखा तो बालक वहाँ नहीं था। फिर दूसरे दिन अपने स्थान पर पहुँचे। वहाँ स्नान करके, रसोई की और श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया। उसी प्रकार वह बालक वहाँ भी इमली के पेड़ से उतर कर नीचे आया। उसने उसी प्रकार हाथ फैलाया तो नरहरि जोशी को सन्देह हुआ। यह कोई छलिया है जो छल कपट करने आया है अथवा यदि श्री ठाकुर जी का स्वरूप है तो इसे प्रसादी कैसे दी जाए, यह सन्देह करके उसे कुछ भी नहीं दिया। वह बालक पुनः पेड़ पर चढ गया। नरहरि जोशी ने महाप्रसाद ग्रहण किया। श्री ठाकुर जी ने खिरालू में जगन्नाथ से कहा – "मैं नरहरि के पास गया था। मैंने हाथ फैलाकर के माँगा, लेकिन उसने मुझे कुछ भी नहीं दिया।" जगन्नाथ जोशी ने उसी समय दिन–वार–महीना सम्वत् का उल्लेख कर के रख लिया उन्होंने विचार कर लिया कि नरहरि लौटकर आएँगे तो उनसे पूछेंगे। कितने ही दिनों बाद नरहरि जोशी पुनः लौटकर अपने घर आए। वे अपनी माता जी और भाई से मिले। दूसरे दिन दोनों भाई सेवा में न्हाए (स्नान किया)। जगन्नाथ जोशी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु का कुशल समाचार पूछा। बाद में जगन्नाथ जोशी ने अपने लेख के अनुसार अमुक सम्वत् – महीना – वार में पटना से आगे के पेडे (मुकाम) में जब अपनी मंजिल पर उतरे तब स्नान करके श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया तो वहाँ किसी बालक को हाथ फैलाते हुए देखा था ?" नरहरि ने कहा – "हाँ एक दिन तो सुन्दर बालक देख कर दो रोटी घी से चुपड़ कर, ऊपर दाल धर कर दे दी थी। दूसरे दिन हमें कुछ सन्देह हुआ कि कोई छल करने को आया हो। इस लिए उसे कुछ भी नहीं दिया।" जगन्नाथ जोशी ने कहा – "तुमने बहुत बुरा किया वे तो श्री ठाकुर जी आप ही थे। आपको स्मरण है, जब हम दोनों भाई श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन को गए थे तब हमारी माता जी ने मुहर भेंट पठाई थीं, वे भी आपने सन्देह करके नहीं दी थी। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने आपने ही माँगी थी। इसलिए अपने मार्ग

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

में, श्री आचार्य जी महाप्रभु और श्री ठाकुर जी के ऊपर सन्देह नहीं करना चाहिए। अपने मार्ग में, श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवकों के लिए, उनके बल प्रताप से, उनके बिना कुछ भी सम्भव नहीं हैं।'' तब दोनों भाइयों के मन में दृढ निश्चय हुआ।

[प्रसङ्ग-२]

पुनः एक समय की बात है, नरहरि जोशी का एक यजमान अलियान गाँव में रहता था। उसका नाम महीधर जी था। उसकी बहिन का नाम फूलबाई था उनसे नरहरि जोशी ने कहा – ''श्री आचार्य जी महाप्रभु से नाम ग्रहण करो तथा वैष्णव हो जाओ।'' उन्होंने कहा – ''बहुत अच्छा, तुम श्री गुसाँई जी को यहाँ पधराओ।'' नरहरि जोशी आगे आकर श्री गुसाँई जी को अलियान में पधरा लाए। उन्होंने महीधर और फूलबाई से कहा – ''श्री गुसाँई जी पधारे है।'' यह सुनकर दोनों बहिन – भाई बहुत प्रसन्न हुए। महीधर ने नरहरि जोशी से कहा – ''मैं गुसाँई जी को खाली हाथों कैसे पधराऊँ?'' तब महीधर ने नरहरि जोशी से रुपया मुहरों की परचूनी और न्यौछावर करके श्री गुसाँई जी को अपने घर पधराया। इसके बाद महीधर ने फूलबाई तथा सब बाल गोपालों कुटुम्बी जनों को श्री गुसाँई जी से नाम दिलाया। भली भाँति श्री गुसाँई जी की सेवा करके उन्हें विदा किया। तत्पश्चात् श्री गुसाँई जी द्वारिका में पधारे और नरहरि जोशी खिरालू अपने घर आ गए। कितने ही दिनों बाद अलियान गाँव में आग लगी। उस समय नरहरि जोशी खिरालू में तालाब के ऊपर नित्य कर्म करके तुलसी फूल की डाली तथा झारी हाथ में लेकर अपने घर लौट रहे थे। अचानक उनके मन में भाव उठा कि अलियान गाँव में आग लगी हैं तब नरहरि जोशी अपने पंजों पर खड़े होकर तुलसी दल बीच में रखकर, झारी में से जल लेकर, अंजलि से तुलसी दल के पास पानी की धारा डालकर कुण्डली सी बनाई, इतने ही में अलियान में आग बुझ गई। महीधर जी की हवेली – घर आदि सब बच गए। बाद में कितने ही दिनों के बाद नरहरि जोशी अलियान में गए, तो फूल बाई ने नरहरि जोशी से कहा – ''यहाँ पर आग का उपद्रव बहुत हुआ था लेकिन श्री गुसाँई जी की कृपा से अपना तो कल्याण हुआ।'' नरहरि जोशी ने कहा – ''प्रभुवर की कृपा से तो कल्याण ही होता है। इतना कहकर नरहरि खिरालू आए। महाप्रसाद लेने के बाद दोनों भाई एकान्त में बैठे तब नरहरि जोशी ने जगन्नाथ जोशी से कहा – ''एक दिन मैं तालाब के ऊपर से नित्यकर्म करके, तुलसीफूल की डाली तथा झारी भर ला रहा था, ये मेरे हाथ में ही थे और अलियान गाँव में आग

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

लगी।'' यह सारी बातें नरहरि जोशी ने बताई। तब नरहरि जोशी से जगन्नाथ जोशी ने कहा - ''आपको इतना हठ नहीं करना चाहिए, आपने श्री ठाकुर जी से श्रम कराया। यह अपने मार्ग की रीति नहीं है।'' नरहरि जोशी ने कहा - ''मैंने हठ तो नहीं किया, लेकिन मेरे मन में एक बात आई कि ये अभी तो वैष्णव हुए है और अभी आग लगी, ये क्या विचारेंगे। इसीलिए मेरे मन में यह बात आई।'' यह सुनकर दोनों भाई मुस्करा कर चुप रह गए। फिर कहा - ''प्रभु बड़े कौतुकी हैं, इन्हीं की कृपा से भला होता है। अपने को हठ नहीं करना चाहिए। यह अपना धर्म नहीं है। श्री वल्लभ राजकुमार की अद्भुत लीला है। जो भी उनकी शरण में जाता है, उसी का कल्याण होता है।'' इस प्रकार वे नरहरि जोशी जगन्नाथ जोशी और उनकी माता ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, जिन्होंने परमार्थ के लिए यह सब किया। इनकी वार्ता का कोई अन्त नहीं है, कहाँ तक लिखें।

अथ राणा व्यास साचौरा ब्राह्मण - गोधरा के वासी - की वार्ता

[वैष्णव-३९, प्रसङ्ग-१]

उस जगन्नाथ जोशी ने पहले राणा व्यास से नाम ग्रहण किया था। फिर श्री आचार्य जी महाप्रभु से नाम पाया था, लेकिन जगन्नाथ जोशी अधिकतम राणा व्यास के पास ही रहते थे। एक बार भगवत् इच्छा से गोधरा की एक वैश्या ने राणा व्यास के साथ सत्संग किया। यह बात राजदरबार ने सुनी। राजा के सेवक राणा व्यास को लेने के लिए आए। जगन्नाथ जोशी ने राणा व्यास को किसी अन्य गाँव में भेज दिया और जगन्नाथ जोशी वहाँ अकेले रहे। राजा के सेवक वहाँ राणा व्यास को ढूँढने लगे। जगन्नाथ जोशी ने कहा - ''राणा व्यास तो यहाँ नहीं है। मैं चलता हूँ। जो पूछेंगे मैं उत्तर दूँगा।'' जगन्नाथ जोशी को हाकिम (अधिकारी) के सम्मुख लाकर खड़ा किया। अधिकारी ने पूछा - ''राणा व्यास कहाँ हैं ? उसने पराई स्त्री से अन्याय किया है। उसको लाओ। मैं जगन्नाथ जोशी को अच्छी तरह से पहचानता हूँ। जिसका नाम जगन्नाथ जोशी है, वह कभी अन्याय नहीं करेगा। यह अन्याय तो राणा व्यास ने किया है। इसलिए उसी को लाओ।'' जगन्नाथ जोशी ने कहा - ''मेरी बात सुनो तो मैं कहूँ।'' हाकिम ने कहने की आज्ञा दी तो जगन्नाथ जोशी ने कहा - ''राणा व्यास ऐसा काम कभी नहीं करते हैं।'' हाकिम ने कहा - ''इसे कैसे माना जाए ?'' जगन्नाथ जोशी ने कहा - ''यदि उन्होंने कुछ भी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अन्याय किया होता तो उसकी बदले में आप जो कुछ भी करना चाहे, वह मुझे आज्ञा दें, मैं करने को तैयार हूँ।'' हाकिम ने एक पहिया का मुगदर मँगाया और उसे आग में तप्त किया, जब वह सुर्ख लाल हो गया तो जगन्नाथ जोशी ने स्नान किया और उस मुग्दर के पास खड़ा होकर कहा - ''यदि राणा व्यास ने कोई भी अन्याय किया हो तो अग्नि मुझे जला कर भस्म कर दे, और यदि कोई अन्याय नहीं किया हो तो मुग्दर शीतल हो जाए।'' इसके बाद जगन्नाथ जोशी ने उस अग्नि में से सुर्ख लाल तप्त मुग्दर को हाथों से उठाकर गले (कन्धे) पर डालकर एक घड़ी भर रखा। वहाँ पर उपस्थित लोगों ने जोशी से उस मुग्दर को पृथ्वी पर पटक देने को कहा। जगन्नाथ जोशी ने कहा - ''मेरे कन्धे से उतार कर इसे किसके गले पर रखूँ।'' तब हाकिम ने कहा - ''इसे तुम मेरे गले पर डाल दो।'' जगन्नाथ जोशी ने उसे भूमि पर डाल दिया। जहाँ उसे पटका, वहाँ की समस्त पृथ्वी इधर-उधर से जल गई। सभी लोगों ने कहा - ''जगन्नाथ जोशी, तुम धन्य हो। तुम सच्चे हो। तुम्हें तुम्हारे धनी (स्वामी) का सच्चा भरोसा है।'' तब हाकिम ने जगन्नाथ जोशी से कहा - ''यदि आप प्रसन्न हैं तो मैं आपसे यह याचना करता हूँ कि जिसने यह चुगली की है, उसे क्षमा कर दीजिएगा, उससे कुछ भी नहीं कहें।'' यह सुनकर सभी लोग बहुत प्रसन्न हुए। इसके बाद जगन्नाथ जोशी अपने घर आ गए। जगन्नाथ जोशी ऐसे भगवदीय थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से क्या कुछ संभव नहीं है।

[प्रसङ्ग-२]

पूर्व में राणा व्यास ने माधवदास सारस्वत से नाम प्राप्त किया था, इसके बाद वे श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक हुए। तब तो परम वैष्णव ही हो गए। वे राणा व्यास सिद्धपुर में रहते थे। राणा व्यास और जगन्नाथ जोशी सरस्वती नदी में स्नान कर रहे थे। उसी समय एक राजपूतानी सती होने के लिए आई। राणा व्यास के निकट जगन्नाथ जोशी विद्यमान थे। राजपूतानी के साथ के लोगों ने पूछा - ''यह स्त्री सती होना चाहती है, सती होने का क्या प्रकार है ?'' तब राणा व्यास ने कहा - ''प्रेत के साथ इसे व्यर्थ क्यों जलाना चाहते हो ? यह स्त्री वास्तव में सती होने की इच्छा नहीं रखती है।'' तब उसके साथ के लोगों ने राजपूतानी की वास्तविक इच्छा जानना चाहा तो उसे सती होने से मना कर दिया। उसने कहा - ''मैं तो जलना नहीं चाहती हूँ। मुझे जलाने से तुम्हारे सिर पर मेरी हत्या चढेगी।'' तब उस स्त्री को नहीं जलाया और गाँव के बाहर उसकी एक झोंपड़ी बना दी। वह स्त्री वहाँ रही। इसके बाद राणा व्यास नदी पर स्नान करने आए तो उस स्त्री ने राणा व्यास से

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

कहा – "आपने अपना सिर हिलाकर जो कहा था उसके अधार पर ही मैं मृतक के साथ नहीं जली। कृपा करके बतावें कि आपने क्या कहा था?" राणा व्यास ने कहा – "हमने तो कुछ भी नहीं कहा। हम तो आपस में बातें कर रहे थे। हँसी भी कर रहे थे।" स्त्री के बार बार पूछने पर राणा व्यास ने कहा – "यह उत्तम देह प्राप्त करके प्रेत के साथ जलने से क्या लाभ है? इस देह से श्री ठाकुर जी की सेवा नहीं की, भजन नहीं किया तो देह धारण करने का कोई फल नहीं है।" स्त्री ने कहा – "मैं आपकी शरण में हूँ। मुझे श्री ठाकुर जी की सेवा का प्रकार बतावें ताकि यह देह श्री ठाकुर जी की सेवा में काम आ सके।" राणा व्यास ने कहा – "अभी तो तुम्हारे यहाँ सूतक है, जब सूतक उतरेगा तो उपाय बतावेंगे।" वह स्त्री प्रतिदिन राणा व्यास के दर्शन करती थी और सूतक निवृत्ति की प्रतीक्षा करने लगी। सूतक से निवृत्त होकर वह स्त्री राणा व्यास के पास आई। उस दिन उसने कुछ भी नहीं खाया। अन्य दिन तो वह चना चबाकर जलपान करती थी लेकिन उस दिन निराहार रही। दूसरे दिन प्रातःकाल राणा व्यास के आने की प्रतीक्षा में बैठी रही। राणा व्यास आए, उन्होंने स्नान करने का आदेश दिया। बाद में श्री आचार्य जी महाप्रभु का ध्यान करके उस स्त्री को नाम दिया। नाम सुनते ही उस स्त्री को भगवत् भाव जाग्रत हो गया। उस स्त्री ने राणा व्यास से कहा – "अब मैं क्या करूँ?" राणा व्यास ने कहा – "भगवत् सेवा करो।" उस स्त्री ने राणा व्यास से कहा – मुझे कुछ टहल (सेवा) करने को दें। राणा व्यास ने उपरना और परदनी धोने की सेवा दी। वह स्त्री प्रतिदिन उपरना और परदनी धोकर तथा सिद्ध करके पहुँचती रही। राणा व्यास के घर से प्रसादी लेती रही। बाद में तो राणा व्यास के घर का कामकाज करने लग गई। कितने ही दिनों के बाद राणा व्यास के घर श्री आचार्य जी महाप्रभु पधारे तो राणा व्यास ने उस स्त्री को श्री आचार्य जी महाप्रभु से नाम निवेदन करवाया। बाद में वह स्त्री परम वैष्णव हुई। राणा व्यास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे परम भगवदीय थे अतः इनकी कथा कहाँ तक लिखें।

अथ रामदास सारस्वत ब्राह्मण – राजनगर निवासी की वार्ता

[वैष्णव-४०, प्रसङ्ग-१]

रामदास जी के माथे (मस्तक) पर श्री आचार्य जी महाप्रभु ने श्री नटवर गोपाल जी और अपनी पादुकाजी सेवा के लिए पधाराई थी। वे उनकी भक्ति भाव से सेवा

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

करते थे। वे ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे। रामदास ने विवाह करने के बाद पृथ्वी की परिक्रमा करने का निश्चय किया। अत: कितने ही दिनों में पृथ्वी की परिक्रमा करके अपने घर लौटे। वे अपनी स्त्री को अङ्गीकार नहीं करते थे अत: दो-चार दिन रहकर पुन: द्वारिका के लिए चल दिए। उनके साथ उनकी स्त्री भी द्वारिका के लिए चली। लेकिन वे स्त्री को अपने साथ नहीं आने देते थे। वे उसे ईंटों से मारते थे। उनकी स्त्री दूर दूर ही चलती थी किन्तु साथ ही रही। रामदास की पत्तल में जो जूँठन बचती थी, उसे ही खा लेती थी। यदि जूँठन नहीं बचती भी तो भूखी ही रह जाती थी। लेकिन अपने पति के साथ ही रही। एक दिन श्री रणछोड़ जी ने रामदास से कहा - "तू अपनी स्त्री को अङ्गीकार कर, त्याग क्यों करता है ?" रामदास ने कहा - "मैं तो विरक्त हूँ, वैरागी हूँ, मेरा स्त्री से क्या प्रयोजन है ?" श्री रणछोड़ जी ने कहा - "तूने विवाह क्यों किया है ? तू श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक है, तुझे इतनी निष्ठुरता शोभा नहीं देती है। श्री आचार्य जी महाप्रभू तुझे अपना सेवक समझकर तुझ से कुछ भी नहीं कहते हैं। अब मैं तुमसे कहता हूँ - तुम अपनी स्त्री को अङ्गीकार करो।" तब तो रामदास ने अपनी स्त्री से कहा - "तू मेरे साथ साथ चली आ।" वह स्त्री अब रामदास के साथ साथ चलने लगी। जब वे अपने स्थान पर उतरे तो उन्होंने अपनी स्त्री से कहा - "तू वस्त्र-साज लेकर डेरा में बैठी रहना। मैं कंडे बीन कर लाता हूँ। छाणे बीनकर लाने के पश्चात् उन्होंने स्नान किया, रसोई की, श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया। भोग सराने के बाद प्रसाद ग्रहण किया और अपनी स्त्री को भी प्रसाद दिया। कितने ही दिनों तक मार्ग में चलते हुए यात्रा पूरी की। फिर एक दिन श्री रणछोड़ जी ने रामदास को आज्ञा दी - "तू अपनी स्त्री को नाम दान कर।" रामदास ने कहा - "बाबा, मैं कैसे नाम दान करूँ।" तब श्री रणछोड़जी ने कहा - "तू इसे नाम दे, मेरी आज्ञा है।" उसे श्री आचार्य जी महाप्रभु का नाम लेकर अपनी स्त्री को नाम दिया। तब वह अपनी स्त्री के हाथ का महाप्रसाद लेने लगा। कितने ही दिनों के बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु राजनगर पधारे तो रामदास ने आकर उनके दर्शन किए। रामदास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा - "महाराज, मेरी स्त्री को नाम समर्पण कराइए।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "जब तूने नाम दे दिया है, फिर नाम दान की क्या आवश्यकता है ?" रामदास ने कहा - "महाराज, मैंने तो श्री रणछोड़ जी की आज्ञा से नामदान किया है मुझे श्री रणछोड़ जी की यह भी आज्ञा है कि इसे श्री आचार्य जी महाप्रभु से नामदान कराना। यह सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु ने नाम निवेदन कराया।" फिर घर आकर गृहस्थाश्रम के

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अनुकूल आचरण करने लगे। रामदास, श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे। इनकी वार्ता को कहा तब लिखा जाए?

अथ गोविन्द दुबे-साँचौरा ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव-४१, प्रसङ्ग-१]

गोविन्द दुबे श्री ठाकुर जी की सेवा तो भलीभाँति करते थे लेकिन उनके मन में विग्रह (द्वन्द्व) बहुत था। एक दिन गोविन्द दुबे ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के पास विनती-पत्र भेजा। उसमें लिखा था - "महाराज, मेरे मन में विग्रह बहुत रहता है, क्या करूँ?" तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने नवरत्न ग्रन्थ प्रगट करके गोविन्द दुबे को भेजा और साथ ही पत्र में लिखा कि इस ग्रन्थ का नित्य पाठ करना सारी विग्रहता मिट जाएगी। पत्र को पढते ही गोविन्द दुबे ने "नवरत्न ग्रन्थ" का पाठ करना प्रारम्भ कर दिया। उनकी समस्त विग्रहता मिट गई और श्री ठाकुर जी की सेवा नीकी तरह करने लग गए।

[प्रसङ्ग-२]

एक बार गोविन्द दुबे मीरा बाई के घर थे। वहाँ मीरा बाई से भगवद्वार्ता करते हुए अटक गए। श्री आचार्य जी ने सुना कि गोविन्द दुबे मीरा बाई के यहाँ उतरे हैं और भगवद् वार्ता में अटके हुए है। तब श्री गुसाँई जी ने एक श्लोक लिखकर एक ब्रजवासी के हाथों भेजा। ब्रजवासी वहां पहुंचा तो गोविन्द दुबे संध्या वंदन कर रहे थे उस ब्रजवासी ने वह पत्र उसी समय उन्हें दे दिया। पत्र को बाँच (पढ) कर गोविन्द दुबे तत्काल उठे। तब मीराबाई ने बहुत समाधान किया, किन्तु गोविन्द दुबे ने पीछे फिर कर नहीं देखा।

[प्रसङ्ग-३]

अन्य, एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु स्वयं द्वारिका पधारे। उनके साथ गोविन्द दुबे, जगन्नाथ जोशी तथा अन्य पाँच-सात वैष्णव थे। उन्होंने श्री आचार्य जी महाप्रभु से विनती की - "महाराज, कुछ कथा - वार्ता कहो।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "अभी मुझे अवकाश नहीं है।" तब गोविन्द दुबे ने पुनः विनय पूर्वक आग्रह किया - "महाराज, थोड़ा सा प्रवचन तो श्रीमुख से करिए।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कथा कहने के लिए पोथी खोली। इतने में ही गोविन्द दुबे श्री रणछोड़जी से बातें करने लगे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "पुस्तक (पोथी) खुलवाकर किससे बाते

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

करता है ?'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने फिर कर देखा तो, उन्हें श्री रणछोड़ जी से बातें करते हुए देखा। तब आपने अपनी पोथी बाँध ली और आप पौढ गए।

[प्रसङ्ग-४]

सारे वैष्णव श्री आचार्य जी महाप्रभु के थाल का महाप्रसाद पाते थे। एक दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु ने खवास से कहा – ''तुम इन वैष्णवों को थाल का महाप्रसाद मत दिया करो।'' इसलिए उस दिन जैसे ही श्री आचार्य जी महाप्रभु प्रसाद प्राप्त करके उठे, वैसे ही खवास ने थाल छू कर माँज दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु के थाल का महाप्रसाद किसी भी वैष्णव को नहीं मिला। अतः उस दिन सभी वैष्णवों ने उपवास किया। श्री रणछोड़ जी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा – ''तुम इन वैष्णवों को थाल नित्य देते हो, वैसे ही इन्हें नित्य प्रति दिया करो।'' तब तो श्री आचार्य जी महाप्रभु ने गोविन्द दुबे ओर जगन्नाथ जोशी से पूछा – ''तुमने कल महा प्रसाद क्यों नहीं लिया ? भूखे क्यों रहे ?'' तब इन दोनों ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा – ''महाराज, कल आपके थाल का महाप्रसाद नहीं मिला।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – ''मैं तुम को अपने थाल का महाप्रसाद तो नहीं देता लेकिन तुम्हारी सिफारिश (अनुरोध) बड़े स्थान से हुई है, इसलिए अब देना पड़ेगा।'' इसके बाद प्रतिदिन पुनः महाप्रसाद देने लगे। ये सभी वैष्णव भी प्रसन्न होकर रसोई करने लग गए। जब तब श्री आचार्य जी महाप्रभु द्वारिका में बिराजे, तब सभी वैष्णव साथ ही रहे। इसके बाद में श्री आचार्य जी महाप्रभु, श्री रणछोड़ जी से विदा होकर अडेल पधारे तो सभी वैष्णव श्री आचार्य जी महाप्रभु के साथ ही आए। श्री आचार्य जी महाप्रभु को अडेल में पहुँचाकर फिर अपने अपने घर आए और श्री ठाकुर जी की सेवा करने लगे। अतः वे गोविन्द दुबे, श्री आचार्य महाप्रभु के ऐसे परम कृपा पात्र भगवदीय थे, इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखें।

अथ राजा दुबे – माधो दुबे दोनों भाई – साँचौरा ब्राह्मणों की वार्ता

[वैष्णव-४२, प्रसङ्ग-१]

एक गाँव में दो भाई साँचौरा ब्राह्मण रहते थे। एक का नाम हरिकृष्ण और दूसरे का नाम रामकृष्ण था। बड़ा भाई रामकृष्ण बहुत पढा हुआ था। छोटा भाई मूर्ख था। बड़ा भाई, जो पढा हुआ था, गाँव के चबूतरे पर बैठकर पटेल के आगे कथा कहता था

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

और छोटा भाई जो मूर्ख था, वह खेती की रखवारी करता था और सभी प्रकार की सेवा भी करता था। एक दिन बड़ा भाई किसी काम से दूसरे गाँव में गया था अतः यहाँ की कथा रह गई। उस दिन वर्षा बहुत हुई थी अतः छोटा भाई खेत से उठकर घर आया तो भाभी ने कहा – ''तुम रोटी ले लो।'' देवर ने कहा – ''मुझे सर्दी लगती है। मैं बहुत भीगा हूँ अतः गरमागर्म भोजन दो तो जीमूँ।'' तब भाभी ने कहा – ''तू खाता है तो खा ले, नहीं तो जाकर सोजा। अब तू गाँव के चबूतरे पर जाकर पटेल के आगे कथा करेगा तो अपने दादा के ग्रास को फेरेगा। जो तुझे खाना हो तो खाले, नहीं तो मैं तो सो रही हूँ। जैसा भी है उसे खाले, नहीं तो कहीं उठकर चला जा।'' यह कटुवचन सुनकर देवर के मन में बहुत दुख हुआ और अपने मन में विचारा – ''मै इस देश से कहीं बाहर निकल जाऊँ?'' इस प्रकार सोचते हुए घर से बाहर निकल आया तथा विचार करने लगा – ''कहाँ जाऊँ?'' मन में विचार किया – ''राजा दुबे और माधो दुबे दोनों बड़े महापुरुष हैं, उनको नमस्कार करके जाऊँ। यह सोचते ही उनके घर चला गया।'' उन दोनों को नमस्कार करके रोने लगा। दुबे जी ने पूछा – ''तू कौन है?'' बाद में तो उन्होंने उसे पहचार लिया और बोले – ''तू तो अमुक का बेटा है, तेरा नाम हरिकृष्ण है, तू हमारी जाति का है, तू बता – तुझे क्या दुख है? तू क्यों रोता है?'' तब उसने कहा – ''महाराज, मेरे दुख का कोई अन्त नहीं है।'' दुबे जी ने कहा – ''तू अपना दुख बता तो सही।'' इसने कहा – ''यदि आप मेरे दुख को दूर कर दो तो मैं कहूँ। आप बड़े महापुरुष हैं।'' दुबे जी ने कहा – ''श्री ठाकुर जी सबसे बड़े हैं। वे ही सबका दुख दूर करते हैं। तू तो अपना दुख बता।'' तब इसने सारे समाचार कहे – ''भाभी ने मुझे इस प्रकार से दुर्वचन कहे हैं। जो मेरे हृदय में खटक रहे हैं। मैं आपके पास आया हूँ, आप से मेरा दुख दूर होगा।'' तब दुबे जी ने उसका समाधान किया और उसे महाप्रसाद लिवाया। बाद में वह रात्रि को सो गया। प्रातःकाल उससे दुबे जी ने कहा – ''तू स्नान करके आ।'' वह स्नान करके आया। राजा दुबे ने माधो दुबे से कहा – ''अब क्या करना है, आप ही जानें। तुम्हारी वाणी निकली है, उसे पूरा नहीं करोगे तो कैसे होगा? अभी तो पौधा आरोपित हुआ है।'' तब माधो दुबे ने कहा – ''अब तो यह तुम्हारी शरण आया है। तुम श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक हो, अब तो इसका कार्य करना ही चाहिए।'' इसके बाद उसका क्षौर कराया। फिर उसे स्नान करा कर मंदिर के द्वार के आगे बैठाया। तब माधो दुबे ने राजा दुबे से कहा – ''अब इसे जो कुछ भी कहना हो, सो कहिए।'' राजा दुबे ने माधो दुबे से कहा – ''तुम्हारा ही यह काम है, मेरा काम नहीं

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

है।'' माधो दुबे ने राजा दुबे से कहा – ''तुम बडे हो, तुम्हीं कहो।'' तब राजा दुबे ने कहा – ''मेरी आज्ञा है, तुम्हीं कहो।'' तब माधो दुबे ने इसे उपदेश दिया। अष्टाक्षर मन्त्र कान में कहा। फिर उससे अष्टोत्तरशत नाम का जप कराया। उसने एक-एक माला जप किया। वह संस्कृत बोलने लग गया। माधो दुबे ने राजादुबे से हँसकर कहा – ''यदि आपकी आज्ञा हो तो पुनः इसे जप कराएँ।'' राजा दुबे ने माधो दुबे से कहा – ''अवश्य कराइए। पुनः माधो दुबे ने दूसरी बार जप कराया तो उसे भगवत् स्वरूप की स्फुरणा हुई और पुराण इतिहास का ज्ञान हुआ। माधोदुबे ने राजादुबे से हँसकर कहा – ''यदि कहो तो पुनः इससे जप कराएँ।'' राजादुबे ने कहा – ''अब बस, यह इतने का ही पात्र है। अधिक ज्ञान इसमें समा नहीं सकता है। इस विषय में तुम भी मन में कर्तृत्व मत लाना। यह जो कुछ भी हुआ है, यह सब श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा का फल है और इससे भी यही कहना है। हमारा- तुम्हारा स्वरूप तो वे ही जानते हैं।'' फिर उसने वहाँ प्रसाद लिया। इसके पश्चात् वह दुबे जी की आज्ञा लेकर अपने गाँव के चबूतरे के ऊपर जा बैठा और कथा कहने लगा। पहले बड़े भाई कथा कहते थे। अब वे अन्य गाँव में चले गए, यह जान कर वहाँ कोई भी नहीं आता था। उस दिन कहीं से उनका एक सेवक आया। उसने जब हरिकृष्ण को कथा कहते देखा तो उसने गाँव के पटेल से कहा – ''तुम आज कथा सुनने क्यों नहीं गए। भट्ट जी तो कथा कह रहे हैं। तब पटेल ने आकर देखा कि भट्ट जी कथा कह रहे हैं। उन्होंने भट्ट जी से पूछा –''अब तक तुम कथा कहने के लिए क्यों नहीं आए।'' भट्ट जी ने कहा – ''पहले बड़े भाई कथा कहते थे अतः मैं नहीं आया। अब वे अन्य गाँव चले गए है, इसलिए कथा कहने के लिए आया हूँ।'' भट्ट जी भगवत कृपा से भलीभाँति कथा कहने लगे। सब कोई बहुत प्रसन्न हुए। सभी यह कहने लगे कि हमारा बड़ा भाग्य है जो अब ऐसा ब्राह्मण मिला है। कुछ दिनों बाद जब कथा सम्पूर्ण हुई तो सभी ने मिलकर भट्ट जी की पूजा की और कहा – ''अब तो आप ही कथा कहा करिए। पुनः यहाँ कथा करने के लिए आयें।'' वह ब्राह्मण माधोदुबे के पास आया और विनय पूर्वक निवेदन किया – ''आपकी कृपा से, मैंने कथा कही थी, जो भी कथा की पूजा में मिला है, उसे आप ही स्वीकार करिए। यह सम्पूर्ण द्रव्य आपका ही है। आप मेरे गुरू हैं।'' तब राजा दुबे और माधोदुबे ने कहा – ''हमारे और तुम्हारे गुरू श्री आचार्य जी महाप्रभु हैं अतः यह समस्त द्रव्य उनका है। हमारा इसमें से कुछ भी नहीं है। यह समस्त द्रव्य अडेल पहुँचाना है।'' कुछ दिनों के बाद रामदास साँचौरा ब्राह्मण और जगन्नाथ जोशी दोनों वैष्णव अडेल को श्री आचार्य जी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

महाप्रभु के दर्शनार्थ गए। उनके हाथों वह द्रव्य अडेल पहुँचा दिया। कितने ही दिनों बाद इसका बड़ा भाई रामकृष्ण अपने गाँव में लौट आया।

एक दिन हरिकृष्ण ने राजादुबे और माधोदुबे से कहा – ''यदि आप मुझे आज्ञा दें तो मेरे पिता की वृत्ति है, उसे फिरा लाऊँ।'' उन्होंने कहा – ''इसमें क्या सन्देह है जाओ, सब सिद्ध होगा।'' दुबे जी से आज्ञा लेकर वह पिता के वृत्ति के गाँव में गया। वहाँ के राजा से मिला। अशीर्वाद दिया। वह राजपूत इन भट्ट जी को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और बोला – ''हमारा बड़ा सौभाग्य है कि आप कृपा करके यहाँ पधारे। अब आप यहाँ विश्राम करिए और कुछ दिन ठहरिए। उन्होंने वहाँ ठहरने का मानस बनाया। स्नानादि नित्य कर्म करके रसोई का कार्य प्रारम्भ किया। इतने में कुछ और लोग भी आए। भट्ट जी ने उनके सम्मुख एक श्लोक का व्याख्यान किया। सभी लोग बहुत प्रसन्न हुए। उन लोगों ने भट्ट जी से पाँच रात्रि तक ठहरने का आग्रह किया और कहा कि इसके बाद हम लोग आपकी विदाई करेंगे। ऐसा कह करके सब तो अपने अपने घर चले गए। भट्ट जी ने रसोई करके श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया और भोग सरा कर महाप्रसाद लिया। दूसरे दिन गाँव के सभी लोगों ने विचार किया कि भट्ट जी को विदा कब किया जाए। ब्राह्मण बहुत योग्य है और बहुत दिनों में आया है अत: इनकी विदा में क्या कुछ किया जाना चाहिए। उनमें से एक वृद्ध व्यक्ति ने कहा – ''इन्हें सौ मन अन्न और एक सौ मुद्रा दिया जाए। इसके पिता की पुरानी वृत्ति की भूमि एक सौ बीघा है जो इसके नाम लिख दी जानी चाहिए। इससे हम सब भी ब्राह्मण के ऋण से मुक्त हो जाएँगे।'' सभी ने उस वृद्ध व्यक्ति की राय से सहमति व्यक्त की। सभी ने मिलकर चिट्ठा बना लिया और अन्न सिद्ध कर दिया। भट्ट जी से कहा – ''इस अन्न को ले जाओ।'' भट्ट जी ने कहा – ''इस अन्न को हमारे घर पहुँचा दिया जाए।'' इस पर गाँव के लोगों ने अन्न का गाड़ा भरवा दिया। सभी ने मिलकर उन्हें वस्त्र दिए। एक गाय व एक भैंस के साथ एक सौ मुद्रा भेंट की। यह भी कहा कि इतना अन्न प्रतिवर्ष ले जाया करो। भट्ट जी सब से विदा होकर अपने गाँव में आए और अपने घर के द्वार पर आकर पुकार कर कहा – ''भाभी, दरवाजा खोलो। मैं पटेल के चबूतरे पर कथा कहकर तथा अपने पिता जी के वृत्ति के गाँव में फेरी लगाकर आया हूँ।'' भाभी ने द्वार खोलकर देखा तो देवर को सचमुच सामने खड़ा पाया। उसे देखकर बड़ा भाई भी उठकर आया और उसने देखा कि छोटे भाई के चेहरे पर भगवत तेज विराजमान है।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

बड़ा भाई इस बात से डर गया कि कहीं यह अपने भाभी के व्यवहार से क्षुब्ध होकर मन में अन्यथा भाव नहीं रखता हो। उसी समय छोटे भाई ने सबसे पहले अपनी भाभी के चरणस्पर्श किए ओर बोला – "भाभी, तुम्हारे वचनों पर ही मुझ पर श्री ठाकुर जी की कृपा हुई है।" तब उसने बड़े भाई को भी यथोचित सम्मान दिया। बड़े भाई ने कहा – "तुम स्नान करों और महा प्रसाद ग्रहण करो।" छोटे भाई ने कहा – "मैं राजा दुबे और माधोदुबे को नमस्कार करने से पहले तो जलपान भी नहीं करूँगा।" बड़े भाई ने कहा – "ऐसी क्या बात है ?" तब छोटे भाई ने समस्त वृतान्त बड़े भाई को सुना दिया तथा कहा – "यह सब उन्हीं की कृपा से हुआ है। अन्यथा आप मेरी योग्यता तो जानते ही हैं।" बड़े भाई ने कहा – "मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा।" तब दोनों भाई राजादुबे – माधोदुबे के घर गए। बड़े भाई ने उन्हें प्रणाम किया और छोटे भाई ने उन्हें दण्डवत् प्रणाम किया। उस समय राजादुबे ने माधोदुबे से कहा – "यह जो तुम्हारा सेवक आया है, इसका वृतान्त इसके बड़े भाई के सम्मुख मत कहना।" दुबे आज्ञा पाकर दोनों भाई बैठ गए। छोटे भाई ने दुबे जी से सब बात बताई। दुबे जी ने कहा – "तेरे ऊपर श्री आचार्य जी महाप्रभु की महती कृपा है तो सिद्धि क्यों नहीं होगी ?" बड़े भाई ने कहा – "हमने तो कभी श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन भी नहीं किए हैं। आप कृपा करके मुझे भी कृतार्थ करिए।" यह सुनकर दुबे जी ने उसे कृतार्थ करने के लिए नामसुनाया और दोनों भाइयों को महाप्रसाद लिवाया। छोटे भाई ने दुबे जी से निवेदन किया – "यदि आज्ञा हो तो वहाँ से जो अन्न, गाय, भैंस, वस्त्र व मुद्रादि आए हैं, उन्हें आपके मन्दिर में समर्पित कर दूँ।" दुबे जी ने कहा – "इस द्रव्य के धनी तो श्री आचार्य जी महाप्रभु हैं, अतः तुम जो भी अन्न-वस्त्रादि सामान लाए हो, उसे इकट्ठा करो।" यह सुनकर दोनों भाई अपने घर आ गए और सम्पूर्ण सामान को एकत्रित कर लिया। कुछ दिन बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु द्वारिका पधारे। मार्ग में वे सिद्धपुर में राणा व्यास के घर ठहरे। उस समय राजादुबे-माधोदुबे ने भट्ट जी का सम्पूर्ण द्रव्य लेकर सिद्धपुर आए। उन्होंने श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन किए और इन दोनों भाइयों को नाम निवेदन कराया तथा उनका समस्त द्रव्य श्री आचार्य जी महाप्रभु को भेंट कर दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु तो वहाँ दो दिन ठहरकर आगे बढ गए। राजादुबे-माधोदुबे और दोनों भाई लौटकर अपने घर आ गए। ये दोनों ब्राह्मण, राजादुबे व माधोदुबे के सत्संग से बड़े भगवदीय हुए। इसलिए सत्संग तो भगवदीय का ही करना चाहिए। राजा-दुबे और माधोदुबे, ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे जो इनकी वार्ता का पार नहीं है। इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखा जाए।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ उत्तम श्लोकदास साँचौर ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव-४३, प्रसङ्ग-१]

ये उत्तम श्लोकदास, श्री नाथ जी की रसोई करते थे और सभी वैष्णवों के लिए ये ही महाप्रसाद परोसते थे अत: इन्हें सभी सेवक ''महतारी'' कहकर पुकारते थे। ये इतने प्रेम से प्रसाद लिवाते थे कि श्री गुसाँई जी इनके ऊपर बहुत प्रसन्न रहते थे। उत्तमश्लोकदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे, इसलिए इनकी वार्ता का उल्लेख कहाँ तक किया जाए?

अथ ईश्वर दुबे साँचौर ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव-४४, प्रसङ्ग-१]

ये ईश्वर दुबे श्री नाथ जी के सेवकों की रसोई करते थे। उत्तम श्लोकदास जो श्री नाथ जी के सेवकों की रसोई करते थे, उनकी देह छूटने के बाद श्री गुसाँई जी ने ईश्वर दुबे का नाम उत्तम श्लोकदास रख दिया। वे श्रीनाथ जी के सेवकों की रसोई करते थे वे अपनी गाँठ से घी मँगा कर सब के नेगसे अधिक घी परोसते थे। इससे भी सभी सेवक महतारी कहने लग गए। जब यह बात श्री गुसाँई जी ने सुनी तो बहुत प्रसन्न हुए। श्री गुसाँई जी ने ईश्वर दुबे से पूछा – ''तुम अपनी गाँठ से घी मँगाकर क्यों परोसते हो?'' ईश्वर दुबे से कहा – ''महाराज, इनको सेवा में श्रम बहुत होता है।'' यह सुनकर श्री गुसाँई जी बहुत प्रसन्न हुए और बोले कि इसका सभी सेवकों पर विशेष स्नेह है। श्री गुसाँई जी ने ईश्वर दुबे से कहा – ''जो तेरी इच्छा है, तू माँग ले। मैं तुझ पर बहुत प्रसन्न हूँ।'' ईश्वरदुबे ने कहा – ''महाराज, मुझे ऐसा आशीर्वाद प्रदान करें कि मेरा मन आपके चरणों से कभी भी विमुख न हो।'' तब वैष्णवों ने श्री गुसाँई जी से कहा – ''महाराज, मेरे मन में सन्देह है कि इसने यह क्या माँगा है?'' श्री गुसाँई जी यह सुनकर चुप हो गए। तब श्री गुसाँई जी से हरिदास ने पूछा – ''महाराज, मेरे मन में सन्देह है कि इसने यह क्या माँगा है?'' श्री गुसाँई जी ने कहा – ''तुम्हारा यह सन्देह तो उन्हीं से पूछने पर मिटेगा।'' सभी वैष्णवों ने उत्तमश्लोक दास से पूछा – ''तुमने श्री गुसाँई जी से क्या माँगा है?'' उसने कहा – ''जब श्री गुसाँई जी ने मुझसे कहा था कि वे बहुत प्रसन्न हैं, कुछ माँग ले। उस समय वे मुझे बहुत प्यारे लगे थे। तब मन में विचार आया कि आज

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

तो प्रभु जी की कृपा से मैं प्यारा लगता हूँ। मैं तो सेवक हूँ, कदाचित सेवक से कोई अपराध भी बन सकता है। कहीं उनका मन अप्रसन्न हो तो मेरा मन नहीं बिगड़े। इसलिए यह याचना की है कि सदा उनके चरणों में मन रमा रहे। यह सब उनके आशीर्वाद से ही सम्भव है।" यह सुनकर सभी वैष्णव बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने विचार किया कि सेवक का ऐसा ही भाव होना चाहिए। इसके बाद श्री गुसाँई जी ने प्रसन्न होकर उन्हें अपने अङ्ग की सेवा प्रदान की। तब ही वे मुखिया भीतरिया हुए। उत्तमश्लोकदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे परम कृपा पात्र भगवदीय थे, इनकी वार्ता का कोई पार नहीं है, इसलिए इनकी वार्ता को कहाँ तक विस्तार दिया जाए?

अथ वासुदेव छकड़ा - सहिनन्द के सारस्वत ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव-४५, प्रसङ्ग-१]

एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु के बड़े पुत्र श्री गोपीनाथ जी, अडेल से आगरा पधारे। आगरे में वैष्णवों ने एक सौ मुहर भेंट की। आगरे में श्री गोपीनाथ जी ने आज्ञा की – "कोई ऐसा वैष्णव है, जो एक मुहर हमारे घर पहुँचादे।" तब वासुदेव ने कहा – "महाराज, मैं इन मुहरों को पहुँचाऊँगा, मुझे दीजिए।" श्री गोपीनाथ जी ने वासुदेव छकड़ा को मुहरें दी। उसने मुहरों को लेकर एक गोला बनाया और गोला की मार्ग में पूजा करते हुए चले गए। वे पाँच दिन में अडेल पहुँच गए। गाँव के बाहर गोला फोड़कर मुहरें बाहर निकालीं और जाकर श्री गुसाँई जी को दीं। श्री गोपीनाथ जी का पत्र भी श्री गुसाँई जी को दिया। उन्होंने पत्र पढकर मुहरें गिन लीं। श्री गुसाँई जी ने वासुदेव को महाप्रसाद लिवाया। वासुदेव ने श्री गुसाँई जी से निवेदन किया – "महाराज, पत्र का जवाब तो लिख दें। पत्र में मुहरों की पहुँच भी अंकित करने की कृपा करें। मैं प्रातःकाल प्रस्थान करूँगा।" श्री गुसाँई जी ने उस पत्र का जवाब लिख दिया। पत्र में मुहरों की पहुँच भी लिख दीं। पत्र को बन्द करके वासुदेव को दे दिया। रात्रि में वासुदेव सो गए। घड़ी भर रात्रि शेष रहने पर वासुदेवदास श्री गुसाँई जी को दण्डवत प्रणाम करके चल दिए। पाँच दिन में ही वासुदेव दास अडेल से श्री जी द्वार आ गए। श्री गुसाँई जी का पत्र श्री गोपीनाथ जी को दिया। तब श्री गोपीनाथ जी ने वासुदेव दास से पूछा – "तुम मुहरें किस प्रकार ले गए थे?" वासुदेवदास ने कहा – "महाराज,

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

मुहरों का गोला बनाकर, उस गोले की पूजा करते हुए ले गया था।'' श्री गोपीनाथ जी ने वासुदेव दास से कहा – ''इस प्रकार कभी भी नहीं करना चाहिए। जिसे तुमने स्वरूप करके पूजाई मान लिया, उसे फोड़कर पुनः मुहरों का रूप दिया। यह नहीं करना चाहिए था।'' वासुदेव ने कहा – ''महाराज, उस स्वरूप की प्रतिष्ठा तो हुई नहीं थी।''

[प्रसङ्ग-२]

पुनः एक समय श्री गुसाँई जी, श्री मथुरा में विराज रहे थे। उन्होंने श्री ठाकुर जी का शृङ्गार किया और सेवा से बाहर निकलकर बैठक में विराजे। वहाँ उन्होंने रूपचन्दनंदा को पत्र लिखा। उसमें बसन्त की सामग्री भेजने के लिए लिखा। तब वासुदेव से कहा – ''तू इतनी सामग्री लेकर संध्या के समय आ जाना।'' पुनः उन्होंने भण्डारी को आज्ञा की – ''इन्हें एक टोकरा प्रसाद दो।'' भण्डारी क्रोध में (झुँझुला) कर उसे आहार (सूखा प्रसाद) का टोकरा भर दिया। श्री गुसाँई जी ने वासुदेवदास को आज्ञा दी कि तुम्हें पनही पहरने की चिन्ता नहीं करनी है। पेडे में प्रसाद खाते हुए चले जाना है। वासुदेवदास ने ऐसा ही किया और आगरे आ पहुँचे। सारा प्रसाद भी मार्ग में खा लिया। अतः झोली को फटकार कर रूपचन्द नन्दा के घर पहुँच गए। उस समय रूपचन्द नन्दा अपने घर में प्रसाद लेकर कुल्ले कर रहा था। वासुदेवदास ने उन्हें पत्र दिखाया। उसने हाथ धोकर, पत्र को मस्तक से लगाया। उसने अपने भाई से कहा – ''वासुदेवदास अपने घर आए हैं, ये भूखे होंगे, घर में इन्हें प्रसाद दिलावें।'' वासुदेव दास ने कहा – ''मुझे अभी मथुरा लौट कर जाना है अतः मुझे सखड़ी महाप्रसाद लेने का अवकाश नहीं है। अतः मुझे सामग्री दे दें तो मैं लौट जाऊँ। मैं यहाँ प्रसाद नहीं लूँगा।'' रूपचन्द नन्दा वस्त्र पहनकर सामग्री लेने गए। वासुदेव दास भी उनके ही साथ चल दिए। चलते समय रूपचन्द नन्दा ने अपने छोटे भाई गोपालदास से कहा – ''घर में जितना भी प्रसाद हो उसे लेकर छारछू दरवाजे पर लेकर आना और वहाँ बैठ जाना।'' रूपचन्द नन्दा ने बाजार में आकर सब सामग्री ली। तब वासुदेवदास ने कहा – ''मेरा आगे का धड़ तो प्रसादी है अतः समस्त सामग्री पीछे की ओर कमर से दृढ करके बाँध दो।'' रूपचन्द नन्दा ने ऐसा ही किया और दोनों ही छारछू दरवाजे आए। वहाँ देखा तो छोटा भाई प्रसाद लिए हुए बैठा मिला। उसने समस्त प्रसाद से वासुदेवदास की झोली भर दी और विदा कर दिया। दोनों भाई अपने घर लौट आए। वासुदेवदास तीसरे प्रहर में मथुरा आ पहुँचे। उस समय श्री गुसाँई जी स्नान करने के लिए पधार गए थे। जब वे लौटकर आए तो उन्होंने वासुदेवदास को खड़े हुए पाया। उन्होंने समस्त सामग्री उसके कमर से

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

खोल ली। श्री गुसाँई जी वासुदेवदास से बहुत प्रसन्न हुए। उसे आज्ञा दी – ''तेरे लिए महाप्रसाद की सामग्री रखी है अतः जाकर महाप्रसाद ले लो।'' वासुदेवदास ने श्री यमुना जी में विश्राम घाट पर स्नान किया और स्नान करके महाप्रसाद लिया। वासुदेवदास को क्षुधा बहुत सताती थी। लगभग डेढ मन खाता था लेकिन जैसे खाता था, वैसे ही पराक्रमी भी बहुत था। मथुरा से दो प्रहर में आ गए चले गए और लौट भी आए। ऐसा पराक्रमी था।

[प्रसङ्ग-३]

और एक समय की बात है – श्री गुसाँई जी नित्य प्रति श्री ठाकुर जी की सेवा करके बाहर आकर खवास से कहते थे – ''तू थैला-पीढा लेकर विश्रामघाट पर जाना।'' वे स्वयं जन्म स्थान (श्री कृष्ण जन्म भूमि) पर दर्शनार्थ पधारते थे। वे दर्शन करके विश्राम घाट पर स्नान करने के लिए पधारते थे। श्री गुसाँई जी का यह नित्य प्रति का क्रम था। एक दिन मथुरा के चौबों ने मिलकर काजी से कहा – ''तुम इनसे कुछ लगान बंधान करो। इनके सेवक आए हैं जो तुम्हें दो-चार हजार रुपया दे देंगे।'' यह सुनकर काजी अपने साथ दो सौ हथियार बंध मनुष्यों को लेकर जन्मस्थान पर आकर खड़ा हो गया। श्री गुसाँई जी तो जन्मस्थान पर श्री केशोराय जी दर्शन करके पधार गए। जब दर्शन करके बाहर आए और घोड़ा पर सवार हुए तो काजी ने कहा – ''अब तुम कहाँ जाओगे?'' वासुदेव दास ने श्री गुसाँई जी से कहा – ''मुझे इनकी नजर खोटी दिखाई देती है।'' श्री गुसाँई जी ने वासुदेव दास से कहा – ''ये तेरा क्या करेंगे, तुझ पर जो कुछ बन पड़े, तू कर।'' वासुदेव दास ने उन मनुष्यों में से एक के हाथ में गुर्ज और ढाल देखी। वासुदेव दास ने उसके गाल पर एक थप्पड़ मारा। वह थप्पड़ खाकर गिर गया। वासुदेव दास ने उसकी गुर्ज और ढाल छीन ली। वासुदेव के ईद-गिर्द बीस-पच्चीस मनुष्य थे। वासुदेवदास को देखकर वे सब हवेली में छुपकर बैठ गए और दरवाजा बन्द कर लिया। श्री गुसाँई जी घोड़े पर चढकर हवेली के दरवाजे के सामने से जाने लगे तो वासुदेव दास ने कहा – ''महाराज, बहुत अच्छा अवसर है, यहाँ पर ये सब इकट्ठे हैं। आपकी आज्ञा हो जाए तो इन्हें दरवाजा तोड़कर यही पर मारूँ।'' श्री गुसाँई जी ने उसे मना कर दिया और कहा – ''यहाँ ये तेरा क्या लेते हैं?'' श्री गुसाँई जी विश्राम घाट पर चले गए। दूसरे दिन श्री गुसाँई जी पुनः स्नान करने के लिए पधारे तो वह काजी अपने मनुष्यों को साथ लेकर और गले में पटुका (दुपट्टा) पहना कर विनती करके बोला – ''महाराज, आज हमने कन्हैया और भीम सेन दोनों के दर्शन कर लिए।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

हम तो आपके प्रताप से डरे हुए हैं।'' श्री गुसाँई जी ने कहा – ''तुमने ठीक ही कहा है। यह ऐसा ही तुम्हारे सभी लोगों के लिए अकेला ही भारी हैं। यदि तुम इससे कुछ बोलते तो यह अकेला ही तुम सबको मारता। इसके मन में बहुत थी लेकिन हमें ऐसा नहीं करना था। फिर काजी का समाधान (सत्कार) करके उसे पुनः भेज दिया।'' श्री गुसाँई जी की कृपा से श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक ऐसे सामर्थ्यवान थे।

[प्रसङ्ग-४]

सीहनन्द में जब कोई भी उत्सव होता था तो वैष्णव वासुदेवदास को नहीं बुलाते थे। एक बार सीहनन्द के वैष्णव मिलकर श्री गोकुल में श्री गुसाँई जी के दर्शनार्थ पधारे। वासुदेवदास भी उनके साथ आया। वासुदेवदास ने अवसर पाकर श्री गुसाँई जी से विनती की – ''महाराज, ये वैष्णव अपने उत्सवों में मुझे नहीं बुलाते हैं।'' श्री गुसाँई जी उस समय तो चुप रहे लेकिन जब वे वैष्णव वहाँ से विदा होकर जाने लगे तो उनमें से जो चार-पाँच मुखिया थे उन्हें रोक कर श्री गुसाँई जी ने कहा – ''तुम वासुदेवदास को उत्सव-कीर्तन में क्यों नहीं बुलाते हो ?'' उन वैष्णवों ने विनय पूर्व निवेदन किया – ''महाराज, वासुदेव दास को किसी बड़े उत्सव में ही बुलाते हैं। छोटे उत्सवों में नहीं बुलाते हैं। छोटे उत्सवों में यदि ये भूखे रह जाएँ तो दोष लगेगा।'' श्री गुसाँई जी ने उन्हें आज्ञा दी – ''तुम बंधान बाँध लो। यदि तुम्हें सौ वैष्णव बुलाने हैं तो पचास तो वैष्णवों को बुलाओं और पचास में वासुदेवदास को अकेले को बुलाओ। यदि पचास बुलाने हैं तो पच्चीस वैष्णवों को बुलाओं और पच्चीय में अकेले वासुदेव को बुलालो। यदि पच्चीस बुलाने हों तो तेरह वैष्णवों को बुलाओं और शेष के लिए एक वासुदेवदास को बुला लो। यदि दस वैष्णव बुलाने हो तो पाँच वैष्णवों को बुलाओं और पाँच के स्थान पर एक वासुदेव दास को बुलाओ। इसी प्रकार पाँच तक का बंधन बाँध दिया। जितने वैष्णव बुलाने हों उनमें से आधे के स्थान पर अकेले वासुदेवदास को बुलाया जाए।'' उन वैष्णवों ने श्री गुसाँई जी से कहा – ''महाराज, ये तो वहाँ भूखे रह जाएँगे।'' श्री गुसाँई जी ने कहा – ''दश तक के बंधन में आधे के स्थान पर वासुदेव दास को बुलाना है। इस बंधन में चाहे जो हो इसमें तुम क्या करोंगे ? इस प्रकार हमने बंधान कर दिया हैं इसमें तुम्हें कोई बाधा नहीं करनी हैं। आधे वैष्णवों के स्थान पर अकेले वासुदेवदास को बुलाना है इस पर भी यदि यह भूखा रहे तो इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं रहेगा। यह श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक है अतः इसके बिना बुलाये कोई भी उत्सव नहीं करना।'' वैष्णवों ने कहा – ''हम तो आपकी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

आज्ञा के अनुसार ही करेंगे।" इसके बाद कुछ दिन श्री गोकुल में रहकर वैष्णव लोग सीहनन्द चले गए। तब वे वैष्णव वासुदेवदास को श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक समझकर उसी प्रकार बुलाने लगे। श्री गुसाँई जी वासुदेव दास को श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक समझकर उस पर कृपा करते थे। ये वासुदेवदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, इसलिए इनकी वार्ता कहाँ तक लिखें।

अथ बाबा वेणुदास और कृष्णदास घघरिया तथा यादवदास की वार्ता

[वैष्णव-४६, प्रसङ्ग-१]

बाबा वेणुदास हृदय के नेत्रों से देखते थे। बाबा वेणुदास और छोटे भाई कृष्णदास दोनों श्री केशोराय जी के सम्मुख कीर्तन करते थे। वहाँ यादवदास भी कीर्तन में साथ थे। इन्होंने एक पद गाया - "देख री नैंनन गिरिवरधर" इस पद को गाते-गाते कृष्णदास ने अपनी देह छोड़ दी। बाबा वेणुदास ने कहा - "हम तो अपनी देह श्री नाथ जी द्वार में छोडेंगे। कृष्णदास का संस्कार श्री केशोराय के पीछे किया गया। जब सूतक से शुद्धि हुई तो ये श्री नाथ जी द्वार के लिए चल दिए और कुछ दिन में वहाँ पहुँच गए। वहाँ उन्होंने पर्वत के ऊपर पहुँचकर श्री नाथ जी के दर्शन किए। उस समय श्री नाथ जी के कण्ठ से फूलों की माला गिरी। रामदास भीतरिया ने वह माला और एक बीड़ा बाबा वेणुदास को दिया। उन्होंने इसे माथे चढाकर ले लिया। रामदास भीतरिया ने कहा - "तुम्हारी विदा श्री नाथ जी ने की है।" बाबा वेणुदास ने श्री नाथ जी को दण्डवत प्रणाम किया। जब पर्वत से नीचे उतरे तो आन्यौर की ओर उतरे। बाबा वेणुदास ने यादवदास से कहा - "मैं तो अपनी देह छोडूँगा। तू सावधान रहना। शीघ्र ही आ जाना।" इस प्रकार कहकर बाबा वेणुदास पर्वत से नीचे उतर कर श्री नाथ जी को दण्डवत प्रणाम करते हुए अपनी देह छोड़ दी। यादवदास ने बाबा वेणुदास का संस्कार किया। जब सूतक निवृत्ति हुई तो यादवदास श्री गुसाँई जी के पास आए ओर श्री गुसाँई जी के दर्शन किए तथा दण्डवत की। श्री गुसाँई जी ने जान लिया यादवदास भी भगवदीय है, किसी दिन यह भी इसी प्रकार इसी स्थिति में होगा। इसे श्रीनाथ जी की सेवा में रखा जाए तो अच्छा रहे। श्री गुसाँई जी ने कहा - "यादवदास तुम अकेले हो श्रीनाथ जी की सेवा करो।" श्री गुसाँई जी की आज्ञा से यादवदास ने श्रीनाथजी की सेवा भलीभाँति से की। यादवदास ने जंगल में जाकर

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

लकडियाँ इकट्ठी की और श्रीनाथ जी की ध्वजा के आगे लकडियों से चबूतरा बनाया। श्रीनाथजी के पास आज्ञा लेकर दण्डवत करके अग्नि ली और बयार (हवा) का रुख देखकर जिधर की ओर हवा चलती थी उस ओर अग्नि रखकर, ध्वजा को प्रणाम किया और लकड़ियों के चबूतरे पर जा लेटे। यादवदास ने अपनी देह छोड़ दी। हवा के प्रवाह से चिता जल उठी और यादवदास की देह भस्म हो गई। इस प्रकार यादवदास ने अपने हाथों से ही अपना संस्कार कर लिया। बाबा वेणुदास का यादवदास ने संस्कार किया था अत: इसने विचार किया कि सब वैष्णवों को मेरा संस्कार करने पर कष्ट होगा ओर श्री ठाकुर जी की सेवा में व्यवधान होगा। अत: इन्होंने अपना संस्कार अपने आप किया। पहले वेणुदास ने कहा था – "यादवदास तू शीघ्र आना विलम्ब मत करना।" श्री गुसाँई जी ने श्री नाथ जी की सेवा सौंपी थी अत: इतना विलम्ब हुआ। श्री गुसाँई जी ने दो दिन बाद पूछा कि यादवदास दिखाई नहीं देता है वह कहाँ गया? सेवकों ने कहा – "महाराज, यादवदास तो वन में लकड़ी इकट्ठी करते हुए देखे गए है।" तब श्री गुसाँई जी के कहने पर वैष्णवों ने वहाँ जाकर देखा तो वहाँ कुछ भी नहीं था। राख का ढेर पड़ा था। वैष्णवों ने श्री गुसाँई जी से आकर कहा – "महाराज, वहाँ तो कुछ भी नहीं दिखाई देता है, राख का ढेर पड़ा हुआ है।" श्री गुसाँई जी ने अपने श्री मुख से कहा – "वह ऐसा भगवद् भक्त था जो किसी को भी कष्ट नहीं देता था। यादवदास श्री महाप्रभु जी का ऐसा परम कृपा पात्र भगवदीय था जिसने स्वेच्छा से अपनी देह छोड़ी। सारे ग्वालों ने उसे इस प्रकार देह त्यागते देखा था। सभी चकित रहे।" इसलिए बाबा वेणुदास, कृष्णदास घघरिया और यादवदास बनिया ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, इनकी वार्ता का कोई पार नहीं है अत: कहाँ तक इस वार्ता का विस्तार करें।

अथ जगतानन्द सारस्वत ब्राह्मण – थानेश्वर निवासी की वार्ता

[वैष्णव-४७, प्रसङ्ग-१]

ये जगतानन्द सरस्वती ऊपर कथा कहते थे। एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु थानेश्वर पधारे। जगतानन्द सरस्वती, उस समय, ऊपर कथा कह रहे थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु भी वहाँ कथा में जा विराजे। जगतानन्द सरस्वती ने एक श्लोक का व्याख्यान किया। इसे सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा– "इस श्लोक का भाव तो बहुत

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

गम्भीर है।'' जगतानन्द सरस्वती ने कहा – ''इस श्लोक का जो अर्थ है, वह तो मैंने कह दिया और श्री शुकदेव जी ने इतना ही कहा है, वह मैंने कह दिया।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – ''श्री शुकदेव जी तो स्वयं ही बालक है।'' जगतानन्द सरस्वती ने कहा – ''यदि कोई अधिक व्याख्या है तो आप स्वयं ही अपने श्री मुख से कहें।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – ''तुम तो व्यास-आसन पर बैठे हो अतः हम तुम्हारा अतिक्रमण क्यों करें?'' इतना सुनकर जगतानन्द व्यास आसन की चौकी को छोड़कर उठकर खड़े हो गए। इसके बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु ने चौकी के ऊपर वस्त्र बिछाकर पोथी धरी और आप नीचे बैठ गए। फिर उन्होंने उस श्लोक का भाव बदल कर श्लोक का अर्थ कहा। श्लोक का अर्थ करते हुए तीन प्रहर व्यतीत हो गए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – ''इस श्लोक का व्याख्यान दो-तीन माह तक किया जा सकता है। लेकिन अब तक आपने प्रसाद नहीं लिया है, आप भूखे होंगे, अतः अब आप उठो।'' जगतानन्द ने कहा – ''महाराज, आप तो ईश्वर हैं, आपके भावों में कमी कैसे आ सकती है? आप तो भाव को जितना चाहें बढा सकते है।'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पोथी बाँधी। जगतानन्द ने श्री आचार्य जी महाप्रभु को दण्डवत प्रणाम किया और कहा – ''महाराज, मेरा घर पवित्र करिए, आप तो साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम हैं।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – ''तू अन्य मार्गीय है, हम तेरे घर कैसे पधारेंगे।'' तब जगतानन्द सारस्वत स्नान करके खड़े हुए और विनती करके कहा – ''महाराज, मुझे कृपा करके नाम दीजिए।'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कृपा करके नाम दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु उसके घर गए। श्री जगतानन्द के घर उसके सेव्य श्री ठाकुर जी थे, वे तुलसी के मध्य विराजते थे, वहां वह उन पर एक लोटी से जल डालता था। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने तुलसी में से श्री ठाकुर जी को निकालकर पञ्चामृत से स्नान कराया शृङ्गार करा कर, राजभोग समर्पित किया। जगतानन्द को सेवा की विधि समझाई और कहा प्रतिदिन इसी प्रकार से सेवा करना। जगतानन्द बहुत अच्छे भगवदीय हुए। श्री ठाकुर जी की सेवा नीकी भाँति से करने लग गए। वे जगतानन्द श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे अतः इनकी वार्ता का उल्लेख कहाँ तक करें।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ आनन्ददास विश्वम्भरदास क्षत्रिय दो भाइयों की वार्ता

[वैष्णव-४८, प्रसङ्ग-१]

ये दोनों भाई अत्यन्त कृपा पात्र और भगवदीय थे। ये दोनों ही एक स्थान पर बैठकर भगवद् वार्ता करते थे। ये श्री आचार्य जी महाप्रभु की वार्ता अहर्निश करते थे। कभी वार्ता सुनते में छोटे भाई को निद्रा आ जाती तब श्री ठाकुर जी ''हूँकारी'' देते। बड़े भाई आनन्ददास को निद्रा आती तब भी श्री ठाकुर जी ''हूँकारी'' देते। भगवद् वार्ता के आवेश में उन्हें यह जानकारी नहीं हो पाती थी कि ''हूँकारी'' कौन देता है। जब वार्ता कह चुकते तो आनन्ददास, विश्वम्भरदास से पूछते – ''मैंने जो कुछ वार्ता में कहा, उसे तुम समझे कि नहीं?'' विश्वम्भर दास कहते – ''मैंने तो यह वार्ता केवल ''यहाँ तक'' ही सुनी थी, फिर मुझ को निद्रा आ गई।'' आनन्ददास ने कहा – ''तू तो अब तक ''हुँकारी'' देता रहा था।'' विश्वम्भर दास ने कहा – ''मैंने तो हूँकारी नहीं दी।'' तब आनन्द दास ने कहा – ''श्री ठाकुर जी ने ''हूँकारी'' दी होगी।'' तब दोनों भाई अपने मन में बहुत प्रसन्न हुए। कहने लगे – ''हमारा बड़ा भाग्य है जो श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से श्री ठाकुर जी ने ''हूँकारी'' दी और हमारी कही हुई सारी वार्ता को सुना।'' इस प्रकार ये दोनों भाई आनन्ददास – विश्वम्भरदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे। इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए?

अथ एक ब्राह्मणी की कथा

[वैष्णव-४९, प्रसङ्ग-१]

श्री आचार्य जी महाप्रभु ने एक ब्राह्मणी के माथे श्री बालकृष्ण जी की सेवा पधराई। इसलिए वह ब्राह्मणी श्री बालकृष्ण जी की सेवा करती थी लेकिन वह अपने घर में निपट अकिञ्चन (निर्धन) थी। श्री ठाकुर जी के आगे मिट्टी का कुञ्जा भरकर रखती थी। रसोई में भी मिट्टी के पात्र थे। घर भी बहुत संकीर्ण था। इतने में ही रसोई व मन्दिर आदि के आचार सम्पादित होते थे। वृद्धावस्था आने पर नेत्रों से भी कम दिखाई देने लगा। वह ऐसी सेवा करती थी कि वैष्णव में आपस में चर्चा करने लगे। वैष्णव कहते ''श्री आचार्य जी महाप्रभु ने क्या समझ कर इसके माथे सेवा पधराई है? यह तो कुछ समझती भी नहीं है।'' एक दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु एक कोस ऊपर गाँव में

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पधारे थे, वहाँ से लौटते हुए उस ब्राह्मणी के द्वार के आगे से निकले। साथ के वैष्णवों ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा – ''महाराज, आपने जिस ब्राह्मणी के माथे श्री बालकृष्ण जी की सेवा पधराई है, यह उस ब्राह्मणी का घर है। इसके घर पधार कर इसके घर का आचार तो दृष्टिगत करें।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु तो अशरण की शरण अन्तर्यामी हैं। उस ब्राह्मणी के घर पधारे। वह उस समय रसोई कर रही थी। रोटी करके उन्हें घी से चुपड़ती जाती और श्री ठाकुर जी आप आरोगते जाते। लेकिन उस ब्राह्मणी को दिखाई कुछ भी नहीं देता था। हाथ से टटोल कर देखती थी रोटी आगे दिखाई नहीं देती थी। सोचती थी कोई मूसा (चूहा) या बिलाई (बिल्ली) तो रोटियों को नहीं ले जा रही है ? यह बात मुँह से भी कहती जाती थी और रोटी बनाती जाती थी। श्री ठाकुर जी रोटी आरोगते जाते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु वहाँ खड़े होकर दृश्य देख रहे थे। बाद में श्री आचार्य जी महाप्रभु ने उस वृद्धा से कहा – ''अरी बाई, तेरा बड़ा भाग्य है, जो तेरी की हुई रोटियों को श्री ठाकुर जी स्वयं आरोगते हैं।'' वह बाई श्री आचार्य जी महाप्रभु को दण्डवत करके बोली – ''महाराज, मैं यह नहीं जान पाई कि राज पधारे हैं। मुझे कुछ दिखाई नहीं देता है। परन्तु आपकी कानि (मर्यादा) से प्रभु सेवा स्वीकार कर लेते हैं।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने वैष्णवों से कहा – ''श्री ठाकुर जी तो प्रेम के वशीभूत रहते हैं। मेरी कानि (मर्यादा) से श्री ठाकुर जी आरोगते हैं और भक्त की भक्ति मान लेते हैं।'' यह सुनकर वैष्णव चुप हो गए। बाद में श्री आचार्य जी महाप्रभु अपने घर पधारे। उस बाई पर बहुत प्रसन्न हुए। वह बाई श्री आचार्य जी महाप्रभु की ऐसी परम कृपा पात्र भगवदीय थी। अत: उसकी वार्ता का पार नहीं है। उसकी वार्ता को कहाँ तब लिखा जाए ?

अथ एक क्षत्राणी की वार्ता

[वैष्णव-५०, प्रसङ्ग-१]

एक क्षत्राणी थी जो सूत काततती थी। कताई से जो भी दो-तीन पैसे मिलते उनसे सामग्री खरीदकर लाती और रसोई व बालभोग कर श्री ठाकुरजी को भोग समर्पण करती थी। एक दिन उसने विचार किया कि वह जितना सूत काततती है, उससे कुछ अधिक कातकर कुछ टका बचे उन्हें इकट्ठे कर ले। इस प्रकार उसने दस-बारह टका इकट्ठे किए ओर उनसे घी व खाँड ले आई। घर आकर उसने मैदा छानी और उनसे

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

लड्डू सिद्ध किए। उसने विचार किया कि अब दस-बारह दिन के लिए सामग्री सिद्ध हो गई है अत: अब इतने दिनों के लिए तो निश्चिन्त हो गई। उसने उस दिन श्री ठाकुर जी को सामग्री अरोगाई और बाकी सामग्री एक हाँठी में रखकर मन्दिर में रख दी। बाद में उसने श्री ठाकुर जी को राजभोग समर्पित किया। भोग सराकर, आरती करके, आपने महाप्रसाद लिया और सूत कातने लग गई। श्री ठाकुर जी सिंहासन से नीचे उतरे और हाँडी की सामग्री लेकर सिंहासन पर जा चढे। उन्होंने हाँडी में से सामग्री लेकर अरोगना प्रारम्भ कर दिया। जब मन्दिर में खटखट होने लगी तो उसने सोचा - "मन्दिर में खटखट हो रही है। कोई मूसा (चूहा) व बिलाई (बिल्ली) हो सकती है देखूँ तो कौन है?" क्षत्राणी ने सूत कातना छोड़कर मन्दिर के किवाड़ खोलकर देखा तो श्री ठाकुर जी अपने सिंहासन पर हाँडी लेकर बैठे हैं और उसमें से लड्डू निकाल निकाल कर आरोग रहे है। यह देखकर वह क्षत्राणी छाती कूटने लगी। वह कहने लगी - "यह सामग्री तो आपके ही लिए दस-बारह दिन के लिए सिद्ध करके रखी है। यह आपने क्या किया? आज ही सारी सामग्री आरोग लोगे क्या?" श्री ठाकुर जी ने कहा - "तू लेखा कर के आज ही निवड़ गई (इकट्ठी सामग्री बनाकर निश्चिन्त हो गई)। तूने आलस्य करके सामग्री इकट्ठी करके रखी थी। क्या नित्य नई सामग्री नहीं बना सकती थी?" वह क्षत्राणी बोली - "महाराज, मेरा अपराध क्षमा करो। अब तो मैं नित्य नई सामग्री बनाकर समर्पित किया करूँगी।" श्री ठाकुर जी ने इसकी सामग्री इस लिए आरोगी कि इसे श्री ठाकुर जी के प्रति आर्तभाव नहीं रहेगा। यह तो दस-बारह दिन के लिए निश्चित हो गई। यदि नित्य नई सामग्री बनावे तो श्री ठाकुर जी के प्रति आर्तभाव बना रहे। कि मुझे श्री ठाकुर जी की सामग्री सिद्ध करनी है। श्री ठाकुर जी ने इसलिए ऐसा किया कि चार दिन से अधिक सामग्री कभी सिद्ध करके नहीं रखे। क्षत्राणी ने छाती इसलिए कूटी कि श्री ठाकुर जी ने सामग्री सम्पूर्णता आरोग ली। श्री ठाकुर जी ने तो प्रसन्न होकर ऐसा किया। उसने इसके लिए छाती नहीं कूटी। उसने तो इलिए छाती कूटी कि श्री ठाकुर जी ने, श्री आचार्य जी महाप्रभु की मर्यादा का उल्लंघन किया। श्री आचार्य जी महाप्रभु के मार्ग की मर्यादा तो यह है कि श्री ठाकुर जी को जो सामग्री समर्पित की जावे, उसे ही श्री ठाकुर जी आरोगे। जो सामग्री उठाकर रख दी जावे, उसे ही ठाकुर जी नहीं आरोगते। श्री ठाकुर जी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के मार्ग की मर्यादा छोडी इसके लिए क्षत्राणी ने छाती कूटी थी। श्री ठाकुर जी ने उससे कहा - "तू आज ही निबाड़ी नित्य के लिए लेखा ही नहीं रहा।" श्री ठाकुर जी ने मर्यादा नहीं

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

छोड़ी। दस-बारह दिन के लिए वह क्षत्राणी निश्चिन्त होकर बैठ गई, इसलिए श्री ठाकुर जी ने सामग्री आरोगी। वह दस-बारह दिन तक निश्चिन्त होकर बैठी रहती उसमें आर्तभाव जाग्रत नहीं रहता इसके लिए श्री ठाकुर जी ने सामग्री आरोगी। वह क्षत्राणी ऐसी परम भगवदीय थी कि उसे श्री ठाकुर जी एक क्षण के लिए भी सेवा से विरत नहीं होने देते थे। वह सेवा में सदा आर्त रहती थी इसलिए श्री ठाकुर जी उससे सानुभाव थे। जो उन्हें रुचता था सो माँग लेते थे। ऐसी कृष्णपात्र क्षत्राणी की वार्ता को कहाँ तक लिखा जाए?

अथ सास गोरजा और बहू समराई - सीहनदवासी दोनो क्षत्राणियों की वार्ता

[वैष्णव - ५१, प्रसङ्ग-१]

इन दोनों के माथे श्री आचार्य जी महाप्रभु ने श्री दामोदरजी की सेवा पधराई थी। इन दोनों सास-बहुओं से श्री ठाकुर जी बहुत सानुभाव थे। एक बार श्री आचार्य जी महाप्रभु थानेश्वर पधारे और वहीं पर रहते थे, वे सीहनन्द नहीं पधारते थे क्योंकि थानेश्वर और सीहनन्द के मध्य में सरस्वती नदी थी जिसे श्री आचार्यजी महाप्रभु लाँघते नहीं थे। आप श्री आचार्य थे अतः लोक शिक्षण की दृष्टि से थानेश्वर में ही विराजते थे। जब श्री आचार्यजी महाप्रभु थानेश्वर पधारे तो सास ने बहू से कहा - मैं श्री आचार्यजी महाप्रभु के दर्शनार्थ थानेश्वर जा रही हूँ अतः तू श्री ठाकुर जी की सेवा (नीकी) भातिभाँति से करना। श्री ठाकुरजी का शृङ्गार करके रसोई करना और भोग समर्पित कर देना। इतना कहकर सास तो श्रीआचार्य जी महाप्रभु के दर्शन करने हेतु चली गई। बहू ने स्नान करके सेवा की और (पाक) सामग्री सिद्ध होने पर श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया। जब समयानुसार भोग सराने के लिए गई तो देखा, सारी सामग्री यथावस्थित ज्यों की त्यों है। तब बहू ने विनती की - "महाराज, मैं तो कुछ जानती नहीं हूँ और सास ने मुझे जैसे बताया है, वैसे ही मैंने किया है महाराज, आप भोग क्यों नहीं आरोग रहे। आप मुझे आज्ञा दो, मैं और क्या करूँ?" इस प्रकार कहकर बहुत व्याकुल (बिलबिलाने) होने लगी। खेद करने लगी। मन मैं यह भी विचार हुआ कि कुछ न कुछ अपराध (गलती)अवश्य हो गई है। हो सकता है, रसोई अच्छी नहीं बन पड़ी हो अथवा पात्रों के माँजने में कुछ अशुद्धि रह गई हो। कुछ न कुछ तो भूल (चूक)

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अवश्य हुई होगी, जिससे श्री ठाकुर जी आरोगते नहीं हैं। इसके बाद उसने भोग सराकर पुनः अच्छी तरह पात्रों को माँजा। भली प्रकार से धोकर तथा पोंछकर पुनः रसोई बनाई। दूसरी बार पाक सिद्ध किया और श्री ठाकुरजी को भोग समर्पित किया वह मन मैं यही कहती जाती थी "मुझ से कुछ न कुछ भूल (चूक) अवश्य पड़ी होगी। मैं तो कुछ जानती भी नहीं हूँ। इसलिए श्री ठाकुर जी ने नहीं आरोगा हैं अब मैंने अच्छी प्रकार से पात्र माँजकर रसोई बनाई है अब श्री ठाकुर जी अवश्य अरोगेगें।" यह विचार करते हुए जब यथा समय भोग सराने गई तो पुनः सामग्री को यथास्थिति में श्री ठाकुर जी के आगे देखा तो व्याकुल (बिलबिलाने) होकर रोने लग गई। बार-बार श्री ठाकुर जी से विनती करने लगी - महाराज मैं तो कुछ नहीं जानती हूँ। आप क्यों नहीं आरोग रहे हैं। मुझे आपके अनुकूल रसोई करनी नहीं आती है या मेरे शरीर में कोई दोष है? यह विचार करती हुई, भोग सराने लगी। उसकी छाती भर आई। कहने लगी - "मेरा ऐसा कौनसा अपराध है जो श्री ठाकुर जी भोग नहीं आरोग रहे हैं?" उसने तीसरी बार भलीभाँति पात्र माँजकर, रसाई की ओर भोग समर्पित किया जब भोग सराने गई तो सब सामग्री यथास्थिति में देखकर महाखेद करने लगी। वह कुछ भी नहीं सोच पाई? बोली - "क्या करूँ? श्री ठाकुरजी भूखे रहेंगे। सास ने मुझे कुछ भी नहीं बताया, मुझे क्या करना चाहिए था।" यह सोचते हुए विह्लल होकर मूर्छा खाकर श्रीठाकुर जी के सामने भूमि पर गिर पड़ी। बहुत दुःख करने लगी। बहुत भ्रमित हो गई थी अतः थक कर कुछ विनिद्रित सी हो गई। प्रातःकाल से इसने जल भी नहीं पीया था अतः गला भी सूख रहा था। अतिव्याकुल होकर पड़ गई। श्री ठाकुरजी से उसका दुःख सहन नहीं हुआ। वे सिंहासन से नीचे उतरे और उससे कहा - "तू खेद क्यो करती है? मैंने तो तीनों बार भोग आरोगा है। तू कुछ भी संदेह मत कर।" तब तो बहू ने कहा - "महाराज, मैं कैसे विश्वास करूँ कि आपने तीनों बार आरोगा है? श्री ठाकुरजी ने कहा - तू भूखी है, कुछ खा ले।" बहू ने कहा - "मैं तो जब आपको आरोगते देख लूँगी, तभी प्रसाद ग्रहण करूँगी।" श्री दामोदर जी ने कहा - "तू तो मानती ही नहीं है।" श्री ठाकुरजी स्वयं उठकर गए और जल की झारी लेकर आए तथा बोले - "देख, तेरा कण्ठ सूख रहा है, तू तनिक सा जल पान तो कर ले।" श्री ठाकुर जी ने अपने श्री हस्त से उसके मुख में जल (चुवाया) पिलाया और कहा कल सवेरे तू मुझे आरोगते हुए देख लेना। यह सुनकर वह उठी। उसने समस्त सखड़ी सामग्री महाप्रसाद गायों को खिलाया। रसोई पोतकर रसोई की सभी सामग्रियों को भलीभाति सिद्ध करके रखा।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

रात्रि को उत्साह पूर्वक सो गई। प्रातःकाल उठकर नित्य कर्म करके तथा स्नान करके रसोई की। जब पाक सिद्ध हो गया तब श्रीठाकुर जी को भोग समर्पित किया। जब टेरा (पर्दा) सरकाने लगी तो श्री दामोदर जी बोले – "अब तू टेरा क्यों हटा (सरका) रही है ? अब तू देख, मैं आरोगता हूँ। तेरी समस्त सामग्री यथास्थिति में रहेगी। श्री ठाकुर जी ने एक एक सामग्री आरोगी और वह वहाँ खड़ी रहकर देखती रही। उसने श्री ठाकुर जी को आरोगते हुए देखा। उसने देखा कि श्री ठाकुर जी ने समस्त सामग्री का भोजन किया है और भोजन करने के बाद सभी सामग्री थाल में यथास्थित रही।" श्री ठाकुर जी ने उससे कहा – "अब तू प्रतिदिन इसी प्रकार से जान लेना, खेद मत करना।" तब बहू समराई ने कहा – "महाराज, मैं तो जब तक देख नहीं लूँगी, नहीं मानूँगी।" इसके बाद तो समराई नित्य प्रति भोग रखे और स्वयं श्री ठाकुरजी को भोजन करते हुए देखे। श्री ठाकुरजी भी समुराई के देखते रहने पर ही भोजन करें। जो चाहें, वह उससे मांग लें। श्रीठाकुर जी उससे हास–परिहास भी करें। उसको सम्पूर्ण रस का अनुभव कराया। समराई भी सकल रस का अनुभव करने लगी। श्री दामोदर जी ने यह बात श्री आचार्यजी महाप्रभु को बताई तो श्री आचार्य जी महाप्रभु ने समराई की सास गोरजा से पूछा– "क्या श्री ठाकुर जी सानुभाव बताते है ?" गोरजा ने कुछ भी जबाव नहीं दिया। गोरजा श्री आचार्यजी महाप्रभु से विदा होकर अपने घर सीहनन्द आई। दूसरे दिन सास गोरजा ने रसोई करके श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया। जब भोग सराया तो देखकर चौंक उठी। श्री ठाकुर जी ने भोग आरोगा ही नहीं था। तब तो सास गोरजा ने अपनी बहू समराई से कहा – "ओ बहू, सुन, श्री ठाकुर जी तो बालक हैं अतः तुझ से परिचित (हिल) हो गए हैं। अब तू शीघ्र (बेग) से रसोई कर।" तब बहू ने रसोई की और भोग समर्पित किया। श्री ठाकुर जी ने कहा – "मैंने तो अभी अभी भोजन आरोगा है।" बहू ने कहा – "महाराज, मैं तो जब तक देख नहीं लेती हूँ, मानती ही नहीं हूँ।" उसने भोग समर्पित करके कहा – "महाराज, भोजन आरोगिए।" तब समराई के देखते देखते श्री ठाकुर जी ने भोजन आरोगा। अब तो जब सास रसोई करे तो बहू को बुलावे और कहे कि थाल ले जाओ। बहू थाल ले जाकर श्री ठाकुर जी को अपने सामने भोजन आरोगावे। ऐसा नित्यप्रति करने लगी। यह बात श्री ठाकुर जी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहीं। कुछ दिन बाद बहू भी थानेश्वर श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन करने के लिए गई। उसने वहा पहुच कर श्री आचार्य जी महाप्रभु का दर्शन किया। उस समय श्री आचार्य जी महाप्रभु पाक कर रहे थे अतः समराई रोटी बेलने के लिए बैठ गई। श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

आचार्य जी महाप्रभु ने बहू से कहा - "तेरी सब बातें हमसे श्री ठाकुरजी ने कह दी हैं। उन्होंने हमें बताया है कि समराई ने बहुत सुख दिया है।" यह सुनकर समराई मुस्करा गई। वह बोली - "इतनी भी बात श्री ठाकुरजी के पेट में नहीं (पची) रही तो क्या किया जाए?" फिर बोली - "महाराज, आप बालक से यह सब पूछते हैं?" श्री आचार्य जी महाप्रभु यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और अपने श्री मुख से कहने लगे - "देखो, इसका श्री ठाकुर जी से कैसा सम्बन्ध हैं?" और बोले - "इस बहू के ऊपर बहुत कृपा है।" बहू जो मसालेदार शाग (सालन) करती सब अच्छी (नीकी) भाँति से करती। श्री आचार्यजी महाप्रभु ने कहा - "तू नित्यप्रति (सालन) मसालेदार शाग क्यों नहीं करती है?" तब बहू बोली - "जो बालक को सुहावे वहीं करना चाहिए।" यह सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु बहुत प्रसन्न हुए। बोले - इसकी सास गोरजा बहुत उत्तम सामग्री करती, श्री ठाकुर जी को वह बहुत रूचिकर लगती थी। इन दोनों सास बहुओं पर श्री ठाकुर जी बहुत प्रसन्न रहते। इन दोनों सास बहुओं को दर्शन देने के लिए श्री आचार्य जी महाप्रभु प्रतिवर्ष थानेश्वर पधारते थे। वे यह भी कहते थे कि सरस्वती को लाँघा नही जाता है, इसलिए थानेश्वर से ही आकर रह जाते हैं, नहीं तो इनको सीहनन्द मैं ही दर्शन दिया करता। श्री आचार्य जी महाप्रभु की ऐसी कृपा पात्र भगवदीय थीं, ये दोनों सास-बहू, इनकी वार्ता को हम कहाँ तक लिखें।

५२ कृष्णदासी - रुक्मणी बहूजी की दासी की वार्ता

[वैष्णव - ५२, प्रसङ्ग-१]

यह कृष्णदासी अडेल में रुक्मणी बहू जी की खवासी करती थी। एक बार रुक्मणी बहूजी को जब गर्भ रहा तो कृष्णदासी ने कहा - "इस बार बेटा होगा, उसका नाम श्री गोकुलनाथ जी नाम धरूँगी।" गर्भ के दिन पूरे हुए, तब रुक्मणी बहूजी के पेट में व्यथा हुई। उसी समय कृष्णदासी ने ज्योतिषी के पास जाकर पूछा - "अब मुहूर्त्त कैसा है? ज्योतिषी ने कहा - आज का दिन तो अच्छा नहीं है।" तब कृष्णदासी ने पुनः आकर रुक्मणी बहूजी के पेट पर हाथ फेरते हुए कहा - अभी तो मत पधारो, आज का दिन अच्छा नहीं है। थोड़ी देर में पेट का सब दर्द शान्त हो गया। दो-तीन दिन बाद कृष्णदासी ने विचारा अब फिर ज्योतिषी से पूछना चाहिए - "आज का दिन कैसा है?" कृष्णदासी पुनः ज्योतिषी के पास गई और पूछा- आज का दिन कैसा है?

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

ज्योतिषी ने कहा - ''आज का दिन बहुत अच्छा है।'' कृष्णदासी ने रुक्मणी बहू जी से कहा - ''अब आप पौढिये, आज का दिन बहुत अच्छा है अब बालक प्रगट होना अधिक शुभ है।'' तब बहूजी महाराज पौढ़ गई। कृष्णदासी ने बहूजी महाराज के पेट पर हाथ फेरा और कहा - ''महाराज, अब पधारिये।'' उस समय श्री गुसांई जी तो श्रीनाथ जी द्वार गए हुए थे। उस समय बहूजी महाराज के पेट में दर्द हुआ और बालक का जन्म हुआ। उस समय कृष्णदासी ने नाम रखा - ''श्री गोकुलनाथ'' इसके बाद श्री गुसांई जी पास बधाई भेजी। श्री गुसांई जी के महाराज अडेल पधारे और नामकरण करके बालक का नाम ''श्री वल्लभ'' रखा। लेकिन कृष्णदासी की कानि (मर्यादा) से बालक का नाम श्री गोकुलनाथ जी प्रसिद्ध हुआ। ऐसी कृष्णदासी के ऊपर कृपा थी। कृष्णदासी के कहने से उनके दोनों नाम प्रसिद्ध हुए।

[प्रसङ्ग-२]

इसके पश्चात् श्री घनश्याम जी का जन्म हुआ। उस समय नामकरण करने के लिए विचार किया जाने लगा। तब श्री वल्लभ जी ने कहा- 'श्री गोकुलनाथजी' नाम रखो। श्री गुसाँईजी ने उसी समय कहा- 'यह नाम तो तुम्हारा है। तुम्हारे दोनों ही नाम प्रमाण किए हैं- श्री वल्लभ नाम होने से कोई श्री वल्लभ नाम कहता है और जगत् में श्री गोकुलनाथ नाम से प्रसिद्ध हुए। जन्म पत्र में नाम 'श्रीकृष्ण' है जो छिपा (गोप्य) रखा गया। श्री गुसाँईजी ने कहा - 'श्री कृष्ण' नाम को छिपा (गोप्य) रखो। सो यह कृष्णदासजी श्री आचार्य जी महाप्रभु की सेवा भावी कृपापात्र भगवदीय थी, इसकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए।

अथ बूला मिश्र पण्डित की वार्ता

[वैष्णव - ५३,[प्रसङ्ग-१]

बूला मिश्र, कपूर क्षत्री के पुराहित थे। कपूर क्षत्री की स्त्री के सन्तान न होने के कारण उसने दूसरा विवाह किया, लेकिन दूसरी स्त्री से भी कोई सन्तान नहीं हुई। तब उस स्त्री ने क्षत्री से कहा- ''तुम हरिवंश पुराण की कथा का श्रवण करों, तभी तुम्हारे द्वारा सन्तान पैदा हो सकती है।'' उस क्षत्री ने बूला मिश्र से प्रार्थना पूर्वक कहा - ''तुम मुझे हरिवंश पुराण की कथा सुनाइए।'' बूला मिश्र ने कहा - ''अभी तो मुझे अवकाश नहीं है। जब मुझे अवकाश होगा तो मैं तुम्हें तुम्हारे घर

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

आकर हरिवंश पुराणा सुनाऊँगा।'' वह क्षत्री अपने घर आ गया। एक महीना बीतने पर अचानक बूलामिश्र उस क्षत्री के घर पधारे। कपूर क्षत्री ने बूला मिश्र का बहुत सम्मान किया। बूला मिश्र ने कहा – ''तुम दोनों स्त्री–पुरुष स्नान करके आओ।'' यह सुनकर कपूर क्षत्री और उसकी बड़ी स्त्री दोनों ने स्नान किया और आकर बैठ गए। बूला मिश्र ने देह शुद्धि के लिए एक दान कराया और पीछे हरिवंश पुराण का अन्तिम श्लोक सुनाया –

श्लोक – इदं मया ते हरिकीर्तनं महच्छ्री कृष्ण माहात्म्यमपार भद्धुतम्।
श्रृण्वन्पठन्नाशु समाप्नुयात् फलं यच्चापि लोकेषु सुदुर्लभं महत् ॥

[इस प्रकार मैंने श्री कृष्ण चन्द्र भगवान् का अपार अद्भुत माहात्म्य का श्रवण किया। हे श्री कृष्ण, आपके महान् अद्भुत चरित्र को जो पढेगा और सुनेगा तथा जो इस चरित्र का कीर्तन करेगा, उसके सम्पूर्ण कर्मों का फल समाप्त हो जाएगा। लोकों में आशु कर्मफल समाप्त करने वाला यह सुदुर्लभ चरित्र है।]

हरिवंश पुराण के इस अन्तिम श्लोक को बूला मिश्र ने उस क्षत्रिय को सुनाया और आशीर्वाद दिया तथा मंत्रों से अभिमंत्रित अक्षत पढ़कर उस क्षत्रिय की बड़ी स्त्री की गोद में डाल दिए। यह देखकर क्षत्री ने कहा – ''मिश्र जी, आपने यह क्या किया। इस स्त्री को तो ऋतुधर्म भी नहीं होता है। इससे आपका आशीर्वाद कैसे फलित होगा?'' बूला मिश्र ने कहा – ''श्री ठाकुर जी सामर्थ्यवान हैं जो देनहार होंगे तो इसी स्त्री को पुत्र देंगे। अब तो मैंने अक्षत इसी को प्रदान कर दिए।'' यह कहकर बूला मिश्र अपने घर जाने लगे तो उस स्त्री ने उनसे बहुत प्रार्थना की – ''महाराज, मुझे सम्पूर्ण हरिवंश पुराण का श्रवण कराएँ।'' बूला मिश्र ने कहा – ''तुझे तो श्री ठाकुर जी एक ही श्लोक में सम्पूर्ण हरिवंश पुराण का फल प्रदान करेंगे।'' यह कहकर बूला मिश्र तो अपने घर चले गए। कुछ समय बाद उस बड़ी स्त्री को ऋतुधर्म होने लगा। एक दिन वह गर्भवती हो गई। समय पाकर उसके गर्भ से एक पुत्र का जन्म हुआ। इस लिए बूला मिश्र ऐसे श्री आचार्य जी महाप्रभु के कृपा पात्र भगवदीय थे जिनके अनुग्रह से क्षत्राणी के पुत्र हुआ। हरिवंश पुराण के एक ही श्लोक को सुनने से सम्पूर्ण पुराण सुनने का फल प्राप्त हुआ। वे ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, उनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ मीरा बाई के पुरोहित रामदास की वार्ता

[वैष्णव - ५४, प्रसङ्ग-१]

एक दिन मीराबाई के श्री ठाकुर जी के आगे पुरोहित रामदास जी कीर्तन कर रहे थे। उन्होंने श्री आचार्य जी महाप्रभु के पद गाए। उसी समय मीरा बाई बोली – ''श्री ठाकुर जी का भी कोई पद गाओ।'' रामदास जी ने आवेश में कहा – ''अरे दारी मीरा, यह किसका पद है? यह क्या तेरे पति का सिर है? चल, आज से पीछे मैं तेरा कभी मुख नहीं देखूँगा।'' यह कहकर रामदास उठकर चले गए। मीरा बाई ने उन्हें बहुत प्रयत्न करके रोकना चाहा, किन्तु वे नहीं रुके। वहाँ से अपने परिवार को भी लेकर चले गए, पुनः मीरा बाई का मुख नहीं देखा। अपने प्रभु से अनुरक्ति के कारण रामदास ने मीरा बाई का पुनः मुख देखना पसन्द नहीं किया। उन्होंने अपनी वृत्ति का ऐसा त्याग किया कि मीरा बाई के गाँव के निकट भी नहीं गए। मीरा बाई ने उन्हें अनेक बार बुलावा भेजा, लेकिन वे नहीं आए। मीरा बाई ने उनके घर बैठे ही उन्हें भेंट भेजी, वह भी उन्होंने लौटा दी। मीरा बाई के पास सन्देश भेजा – ''मीरा, तेरा श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऊपर समत्व भाव ही नहीं है, अतः हम तेरी वृत्ति का क्या करें? हमारे सर्वस्व तो श्री आचार्य जी महाप्रभु हैं। उनके बिना सर्वस्व त्याग करना उचित है। हमें तो उन्हीं के चरणारविन्द का आश्रय रखना उचित है अतः उनके प्रति भावना के बिना वृत्ति स्वीकार्य नहीं है। ऐसी वृत्ति जीवन मैं बहुत होंगी, लेकिन हमारे लिए वे श्री आचार्य महाप्रभु के बिना स्वीकार्य नहीं होंगी।'' वे रामदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे भगवदीय थे। अतः इनकी वार्ता का उल्लेख कहाँ तक करें।

अथ रामदास चौहान की वार्ता

[वैष्णव - ५५, प्रसङ्ग-१]

रामदास चौहान श्री गोवर्द्धन की कन्दरा में निवास करते थे। प्रथम बार जब श्री आचार्य जी महाप्रभु श्री नाथ जी द्वार पधारे और श्री गोवर्द्धन नाथ जी को पाट बैठाए तब रामदास जी गोवर्द्धन की कन्दरा से बाहर आए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने रामदास जी से कहा – ''रामदास, श्री गोवर्द्धन नाथ जी की सेवा पूर्ण सावधानी से करना।'' वहाँ रामदास जी ने एक छोटा सा ईंटों का मन्दिर बनवाया। उस मन्दिर में श्री आचार्य जी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

महाप्रभु ने, श्री गोवर्द्धन नाथ जी को पधराया। इस प्रकार पहले श्री गोवर्द्धन नाथ जी श्री गोवर्द्धन पर्वत पर विराजते थे। ब्रजवासियों ने उस मन्दिर पर फूँस की छत (छप्पर) कर रखी थी। उस छत के नीचे श्री ठाकुर जी विराजते थे। ब्रजवासियों ने उन्हें देवदमन नाम दिया था। कभी-कभी वे उन्हें दूध-दही समर्पण किया करते थे। वे दूध-दही-मक्खन आदि आरोगते थे। अत: उन्हें श्री गोपाल लाल जी भी कहते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने जब श्री गोवर्द्धननाथ जी को मन्दिर में पधराया, इसके बाद इनका नाम श्री नाथ जी प्रगट किया। तभी से सभी लोग इन्हें श्रीनाथ जी कहने लगे। वे रामदास जी श्री आचार्य जी महाप्रभु के परम कृपा पात्र भगवदीय थे अत: इनकी वार्ता का कोई पार नहीं हैं अत: इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखा जाए।

अथ रामानंद पण्डित - सारस्वत ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव - ५६, प्रसङ्ग-१]

एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु थानेश्वर पधारे वहाँ वे रामानन्द पण्डित के भी घर पधारे थे। रात्रि के समय उन्होंने वहीं पर शयन किया। जब पिछली रात्रि का समय हुआ तो रामानन्द पण्डित ने अपनी स्त्री से कहा- "जल्दी उठकर गोबर समेट कर रख दे, चौका के लिए आवश्यकता होगी, नहीं तो वे वैष्णव उठेंगे तो सब ले जाएँगे।" यह बात श्री आचार्य जी महाप्रभु ने सुन ली। उस समय श्री आचार्य जी महाप्रभु हाथ-पाँव धोने के लिए उठे थे। उसकी बात सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु बहुत क्रुद्ध हुए और रामानन्द पण्डित को बुलाकर अपने गड़ुआ (नाली वाले लोटे) से जल लेकर उसके हाथ में देकर मन्त्र पढ़कर उस जल को उसके ऊपर छिड़क दिया तथा अपने श्रीमुख से कहा - "मैंने तुम्हें त्याग दिया, क्योंकि तुम मेरे सेवकों के लिए ऐसा भाव रखकर अपनी स्त्री से कहते हो, गोबर को शीघ्र समेट ले, नहीं तो वैष्णव ले जाएँगे। तू रसोई का सामान कहाँ से करेगा।" ऐसा कहकर वहाँ से तत्काल उठकर चल दिए, एक क्षण भी नहीं रुके। थानेश्वर के समीप एक गाँव है, वह तीर्थ स्थल है, अत: वहाँ आ गए। वहाँ आपने स्नान किया। जब श्री आचार्य जी महाप्रभु रामानन्द पण्डित के घर से चलने लगे, उस समय वैष्णवों ने बहुत अनुनय विनय किया, लेकिन श्री आचार्य जी महाप्रभु वहाँ नहीं रहे। उन्होंने स्पष्ट कह दिया- "मैं यहाँ रहकर जल पान नहीं करूँगा।" इसके बाद जिस किसी ने भी रामानन्द पण्डित से नाम ग्रहण किया, उसे वे "गङ्गोज्व" कहने लगे। जब श्री आचार्य जी महाप्रभु

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

थानेश्वर पधारे, उसके बाद से रामानन्द पण्डित बहुत व्याकुल रहने लगे। उन्होंने मर्यादा हीनता से बाजार में जो वस्तु देखते उसे ही खा जाते। हाँ, इतनी मर्यादा अवश्य करते थे कि जो भी खाते थे उसे श्री ठाकुरजी को समर्पित करके खाते थे। वह कह देते– "श्री गोवर्द्धननाथ जी आप आरोगिएँ।" यह कहकर मुख में डाल लेते थे। एक दिन एक हलवाई के यहाँ दुकान पर गर्म व ताजा जलेबी देखी। उन्होंने उनमें से जलेबी लेकर श्रीनाथजी से कहा– "श्रीनाथजी तुम अरोगिए– यह कहकर जलेबियाँ खाली।" श्रीनाथजी ने आचार्य जी महाप्रभु से कहा– "आज तो हमने जलेबी बहुत अच्छी आरोगी।" श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने कहा– "आपको जलेबियाँ किसने समर्पित की।" श्रीनाथजी ने कहा– "तुम्हारे सेवक रामानन्द ने समर्पित की हैं।" श्री आचार्यजी महाप्रभु ने कहा – "महाराज मैंने तो उसे त्याग दिया है, तुम उसके यहाँ क्यों आरोगते हो ?" तब श्रीनाथजी ने कहा– "तुम ऐसे सेवकों को मुझे क्यों सौंपते हो ?" हम तो तुम्हारी कानि (मर्यादा) से अङ्गीकार करते है। जिन सेवकों को तुम हमें सौंप देते हो उन्हें तुम तो त्याग सकते हो, लेकिन हम अङ्गीकार किए हुए को नहीं त्यागते हैं।" इस पर श्री आचार्यजी महाप्रभु चुप हो गए। यह बात श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदरदास हरसानी से कही। दामोदर हरसानी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से विनती की– "महाराज, आप इसे अङ्गीकार कब करोगे ?" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा– "अब इससे वैष्णवों का अपराध होगा अतः हम इसे लक्ष जन्मों के पश्चात् अङ्गीकार करेंगे।" श्रीनाथजी ने तो इसे अङ्गीकार किया है लेकिन इतना अन्तराल रहा। अतः वैष्णवों से विचार पूर्वक ही बोलना चाहिए। किसी भी सेवक को किसी भी वैष्णव के बारे में बिना विचारे नहीं बोलना चाहिए। वैष्णवों से व्यवहार बड़ी सावधानी से करना चाहिए।

अथ विष्णुदास छीपी की वार्ता

[वैष्णव - ५७, प्रसङ्ग-१]

विष्णुदास अपनी वृद्धावस्था में श्री गोकुल में श्री गुसाँईजी की बैठक के द्वार की द्वारपालकी करते थे। जब कोई पण्डित आता था तो वे पूछते कि यहाँ क्यों आए हो ? यदि पण्डित कहता कि वह श्री गुसाँईजी से शास्त्रार्थ करने आया है तो तो विष्णुदास उससे कहते कि पहले वह उन (विष्णुदास) से ही वाद (शास्त्रार्थ) कर ले। विष्णुदास उस पण्डित को व्याकरण, पुराण, इतिहास आदि

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

के शास्त्रों के उत्तर से निरुत्तर कर देते थे। इस प्रकार जो भी पण्डित आते वे विष्णुदास के प्रश्नों से ही निरुत्तर होकर चले जाते थे। पण्डित अपने मन में सोचते कि जिनका द्वारपाल ऐसा विद्वान् है उस धनी (स्वामी) का कैसा वैदुष्य होगा ? विष्णुदास श्री गुसाँईजी के पास तक किसी वादकर्ता पण्डित को नहीं जाने देते थे। सब को निरुत्तर करके वापस भेज देते थे। एक दिन श्री गुसाँई जी ने कहा– ''अब तो बहुत दिनों से कोई भी पण्डित वाद (शास्त्रार्थ) करने ही नहीं आता है।'' तब वैष्णवों ने कहा– ''महाराज, विष्णुदास द्वार पर शास्त्रार्थ करके पण्डितों को निरुत्तर कर देते हैं और वे पुनः लौट जाते है।'' यह सुनकर श्री गुसाँई जी ने विष्णुदास से कहा– ''विष्णुदास, तुमको श्री महाप्रभु की परमकृपा से बड़ी सामर्थ्य है। इसी से तुम पण्डितों को द्वार से ही निरुत्तर करके लौटा देते हो लेकिन उन पण्डितों को श्रम होता है। अतः अब जो कोई पण्डित आवे तो उसे हमारे पास तक आने देना।'' इसके बाद विष्णुदास पण्डितो को श्री गुसाँईजी तक जाने देते। विष्णुदास श्री आचार्यजी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे कि पण्डितों को शास्त्रार्थ में निरुत्तर करने की सामर्थ्य थी।

[प्रसङ्ग–2]

एक भट्ट, जो श्री गुसाँईजी का ससुर तथा श्री घनश्यामजी का नाना था। उसने श्री गुसाँईजी से कहा– ''मैं तुम्हारे सेवकों को जिमाऊंगा (भोजन कराऊंगा)।'' एक दिन उसने श्री गुसाँईजी को निमन्त्रण दिया। श्री गुसाँईजी उसके घर भोजन करने के लिए पधारे। विष्णुदास उनके साथ गडुआ (नाली वाला जल का लोटा) लेकर साथ गया था। श्री गुसाँईजी भोजन करके उठे तो विष्णुदास ने शुद्ध आचमन कराया। श्री गुसाँईजी तो भोजन करके मन्दिर में पधारे और विष्णुदास को आज्ञा दी कि तुम प्रसाद लेकर बेगि (शीघ्र) ही आना। विष्णुदास ने श्री गुसाँई जी के थार में से, जिसमें उन्होंने भोजन किया था, प्रसाद लेकर अपनी पत्तल पर रख लिया और थाल को माँज–धोकर रख दिया। इसके बाद वह प्रसाद लेने बैठा। भट्टजी सामग्री लेकर आए और उनसे (विष्णुदास) बोले कि जूँठन क्यों ले रहे हो, अछूती सामग्री ले लो। विष्णुदास ने कहा– मुझे अन्य सामग्री की आवश्यकता नहीं है, यदि आप कोई अन्य सामग्री दोगे तो मेरी पत्तल छू जाएगी। यह सुनकर भट्टजी को बहुत क्रोध आया। उन्होंने श्री गुसाँईजी से कहा– ''तुम्हारे शूद्र ने मुझसे ऐसे कहा कि मेरी पत्तल में सामग्री डालोंगे तो मेरी पत्तल

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

छू जाएगी''। श्री गुसाँईजी सुनकर चुप रहे। थोड़ी देरबाद श्रीगुसाँईजी ने भट्टजी से मुस्कराकर कहा- आप तो हमारे सेवकों को प्रसाद (जिमाने) की कह रहे थे। आप पर तो हमारा एक शूद्र भी नहीं प्रसाद (जिमाया) दिया गया। आप हमारे सेवकों को भोजन कैसे कराते ? भट्टजी मुस्करा कर चुप हो गए। वे विष्णुदास श्री आचार्यजी महाप्रभु के ऐसे परम कृपा पात्र भगवदीय थे, अतः इनकी वार्ता का अन्त नहीं है। कहां तक लिखिए ?

अथ जीवनदास क्षत्री कपूर, सीहनन्द के वासी की वार्ता

[वैष्णव-५८, प्रसङ्ग-१]

एक बार सीहनन्द के समस्त वैष्णव मिलकर श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन करने के लिए अड़ेल आ रहे थे। मार्ग में उन्होंने एक दिन की मञ्जिल (पहुंचने का स्थान) पार करके जहाँ उतरे वहाँ सभी वैष्णव अपने लिए चौका दे रहे थे। उस समय उन्होंने देखा तो बादल घुमड़ते दिखाई दिए। वैष्णवों ने कहा- ''प्रतीत होता है वर्षा आएगी।'' जीवनदास बोले- ''तुम चिन्ता मत करो।'' जीवनदास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु की शपथ देकर कहा- ''मेघ तुम्हें श्री आचार्य जी महाप्रभु की शपथ है, तू बरसे मत।'' वह मेघ वहीं थम गया। इसके बाद तो वैष्णवों ने भोग समर्पित कर महाप्रसाद लिया। रात्रि को शयन किया। सभी वैष्णव मञ्जिल (पहुँचने के स्थान) पूरी कर अडेल आ गए। वहाँ श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन किए। जब वैष्णव श्री गुसाँईजी के दर्शनार्थ उनके समीप गए तो वैष्णवों ने उनसे निवेदन किया- ''महाराज एक दिन हम सब वैष्णव सामग्री (पाक) कर रहे थे, उस समय मेघ चढ़ आया। तब जीवनदास ने आपकी शपथ देकर ऐसे-ऐसे कहकर रोका। वहीं पर श्री आचार्यजी महाप्रभु भी विराज रहे थे, उन्होंने जीवनदास से पूछा- ''क्यों रे, तू ने हमारी शपथ देकर मेघ को रोका, कदाचित् वर्षा होती तो तू क्या करता ?'' जीवनदास ने शीघ्रता से कहा- ''महाराज, वह कौन है जो आपकी शपथ देने के उपरान्त बरस सके। इन्द्र की इतनी सामर्थ्य नहीं है। जीवनदास की यह बात सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु मुस्कराकर चुप रह गए। उन जीवनदास पर श्री आचार्य जी महाप्रभु की ऐसी कृपा थी उसे उस कृपा के फल से श्री आचार्य जी महाप्रभु के स्वरूप का

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पूरा ज्ञान था ? इसीलिए श्री आचार्य जी महाप्रभु की शपथ देकर मेघ को बरसने से रोक दिया। वैष्णवों ने कहा- "ये बहुत बड़ भगवदीय है।" ये जीवनदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे अतः इनकी कथा का कोई पार नहीं है। कहाँ तक वार्ता को लिखा जाए ?

अथ भगवानदास सारस्वत ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव - ५९, प्रसङ्ग-१]

भगवानदास सारस्वत ने श्री आचार्य जी महाप्रभु की सेवा बहुत भली-भाँति से की थी इसलिए श्री आचार्य जी महाप्रभु उस पर बहुत प्रसन्न हुए। भगवान्दास पर प्रसन्न होकर श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपनी पादुकाजी की सेवा दी थी। उससे कहा- "तू इन पादुकाओं की सेवा भलीप्रकार से करना।" भगवानदास ऐसी भाँति से सेवा करने लगे कि श्री ठाकुरजी इनसे सानुभाव हो गए। श्री ठाकुरजी इससे बाते करते थे। एक बार श्री आचार्य जी महाप्रभु भगवानदास के घर पधारे। जिस स्थान पर श्री आचार्य जी महाप्रभु विराजे थे। उस स्थान पर भगवानदास किसी को पैर से स्पर्श नहीं करने देता था। प्रतिदिन प्रातः उठकर उस स्थान पर दण्डवत करता था। श्री आचार्य जी महाप्रभु के प्रति ऐसा पुनीत भाव था। अतः वे भगवान् श्री आचार्य जी महाप्रभु के परम कृपापात्र भगवदीय थे, इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखें।

अथ भगवानदास- श्रीनाथजी के भीतरिया की वार्ता

[वैष्णव - ६०, प्रसङ्ग-१]

एक समय श्रीनाथजी की बालभोग की सामग्री सिद्ध करते समय भगवान से सामग्री कुछ दाझ (जल) गई। श्री गुसाँईजी भगवानदास के ऊपर बहुत क्रोधित हो उसे सेवा से अलग करके बैठा दिया। भगवानदास गोविन्द कुण्ड के ऊपर अच्युतदास के पास जाकर बैठ गए। श्री गुसाँईजी, वहाँ गोविन्द कुण्ड पर स्नान करने हेतु पधारे। भगवानदास तो अच्युतदास के पास में पूंछरी की ओर बैठे थे। उसने अच्युतदास को समस्त वृत्तान्त सुना दिया। श्री गुसाँईजी स्नान करने के बाद अच्युतदास

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

को दर्शन देने के लिए उसके पास गए। श्री गुसाँईजी के दर्शन करके अच्युतदास के नेत्रों से अश्रुप्रवाहित होने लगे। अच्युतदास के अश्रु प्रवाह को देखकर श्री गुसाँई जी ने कहा - ''तुमको ऐसा क्या दुःख है ?'' तब अच्युतदास ने कहा- ''महाराज, श्री आचार्य जी महाप्रभु को श्रीनाथजी ने आज्ञा दी है कि आप जीवों को ब्रह्म सम्बन्ध कराओ। इस प्रकार साठ लाख जीवों को आपके द्वारा अङ्गीकार करना है। श्री आचार्यजी महाप्रभु ने यह कार्य आपको सौंपा है। जीवों को अङ्गीकार करना आपके हाथ में है। मुझे चिन्ता है कि अब जीवों का अङ्गीकार कैसे होगा ? आप तो जीवों के अपराध देखने लग गए। जीव तो सदैव अपराध से ही भरा हुआ है। कोई भी जीव अपराध से शून्य नहीं है। ऐसे जीवों को कैसे अङ्गीकार कर पाओगे। श्री गुसाँईजी यह बात सुनकर भगवानदास का हाथ पकड़कर श्रीगोवर्द्धन पर्वत के ऊपर चढ गए। श्री गोवर्द्धन नाथ जी की सेवा में यथा नियोजित कर आज्ञा दी कि सावधानी पूर्वक सेवा करना। सभी सामग्री अच्छी तरह से बनाना। भगवानदास ने उसी समय श्री गुसाँई जी के सम्मुख नया पद रचकर गाया-

राग सारंग- ''श्री विट्ठलेश चरण कमल।''

यह पद सुनकर श्री गुसाँईजी बहुत प्रसन्न हुए। फिर तो भगवानदास बहुत सावधानी से सेवा करने लगे। भगवानदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे, इनकी वार्ता का पार नहीं है। कहाँ तक लिखें ?

अथ अच्युतदास सनाढ्य की वार्ता

[वैष्णव - ६१, प्रसङ्ग-१]

अच्युतदास मानसी गंगा के ऊपर स्थित चक्रतीर्थ में रहते थे। वे प्रतिदिन शृङ्गार के समय श्रीनाथजी के दर्शन के लिये आते थे। वे दर्शन करके अपने आवास पर लौट जाते थे। इन अच्युतदास ने श्रीनाथजी की तीन दण्डवती परिक्रमा की थीं। यह जानकर श्री गुसाँईजी बहुत प्रसन्न हुए। श्री गुसाँईजी अपने श्रीमुख से कहा करते थे ''अच्युतदास बड़े भगवदीय हैं। वे महापुरुष हैं।'' इसलिये ये अच्युतदास श्री आचार्यजी महाप्रभु के

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

तथा श्री गुसाँईजी के ऐसे परमकृपा पात्र भगवदीय थे कि इनकी वार्ता का कोई पर नहीं है। इनकी वार्ता को कहाँ तक विस्तार दिया जाए।

अथ अच्युतदास गौड़ ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव - ६२, प्रसङ्ग-१]

ये अच्युतदास बड़े भगवदीय थे। इनके माथे श्री आचार्य जी महाप्रभु के श्री मदन मोहन जी की सेवा पधराई थी। आपको पाट बैठाया था। अच्युतदास श्री मदनमोहन जी की सेवा बड़े भक्तिभाव से भलीभाँति करते थे। श्री मदनमोहनजी की अच्युतदास से सानुभाव था। बातें करते थे। श्रीमदनमोहनजी अच्युतदास के ऊपर बड़ी कृपा करते थे। जब अच्युतदास श्रीनाथजी के दर्शन के लिए आते थे तो श्री गोवर्द्धननाथजी की दण्डवती परिक्रमा किया करते थे। ऐसे भगवदीय थे। जब वे श्री गुसाँईजी के पास आते थे तो श्री गुसाँई जी उन्हें अपने लिए दण्डवत-प्रणाम नहीं करने देते थे। जब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने लौकिक लीला आसुर व्यामोह लीला दिखाई तब अच्युतदास ने श्री मदनमोहन जी को श्री आचार्य जी महाप्रभु के घर में पधरा दिया। स्वयं श्री बद्रीनाथजी के दर्शन के लिए उठ चले। श्री बद्रीनाथ धाम में पहुँच कर श्री बद्रीनाथ जी दर्शन करके उन्होंने वहाँ अन्न जल त्याग दिया तथा कुछ दिन बाद अपना शरीर छोड़ दिया। इसके बाद श्री मदन मोहनलाल जी को श्री गोपीनाथ जी ने श्री गोवर्द्धननाथजी के समीप पधरा दिया। ये अच्युतदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे भगवदीय थे कि उन्होंने श्री आचार्य जी महाप्रभु का स्वरूप साक्षात् करके जाना और उनकी श्री महाप्रभु के ऊपर बड़ी आसक्ति थी। उन्होंने श्री आचार्य जी महाप्रभु से परोक्ष होते ही अन्न जल त्याग दिया और पश्चात् अपनी देह भी त्याग दी। भक्ति मार्ग का स्वरूप केवल विरहासक्ति है। ये अच्युतदास भी ऐसे ही भगवदीय थे, अतः इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए?

अथ अच्युतदास सारस्वत ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव - ६३, प्रसङ्ग-१]

एक समय अच्युतदास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के साथ पृथ्वी की परिक्रमा की थी। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने उन्हें अपनी पादुक जी की सेवा दी। अच्युतदास ने

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

भी अति उत्तम रीति से श्री पादुक जी की सेवा की। श्री आचार्य जी महाप्रभु अच्युतदास के लिए नित्य प्रति दर्शन दिया करते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने सन्यास भी केवल विरह-भावार्थ किया था। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने एक वैष्णव से कहा- "एक छोटी नाव (डौंगी) भाड़े की काशी जाने के लिए करके लाओ।" वह वैष्णव भाड़े की छोटी नाव (डौंगी) कर लाया। उसके ऊपर आरूढ़ होकर श्री आचार्य जी महाप्रभु बनारस पधारे। वहाँ उन्होंने डेढ माह तक सन्यास रखा। इसी बीच यह वैष्णव काशी में गया था। वहाँ से वह कड़ा में आया। उसने अच्युतदास तथा सभी वैष्णवों से कहा- "श्री आचार्य जी महाप्रभु ने संन्यास ग्रहण किया है।" इसके बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु काशी पधारे। वहाँ वे डेढ़ महीना तक रहे। इसके बाद आसुर व्यामोह लीला दिखाई।" यह सुनकर अच्युतदास ने उस वैष्णव से कहा- "तुझे भ्रम हुआ होगा।" उस वैष्णव ने कहा- "मैं श्री आचार्य जी महाप्रभु के साथ था, काशी से देखकर अभी अभी आया हूँ।" तब अच्युतदास ने कहा- "ऐसा कभी भी नहीं हो सकता है। वे तो जीवों को आसुर व्यामोह लीला दिखाते हैं।" तब अच्युतदास ने मन्दिर के किवाड़ खोलकर उस वैष्णव को श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन कराए। उस वैष्णव ने देखा- "श्री आचार्य जी महाप्रभु बिराज रहे है और पुस्तक (पोथी) देख रहे हैं।" उस वैष्णव ने उनको दण्डवत प्रणाम किया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "तुम सन्देह मत करो। यह प्राकट्य लौकिक रीति से देह धारण करने की लीला है और सिंहासन पर बैठकर अलौकिक लीला नित्य है। इसलिए यह लीला तो अंशावतार में प्रगट है, इसलिए यहाँ आए हैं। अतः सन्देह नहीं करना, यह आसुर व्यामोह लीला है।" इसलिए श्री गुसाँईजी ने 'सर्वोत्तम स्तोत्र' में लिखा है- "प्राकृतानुकृति व्र्याज मोहितासुर मानुषः" मनुष्य के देह धारण करने की लीला हैं। अतः अच्युतदास ऐसे स्वरूप निष्ठा वाले थे जिनको श्री आचार्य जी महाप्रभु के स्वरूप का ऐसा दृढ़ विश्वास था। अच्युतदास श्री आचार्यजी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे, अतः इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखा जाए?

अथ नारायणदास-अम्बाला वासी की वार्ता

[वैष्णव - ६४, प्रसङ्ग-१]

नारायणदास देशाधिपति के चाकर (नौकर) थे अतः उनके पास राजदरबार का बहुत काम था। कार्य बाहुल्य के कारण वे श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शनार्थ नियमित रूप से नहीं आ पाते थे लेकिन उनके मन में श्री आचार्य जी महाप्रभु के

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

दर्शन की आतुरता बहुत थी। मन में विचार ही करके रह जाते थे कि श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शनार्थ जाऊँ, लेकिन जा नहीं पाते थे। उन्होंने चार रुपया महीना में एक नौकर रखा जो क्षण-क्षण में उन्हें यह स्मरण कराता रहे कि श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन करने हेतु कब चलोगे ? ताकि श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शनों की सुधि (खबर) बनी रहे। नौकर हर समय आकर कहता था- "भैया जी, श्री आचार्यजी महाप्रभु के दर्शन के लिए कब जाओगे"? यह उस नौकर का प्रतिदिन का कार्य था। नारायणदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के लिए भेंट भेजते ही रहते थे। ये नारायणदास ऐसे भगवदीय थे जिनका ध्यान सदा श्री आचार्य जी महाप्रभु के चरणों में लगा रहता था। इससे श्री आचार्य जी महाप्रभु भी बहुत प्रसन्न रहते थे। नारायणदास ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे अतः इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखा जाए ?"

अथ नारायणदास भट्ट-मथुरावासी की वार्ता

[वैष्णव - ६५, प्रसङ्ग-१]

नारायणदास भट्ट को श्री मदन मोहन जी ने आज्ञा दी थी "वृन्दावन में अमुक स्थान पर विद्यमान हूँ। वहाँ से निकाल कर मुझे बाहर पधराओ।" नारायण भट्ट वहाँ गए और श्री मदनमोहन जी को निकाल कर बाहर पधराया। बाद में श्री गोपीनाथजी ने श्री मदनमोहन जी को पाट सिंहासन पर बैठाया। कितने ही दिनों तक तो नारायणदास भट्ट ने ही सेवा की। बाद में किसी बंगाली गौड़िया सम्प्रदाय के साधु उनकी सेवा करने लगे। श्री गोपीनाथजी ने श्रीमदन मोहन जी को पाट सिंहासन पर पधराया था, यह जानकर सब कोई उनके दर्शनार्थ जाने लगे। नारायणदास भट्ट ऐसे भगवदीय थे कि उन्हें श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक समझ कर श्री मदनमोहन जी ने उन पर कृपा की। इसीलिए वे श्रीआचार्यजी महाप्रभु के कृपापात्र भगवदीय थे अतः इनकी वार्ता का विस्तार कहाँ तक किया जाए ?

अथ नारायणदास चौहान ठट्ठे के वासी की वार्ता

[वैष्णव - ६६, प्रसङ्ग-१]

नारायणदास चौहान, ठट्ठे के बादशाह के दीवान थे और वे सम्पूर्णतः प्रशासक थे। जो वे चाहते थे वही होता था। एक बार ठट्ठे का बादशाह उनसे क्रुद्ध हो गया।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

नारायणदास को पकड़वा कर बहुत मार लगवाई। उसे कारागृह में बन्द कर दिया। उस पर पचास लाख रुपये का जुर्माना किया। उसे प्रतिदिन पाँच हजार रुपये दण्ड के रुप में भरने पड़ते थे जिस दिन यह दण्ड के रुपये जमा नहीं हो पाते थे, उस दिन उस पर पाँच सौ कोरड़ा की मार पड़ती थी। यह बंधान निश्चित किया गया था।

एक बार दो ब्राह्मण भाई जो श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक थे, अपनी कन्या के विवाह के लिए अनुदान लेने हेतु ठट्ठे के दीवान के पास आए। यहाँ आकर उन्होंने सुना कि दीवान तो बन्दीखाने में बन्द है। अत: अब यहाँ रुककर क्या करें? अब तो प्रात:काल यहाँ से चल देना ही ठीक है, ऐसा विचार किया।

नारायणदास दीवान को बन्दीखाने में किसी ने बताया कि श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक दो ब्राह्मण भाई आए है, और उन्हें बन्दीखानें में पड़ा होने का समाचार सुनकर प्रात:काल जाने वाले है। नारायणदास ने उनके पास एक व्यक्ति को भेजकर समाचार दिया कि प्रात:काल दोनों भाई बन्दीखाने में आकर मिलें। यह सुनकर दोनों भाई प्रात:काल उठे और स्नानादि देह कृत्य करके तिलक मुद्रा आदि धारण कर, श्री आचार्यजी महाप्रभु का चरणामृत और महाप्रसाद लेकर बन्दीखाने में पहुँचे। वहाँ नारायणदास से मिले। उन्होंने श्री आचार्यजी महाप्रभु का चरणामृत और महाप्रसाद उसे दिया। उसने बड़े भक्तिभाव से चरणामृत और महाप्रसाद ग्रहण किया। नारायणदास ने कहा- ''मेरे बड़े भाग्य कि आज कारागार में मुझे श्रीआचार्य जी महाप्रभु का चरणामृत और महाप्रसाद प्राप्त हुआ तथा वैष्णवों के दर्शन प्राप्त हुए।'' इसके बाद नारायणदास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के समाचार पूछे। नारायणदास उन दोनों वैष्णवों से भगवद्वार्ता करने लगे। इतने में ही नारायणदास के घर से पाँच हजार रुपयों की थैली आई। द्वारपाल ने थैलियों के ऊपर मुहर-छाप करके पाँचों थैली नारायणदास के पास भेजी। नारायणदास ने वे पाँचों थैली उन दोनों ब्राह्मण भाइयों को सौंपदी और कहा- ''इन रुपयों से आप अपनी कन्या का विवाह भलीभाँति कर लेना।'' नारायणदास ने उन दोनों भाइयों को दण्डवत प्रणाम करके कहा- ''अब तुम दोनों यहाँ से शीघ्र ही पधारों, विलम्ब मत करो। श्री आचार्य जी महाप्रभु के चरणों में मेरी और से दण्डवत प्रणाम करना।'' वे दोनों भाई वहाँ से विदा होकर चल दिये। इतने में ही बादशाह बोला- ''नारायणदास के दण्ड (जुर्मानें) की पाँच थैलियाँ शीघ्र लाओ।'' दरबान ने कहा- ''नारायणदास के घर से आने वाली थैलियों में रुपये गिनने के बाद मैं प्रतिदिन मुहर

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

छाप लगाकर नारायणदास के पास भेज देता हूँ। वह खजांची के पास जमा कराता है।'' बादशाह ने खजांची को बुलाया। खजांची (कोषाधिकारी) आकर खड़ा हो गया। बादशाह ने पूछा– ''तेरे पास नारायणदास के रुपयों की थैलियाँ आ गईं?'' खजांची ने कहा– ''अभी तक मेरे पास तो नहीं पहुँची है।'' बादशाह बहुत अप्रसन्न हुआ। नारायणदास को बन्दीखाने में से बुलाया और पूछा– ''रुपयों की थैलियाँ कहाँ है? दरबान ने मुहर छाप लगाकर तुम्हारे पास भेजी हैं। तुमने अभी तक खजांची के पास नहीं भेजी हैं।'' नारायणदास चुप रहे। बादशाह ने एक कठोर सा कोरड़ा हाथ में लेकर कहा– ''सच बता नहीं तो अभी मार लगाता हूँ।'' नारायणदास ने कहा– ''हजरत आज मेरे गुरुभाई आए थे। मैंने उनकी बेटी के विवाह के लिए वे थैलियाँ उन्हें दे दी है। इसके बदले में आज मैं पाँच सौ कोरड़ा की मार खाने को तैयार हूँ।'' यह सुनकर बादशाह चुप हो गया। उसने विचार करके कहा– ''शाबास! तू तो अपने गुरु के मार्ग पर चलने वाला सच्चा व्यक्ति है। मैं तेरे ऊँपर प्रसन्न हूँ। तेरी सारी सजा समाप्त की जाती है और तेरा पुराना औहदा (पद) यथावत किया जाता है।'' बादशाह ने उसकी बेड़ी कटवाई और उसी समय एक घोड़ा और सिरोपाव मँगवाया। नारायणदास के माथे सिरोपाव पहराया और मुक्त कर उसे घर भेज दिया। उस दिन से उसे पुनः कुल्ल कुल्ला (सम्पूर्ण राज्य) का दीवान बना दिया। नारायण दास सिरोपाव पहनकर और घोड़े पर चढ़कर अपने घर गए। वे दोनों वैष्णव ब्राह्मण भाई अभी गाँव में ही थे। वे नारायण दास से मिलने को आए। नारायणदास उनसे मिले और उनसे कहा– ''मेरे गुरु के सेवक आए तो मेरी मुक्ति हुई।'' उन वैष्णवों ने कहा– ''आप तो श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से मुक्त हुए हो।'' तब नारायण दास ने एक हजार मोहरें थैली में रखकर उन वैष्णवों के हाथों श्री आचार्य जी महाप्रभु को भेंट भेजी। वे दोनों वैष्णव वहाँ से चल दिए। कुछ दिनों में श्री गोकुल में आए। श्री आचार्य जी महाप्रभु श्री गोकुल में ही विराज रहे थे। अतः उन दोनों भाइयों ने श्री गोकुल में श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन किए और नारायणदास के द्वारा भेजी हुई एक हजार मुहरों की थैली आगे रखी। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने नारायणदास के कुशल समाचार पूछे तब उन वैष्णवों ने सारा वृतान्त सुना दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपने श्री मुख से कहा– ''जिसका वैष्णवों के प्रति ऐसा दृढ़ स्नेह होगा, उसे कष्ट क्यों कर रहेगा।'' इसके बाद वे वैष्णव श्री आचार्य जी महाप्रभु से विदा होकर घर को चले गए। उन्होंने अपनी बेटी का विवाह बहुत अच्छी तरह से किया। नारायणदास का पूर्व का नाम 'नरिया' था श्री आचार्य जी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

महाप्रभु ने उसका नाम 'नारायणदास' रखा। जिसके मन में ऐसी पवित्रता और ऐसा भक्ति भाव होता है, उसके ऊपर श्री ठाकुर जी अवश्य ही कृपा करते हैं। उनका नाम भक्त वत्सल है। वे तो थोड़ी ही भक्ति में रीझ (प्रसन्न) हो जाते है और कृपा करते है। इस प्रकार नारायणदास ऐसे कृपापात्र थे अतः उनकी वार्ता को कहाँ तक लिखा जाए?

अथ एक क्षत्राणी अकेली सीहनन्द में रहती की वार्ता

[वैष्णव - ६७, प्रसङ्ग-१]

उस क्षत्राणी के यहाँ श्री नवनीत प्रिय जी विराजते और ये श्री ठाकुर जी उस क्षत्राणी से सानुभाव थे। यह बाई अकिंचन सेवा करके सूत कातने का कार्य करती थी। उसी से निर्वाह करती थी। घर के द्वार पर एक काद्दिन तरकारी बेचने आती थी। श्री ठाकुर जी मंदिर में से ही पुकार कर कहते ओ अमुकी, तरकारी बिकने आई है तू ले। वह क्षत्राणी उस काद्दिन से सब तरह की तरकारी लेती थी। कुछ तो कच्ची ही समर्पण करती और कुछ को रसोई में छोंक कर समर्पण करती थी। कभी उस काद्दिन का शब्द श्री ठाकुर जी नहीं सुनपाते और काद्दिन आगे निकल जाती। वह क्षत्राणी कोई सामग्री नहीं ले पाती थी तो श्री ठाकुर जी उससे बहुत झगड़ते थे। जैसे लौकिक बालक अपनी माँ से झगडता है। एक कुछ भी पकवान नहीं बन पाया तो क्षत्राणी ने रोटी बनाकर घी से चुपड़ कर रात्रि के लिए रख दी। जब आधी रात हुई तब श्री ठाकुर जी ने उस क्षत्राणी को जगाया और कहा - ''मैं भूखा हूँ, कुछ खाने को दे।'' वह क्षत्राणी बोली - ''लाल जी, पकवान तो कुछ है नहीं, रोटी घी से चुपड़ कर रखी हैं, जो चाहो तो रोटी लाऊँ।'' यह कह बाई ने रोटी लाकर श्री ठाकुर जी के आगे रखी। श्री ठाकुर जी ने कहा - ''तू मुझे इस रोटी की तुतरी (टुकड़े-टुकड़े) कर दे।'' उस बाई ने तुतरी कर दी और श्री ठाकुर जी के श्री हस्त में देने लगी। श्री ठाकुर जी अपने श्री हस्त में लेकर कतर-कतर कर आरोग ने लगे। फिर जब जलपान करके पौढने लगे तो क्षत्राणी को बहुत क्षोभ हुआ और मन में विचार लिया कि सवेरे तो उधार लाकर भी पकवान बनाकर रख दूँगी। रात में श्री ठाकुर जी ने फीकी अकेली रोटी आरोगी हैं। दूसरे दिन बाई ने पकवान बनाकर रख दिया। रात्रि को जब श्री ठाकुर जी ने माँगा तो पकवान लेकर आगे रखा। श्री ठाकुर जी आरोगे और बोले - ''ओ अमुकी, तूने पकवान तो बनाया लेकिन मुझे तो पकवान के बजाय रोटी की तुतरी घनी स्वाद लगी।'' क्षत्राणी ने

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

कहा – "महाराज, मैं क्या करूँ ? मेरे कोई कमाने वाला तो हैं नहीं। मैं तो अकेली हूँ। मुझसे कुछ बन ही नहीं पाता है।" श्री ठाकुर जी ने कहा – "तू नित्य पकवान क्यों बनाती है ? मुझे तो रोटी चुपड़ के रख दिया कर। मुझे तो तेरी रोटी बहुत अच्छी लगती हैं। तू संकोच मत कर। हमें तो रोटी स्वाद लगती हैं।" बाद में तो वह बाई रोटी करके चुपड़कर रख देती थी। श्री ठाकुर जी आरोगते थे। वह क्षत्राणी श्री ठाकुर जी की ऐसी कृपा पात्र भगवदीय थी अतः उसकी वार्ता का पार नहीं अब कहाँ तक लिखें।

अथ दामोदर दास कायस्थ शेरगढ के वासी की वार्ता

[वैष्णव - ६८, प्रसङ्ग-१]

दामोदर दास कायस्थ के सेव्य ठाकुर श्री कर्पूरराय स्वरूप से बहुत गौर वर्ण थे और उनके पास ही श्री नवनीतराय विराजते थे। एक समय दामोदरदास की स्त्री वीरबाई के गर्भ रहा यथा समय उसने पुत्र को जन्म दिया। घर की बहू बेटी सब प्रसूति के कार्य में लग (जुट) गई। श्री ठाकुर जी सेवा में विलम्ब हुआ तो वीरबाई सूतक में से कहने लगी कि कोई सेवा में स्नान कर लो। श्री ठाकुर जी की सेवा में अवेर (देर) होती है। परन्तु कोई भी स्नान नहीं करती। श्री ठाकुर जी ने वीरबाई से कहा – "तू स्नान करके सेवा क्यों नहीं कर लेती है ?" तब वीरबाई ने सूतक में से उठकर कहा – "महाराज मेरी तो ऐसी अवस्था है। मैं तो सेवा में नहीं आसकती हूँ। सेवा छू जाएगी।" श्री ठाकुर जी ने कहा – "मुझे तो सेवा में विलम्ब होता है। अभी भी इतनी विलम्ब (अवार) हो गई। कोई स्नान ही नहीं कर रहा है। अतः तू ही स्नान कर ले।" तब वीरबाई ने श्री ठाकुर जी के आग्रह से उठकर प्रसूतिका में से स्नान करके और (काछ) लांग लगाकर श्री ठाकुरजी की सेवा करके भोग समर्पित किया। समयानुसार भोग सराकर अनवसर करके आई और भोजन करके खाट में सो रही। श्री ठाकुर जी की आज्ञा से उसने सेवा की। इस प्रकार चालीस दिन तक सेवा कार्य किया। श्री ठाकुर जी ने कहा – "तू ने मेरी आज्ञा का पालन भी किया और वेद मार्ग की रीति का भी अनुसरण किया।" इस पर श्री ठाकुर जी बहु प्रसन्न हुए। जब चालीस दिन व्यतीत हुए तो उसने शुद्ध स्नान करके सेवा का अनुष्ठान पुनः प्रारम्भ कर दिया। उसने पात्र, वस्त्र आदि सब अपरस (अस्पर्श) सब दूर किए। दूसरे दिन सभी कुछ नवीन मँगवाया। फिर भली भाँति से सेवा करने लग गई। इस प्रकार वह वीरबाई श्री आचार्य जी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

महाप्रभु की ऐसी कृपा पात्र भगवदीय थी, उसकी वार्ता का कोई पार नहीं है अतः कहाँ तक लिखा जाए?

अथ स्त्री-पुरुष दोनों क्षत्रीन की वार्ता

[वैष्णव - ६९, प्रसङ्ग-१]

ये दोनों स्त्री - पुरुष सीहनन्द में आकर रहने लगे। उनका घर बहुत छोटा था। एक कोठरी में ही, आधी में तो रसोई बनाते और आधी में रहते थे। श्री ठाकुर जी की शैय्या की जगह नहीं थी अतः एक बाँस का मकान (मैंडा) बनाकर उस पर श्री ठाकुर जी की शैय्या कर रखी थी। वहाँ श्री ठाकुर जी पौढते थे। आप स्त्री-पुरुष दोनों आँगन में सोया करते थे। जब चातुरमास (वर्षा ऋतु) के दिन आए। मेह बरसने लगा तब भी वे दोनों स्त्री-पुरुष आँगन में ही भीजते रहते थे। वे तब भी अन्दर आकर नहीं सोते थे। श्री ठाकुर जी अन्दर से ही आवाज लगाते थे - "ओ अमुका अमुकी हो, तुम दोनों बाहर भीग क्यों रहे हो अन्दर आकर क्यों नहीं सोते हो? तुम लोग अन्दर आ जाओ, हम तो मकान (मैंडा) पर पौढते हैं। नीचे आकर सो जाओ।" इस प्रकार क्षत्राणी बोली - "महाराज, आप तो ऊँचे मैंडा पर ऊपर पौढते हो तो हम नीचे कैसे सोवें।" श्री ठाकुर जी ने प्रसन्न होकर कहा - "हमें कोई बाधा नही है। तुम कुछ भी संकोच मत करो। हम तो तुम पर प्रसन्न होकर तुमसे कहते हैं कि अन्दर आकर सो जाओ।" तब वे दोनों अन्दर सोने लग गए। वे दोनों इस सावधानी से सोते थे कि कहीं साँस का स्वर भी सुनाई नहीं देता था। वे दोनों श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे। इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखें।

अथ सुथार कारीगर अडेल में निवास करते की वार्ता

[वैष्णव - ७०, प्रसङ्ग-१]

उस सुथार पर श्री आचार्य जी महाप्रभु की बहुत कृपा थी। सुथार का भी नियम था कि श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन के बिना एक दिन भी नहीं रहता था। वह सुथार घर के सब काम-काज त्याग कर श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन करने को आता था। उसके घर के लोग बहुत दुखी होते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु यह देखकर स्वयं ही सुथार के घर पधारने लग गए। उससे वहाँ वार्ता भी करते थे। श्री आचार्य जी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

महाप्रभु की माता इलम्मा गारू जी श्री आचार्य जी महाप्रभु से बहुत खीझती थी। उनसे कहती - "तुम ऐसा अनुचित क्यों करते हो?" तब भी चौथे - पाँचवे दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु सुथार के यहाँ अवश्य पहुँचते। श्री आचार्य जी महाप्रभु की सुथार के ऊपर ऐसी कृपा थी। वह सुथार श्री आचार्य जी महाप्रभु का ऐसा कृपा पात्र भगवदीय था। इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए।

अथ एक क्षत्री की वार्ता

[वैष्णव - ७१, प्रसङ्ग-१]

एक क्षत्री श्री आचार्य जी महाप्रभु का कृपा पात्र भगवदीय था। उसका एक अन्य मार्गीय से स्नेह था। वह क्षत्री उस अन्य मार्गीय के घर गया। उस अन्य मार्गीय ने कहा - "आज तुम यहीं पर सामग्री (पाक) सिद्ध कर लेना।" उसके आग्रह से उस वैष्णव क्षत्री ने सामग्री (पाक) करके, उस अन्य मार्गीय श्री ठाकुर जी के आगे श्री नाथ जी का नाम लेकर भोग समर्पित किया। समयानुसार भोग सराकर उस अन्य मार्गीय को प्रसाद दिया और पीछे आप स्वयं ने भी प्रसाद लिया और वहीं विश्राम किया। जब निद्रा वश हुए तो उस अन्य मार्गीय के सेव्य स्वरूप ने उससे स्वप्न में कहा - "आज तो हम भूखे रहे है।" उस अन्य मार्गीय ने कहा - "आपको तो उस वैष्णव ने भोग समर्पित किया था, आप भूखे कैसे रह गए।" तब उस अन्य मार्गीय सेव्य स्वरूप ने कहा - "वह भोग तो श्रीनाथजी ने अरोग था। हमको तो श्रीनाथजी ने वहाँ से दूर कर दिया था।" तब वैष्णव क्षत्री ने कहा - "मैंने तुमसे कितनी ही बार कहा था कि तुम श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक हो जाओ। हमारे प्रभु जी तो श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से सेवक के हाथ से ही आरोगते हैं।" फिर तो वह अन्य मार्गीय समस्त कुटुम्ब सहित उनके सेवक बन गए। इसके बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु ने उसे सेव्य स्वरूप को पञ्चामृत से स्नान करा कर पाट बैठाया और भोग समर्पित किया। समयानुसार भोग समर्पित कर सम्पूर्ण वैष्णवों को बुलाया और महाप्रसाद लिवाया। वह अन्य मार्गीय अपने श्री ठाकुर जी की सेवा भली भाँति से करने लगा। सेवा के प्रभाव से वह बहुत भला वैष्णव हुआ। वैष्णव क्षत्री के संग से अन्य मार्गीय भी उत्तम वैष्णव बन गए। इसलिए सदैव वैष्णव का संग करना चाहिए। वह वैष्णव क्षत्री श्री आचार्य जी महाप्रभु का ऐसा कृपा पात्र भगवदीय था। इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए?

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ लघु पुरुषोत्तम दास क्षत्री की वार्ता

[वैष्णव - ७२, प्रसङ्ग-१]

लघु पुरुषोत्तम दास, श्री आचार्य जी महाप्रभु और श्रीनाथजी को एक समान मानते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु के स्वरूप को साक्षात पुरुषोत्तम करके जानते थे। लघु पुरुषोत्तम दास की श्री आचार्य जी महाप्रभु के प्रति आसक्ति बहुत थी। अत: श्री आचार्य जी महाप्रभु, लघु पुरुषोत्तम दास के ऊपर बहुत प्रसन्न रहा करते थे। लघुपुरुषोत्तम दास अन्य किसी दूसरे स्वरूप को जानते ही नहीं थे। श्री ठाकुर जी तथा श्री महाप्रभु जी एक ही मानते थे। लघु पुरुषोत्तमदास ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे इसलिए उनकी वार्ता का कोई पार नहीं है। कहाँ तक लिखा जाए ?

अथ कविराज भाट की वार्ता

[वैष्णव - ७३, प्रसङ्ग-१]

वे कविराज भाट ब्राह्मण थे। ये तीन भाई थे। तीनों भाई श्री आचार्य जी महाप्रभु के परम कृपा पात्र भगवदीय थे। उनको श्री आचार्य जी महाप्रभु से नाम समर्पण कराया था। इन्होंने श्री नाथ जी के सन्निधान में रचना करके बहुत सुनाई थी। श्री आचार्य जी महाप्रभु कविराज भाट पर बहुत प्रसन्न रहते थे। ये कविराज भाट श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे परम कृपा पात्र भगवदीय थे। इनकी वार्ता कहाँ तक लिखें।

अथ गोपालदास ठोरा के वासी की वार्ता

[वैष्णव - ७४, प्रसङ्ग-१]

गोपालदास के बनाये हुए बहुत छन्द हैं। गोपालदास की आचार्य जी महाप्रभु के ऊपर बहुत आसक्ति थी। एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु अड़ेल आए। दूसरे दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु का जन्मोत्सव था। श्री आचार्य जी महाप्रभु मार्कण्डेय पूजा के लिए बैठे थे, उस समय गोपालदास ने एक छन्द की रचना करके सुनाई। [राग विलावल – "माधोमास भरि वैशाख श्री वल्लभ हरि जन्म लियौ।"] यह सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु बहुत प्रसन्न हुए। पीछे तो गोपालदास ने बहुत से छन्दों की रचना की। ये गोपालदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे। इनकी वार्ता कहाँ तक लिखें।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ जनार्दनदास चौपड़ा क्षत्री की वार्ता

[वैष्णव - ७५, प्रसङ्ग-१]

एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु श्री नाथजी के द्वार पधारे थे। बाद में वे श्री गोकुल में भी पधारे। वहाँ जनार्दन दास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु का दर्शन किया। उन्होंने कहा – ''ये साक्षात पूर्ण पुरुषोत्तम हैं, ईश्वर है।'' जनार्दनदास ने विनती की – ''महाराज, मुझे शरण लीजिए।'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने जनार्दनदास को आज्ञा दी – ''स्नान करके आओ।'' जनार्दनदास स्नान करके आए और दण्डवत किया तथा विनती की – ''महाराज, मुझे समर्पण कराइए।'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने श्री नाथ जी के सन्निधान में जनार्दनदास को समर्पण कराया। बाद में तो श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से जनार्दनदास बहुत ही भला वैष्णव हुआ। श्री आचार्य जी महाप्रभु जनार्दनदास के ऊपर बहुत कृपा करते थे। वे जनार्दनदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय हुए थे कि इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखें।

अथ गडु स्वामी सनाद्य ब्राह्मण की कथा

[वैष्णव - ७६, प्रसङ्ग-१]

आप गडु स्वामी अपने आपको स्वामी कहलाते थे। एक समय श्री आचार्यजी महाप्रभु वृन्दावन पधारे थे तब गडुस्वामी को स्वप्न में आज्ञा हुई। श्री ठाकुर जी ने इन्हें स्वप्न में बताया कि कल श्री आचार्य जी महाप्रभु यहाँ पधारेंगे अतः तुम इनकी शरण में जाना। तू इनका सेवक बन जा।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु दूसरे दिन सवेरे वृन्दावन पधारे तो गडुस्वामी स्नान करके वहाँ गए जहाँ श्री आचार्य जी महाप्रभु पधारे थे। गडुस्वामी ने जाकर दण्डवत प्रणाम किया और विनती करके कहा – ''महाराज, मुझे शरण में लीजिए।'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने मुस्करा कर कहा – ''तुम तो स्वामी हो, तुम्हें सेवक कैसे बनाया जाए।'' गडुस्वामी ने कहा – ''महाराज, मुझे भगवद् आज्ञा हुई है कि तू श्री आचार्य जी महाप्रभु की शरण में जाना। अतः महाराज, मुझको शरण लीजिए।'' तब गडुस्वामी को श्री आचार्य जी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

महाप्रभु ने नाम दिया और बाद में निवेदन कराया। इसके पश्चात गडुस्वामी ने जितने भी सेवक किए थे उन सबको भी श्री आचार्य जी महाप्रभु से नाम दिलाया। इस प्रभाव से गडुस्वामी भगवदीय हुए। श्री आचार्य जी महाप्रभु गडुस्वामी से बहुत प्रसन्न रहते थे। वे गडुस्वामी ऐसे भगवदीय थे।

अथ कन्हैया साल क्षत्री की वार्ता

[वैष्णव - ७७, प्रसङ्ग-१]

कन्हैया साल क्षत्री के ऊपर आचार्य जी महाप्रभु बहुत प्रसन्न रहते थे, बडी कृपा करते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कृपा करके अपने ग्रन्थ उन्हें पढाए। उन्हीं ग्रन्थों को कन्हैया साल के पास से श्री गुसाँई जी ने पढा। श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा से सभी ग्रन्थों में प्रवेश स्मरण हुआ। सभी ग्रन्थ (स्फूर्द) स्वरूप हो गए। कन्हैया साल श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे। अतः इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखा जाए।

अथ नरहरदास गौड़िया की वार्ता

[वैष्णव - ७८, प्रसङ्ग-१]

एक दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु ने नरहरदास के घर श्री मदन मोहन जी को पाट बैठाए थे। नरहर दास ने श्री मदन मोहन जी की सेवा (नीकी) भली भाँति से सम्पादन की थी। जब नरहर दास की देह शिथिल हुई तो सेवा नहीं कर सके नरहर दास ने श्री ठाकुर जी को श्री गुसाँई जी के घर पधरवा दिया। श्री गुसाँई जी के यहाँ श्री मदन मोहन जी पृथक् सिंहासन पर श्री गोकुल चन्द्रमा जी के निकट पधराए गए। श्री गुसाँई जी नरहरदास पर बहुत प्रसन्न हुए। नरहरदास ऐसे भगवदीय थे कि उन्होंने मन में जान लिया श्री मदन मोहन जी श्री गुसाँई जी के घर के अतिरिक्त कहीं भी सुख नहीं पाएँगे। श्री गुसाँई जी के घर में ही उन्हें सुख मिलेगा। नरहरदास, श्री गुसाँई जी के ऐसे परम कृपा पात्र भगवदीय थे अतः इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए?

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ बादरायण दास की वार्ता

[वैष्णव - ७९, प्रसङ्ग-१]

बादरायण दास अपनी पत्नी सहित मोरवी में रहते थे। उनका प्रथम नाम ''वादा'' था। एक बार आछे भट्ट द्वारिका को श्री रणछोड़ जी के दर्शन करने जा रहे थे। वे रात्रि के समय मोरवी में बादरायण दास के घर रुके। बादरायणदास ने उसके पास से नाम पाया। उन्होंने बाद में आछे भट्ट से श्री भागवत का व्याख्यान श्रवण किया। जब श्री भागवत का समापन हुआ तो आछे भट्ट पुनः द्वारिका के लिए प्रस्थान कर गए। वे द्वारिका पहुँचे और श्री रणछोड़ जी के दर्शन किए। कितने ही दिनों के बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु भी मोरवी पधारे अतः बादरायणदास ने अपनी स्त्री सहित पुनः श्री आचार्य जी महाप्रभु से नाम पाया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने उन्हें समर्पण कराया। श्री आचार्य जी महाप्रभु मोरवी में दो दिन रुककर श्री रणछोड़ जी के दर्शनार्थ द्वारिका पधारे। बादरायणदास और उनकी स्त्री भी उनके साथ ही द्वारिका गए। वे दोनों श्री आचार्य जी महाप्रभु की ऐसी सेवा करते थे कि श्री आचार्य जी महाप्रभु बहुत प्रसन्न हो गए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने इनका नाम ''वादा'' को बदल कर ''वादरायणदास'' कर दिया। जब श्री आचार्य जी महाप्रभु द्वारिका से चले तो दोनों स्त्री-पुरुष श्री आचार्य जी महाप्रभु के साथ ही मोरवी तक आए। श्री आचार्य जी महाप्रभु की आज्ञा से वे दोनों मोरवी में ही ठहर गए। श्री आचार्य जी महाप्रभु श्री गोकुल पधारे। ये बादरायणदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे परम कृपापात्र भगवदीय थे, इनकी वार्ता का भी पार नहीं है। कहाँ तक वार्ता को विस्तार दिया जाए?

अथ सद्दूपाण्डेय मानिक चन्द पाण्डे इनकी स्त्री तथा नरो बेटी-आन्यौर में रहते की वार्ता

[वैष्णव - ८०, प्रसङ्ग-१]

जब श्री आचार्य जी महाप्रभु पृथ्वी परिक्रमा करते हुए झारखण्ड में पधारे तब वहाँ उन्हें श्रीनाथजी ने उनसे कहा- ''ब्रज में तुम मेरी सेवा चलाओं। ब्रज में श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

गोवर्द्धन पर्वत है, वहाँ हम तीन दमन है। देवदमन, नागदमन और इन्द्रदमन। इन तीनों के मध्य में हमारा नाम 'देवदमन' है। सद्दू पाण्डेय का बड़ा भाई मानक चन्द पाण्डेय के यहाँ हम प्रगट हुए हैं।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपनी पृथ्वी-परिक्रमा को झारखण्ड में रोककर ब्रज को प्रस्थान कर दिया। उनके साथ दामोदर हरसानी, कृष्णदास मेघन रामदासजी माधोदास आदि पाँच-सात सेवक भी आए। ये सब आन्यौर में संध्या के समय आए और सद्दू पाण्डेय के घर पदार्पण किया। सद्दू पाण्डेय के घर के आगे एक बड़ा चबूतरा था उस पर श्री आचार्य जी महाप्रभु विराजे। सद्दू पाण्डेय ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से पूछा- ''महाराज, कुछ खाओगे?'' श्री आचार्यजी महाप्रभु ने कहा- ''हम तो कुछ भी नहीं खाएँगे।'' कृष्णदास मेघन ने कहा- ''ये तो अपने सेवक के हाथ से ही लेते है, बिना सेवक के हाथ का कुछ भी ग्रहण नहीं करते हैं।'' इतने में श्री गोवर्द्धन पर्वत से श्रीनाथजी ने पुकारा ''नरो मेरा दूध लाओ।'' तब नरो ने कहा- ''महाराज, आज तो हमारे घर पाहुने (अतिथि) आए हैं, सो दूध तो नहीं है।'' श्रीनाथजी ने कहा- ''तेरे पाहुने आए हैं तो हम क्या करें, हमारा दूध तो हमें लाओ।'' तब नरो बोली- ''वारी लाल! लाई।'' नरो कटोरा भरकर दूध ले गई और श्रीनाथजी को दूध पिलाया। श्रीआचार्य जी महाप्रभु ने दामोदरदास से पूछा- ''दमला तूने कुछ सुना?'' दामोदरदास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा- ''महाराज, सुना तो सही, पर समझा नहीं।'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- ''ये शब्द (ध्वनि) और झारखण्ड में सुना गया शब्द दोनों एक समान हैं। अतः ऐसा जान पड़ता है, श्री ठाकुरजी यहाँ ही प्रगट हुए हैं। प्रातःकाल वहाँ चलेंगे।'' इतनें मे ही नरो दूध पिलाकर आई, तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने नरो से पूछा- ''तू कहाँ गई थी और क्या ले गई थी?'' नरो बोली - ''राज, देवदमन को दूध पिलाकर आई हूँ।'' तब नरो से माँगकर कहा- ''इसमें कुछ दूध है?'' नरो ने कहा- ''रंचक (थोड़ा सा) है।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने उससे माँग कर कहा- ''इसमें जो बचा है, वह हमें दे दो।'' नरो बोली- ''महाराज घर में बहुत दूध है।'' तब सद्दूपाण्डेय ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से विनती करके कहा- ''महाराज, हम हारे और आप जीते। अब आप हमें नाम दीजिए।'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु के मानिक चन्द, सद्दूपाण्डेय, इनकी स्त्री तथा बेटी नरो ये सब सेवक हो गए। इनके सिर के ऊपर आपने अपना श्रीहत फेरा और नाम दिया। इसके बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु ने वह दूध लिया। इसके बाद उनके ही घर का दूध-

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

दही आदि सब अङ्गीकार किया, क्योंकि वे भले भगवदीय थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने सद्दूपाण्डेय से पूछा- "कहो पाण्डेय, यहाँ ऊपर देवदमन प्रगट हुए हैं? वे किस भाँति से प्रगटे है? उनके प्राकट्य का विवरण हमें सुनाओ।" श्री आचार्य जी महाप्रभु तो साक्षात् ईश्वर हैं, आप ही करते है आप ही पूछते हैं। सद्दूपाण्डेय ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा- "महाराज, हमारे गाँव का एक ग्वाला था। वह सारे गाँव की गायों को चराता था। वह सम्पूर्ण वृत्तान्त सद्दूपाण्डेय ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के आगे कहा।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने सम्पूर्ण विवरण सुना। श्री आचार्य जी महाप्रभु तो आप पूर्ण पुरुषोत्तम हैं। आप ही करते हैं। अत: ये सद्दूपाण्डेय मानिक चन्द पाण्डेय, और सभी लोग श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे परम कृपापात्र भगवदीय हैं जिनके पास से श्री आचार्य जी महाप्रभु तथा श्रीनाथजी जो चाहते हैं, वह माँग लेते हैं और आप स्वयं ही जिनके घर पधारते हैं।

[प्रसङ्ग-२]

और भी एक दिन श्रीनाथजी इनके घर दूध पीने के लिए सोने का कटोरा ले आए। श्रीनाथजी ने नरो से कहा- "जा दूध ले आ।" तब नरो तो उस कटोरे में दूध डालती जाती थी और श्रीनाथजी स्वयं दूध आरोगते जाते थे। दूध पीने पश्चात् श्रीनाथजी आप तो पधारे और सोने का कटोरा वहीं भूल आए। प्रात:काल हुआ। मंगला आरती के समय भीतरिया ने देखा मन्दिर में कटोरा नहीं। इतने में ही नरो कटोरा लेकर आ गई। नरो बोली- "लो यह तुम्हारा कटोरा ले लो। रात्रि को बालक (श्रीनाथजी) भूल आए थे।" तब सब लोग बहुत प्रसन्न हुए। वह नरो ऐसी भगवदीय थी।

[प्रसङ्ग-३]

और भी एक समय श्रीनाथजी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा- "मेरे लिये गाय मँगवा दो।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दामोदरदास हरसानी से कहा- "श्रीनाथजी ने गायों के लिए आज्ञा दी है।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपने हाथ का सोने का छल्ला उतार कर दामोदर हरसानी को दिया और कहा- "इसे बेचकर इसके मूल्य से गाय ले आओ।" दामोदर हरसानी ने सोने का छल्ला ले जाकर सद्दू पाण्डेय को दिया और कहा- "इसे बेचकर इसके मूल्य से गाय लाओ" श्री आचार्यजी महाप्रभु ने गाय मँगाई है। सद्दूपाण्डेय ने कहा- "आप गायों का क्या करेंगे?" दामोदरदास ने कहा- "श्रीनाथजी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से गाय मँगाई है, इसलिए उन्होंने कहा है।"

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

सद्दूपाण्डेय ने कहा- ''मेरे यहाँ जो गाय हैं, वह भी तो श्री आचार्यजी महाप्रभु की ही हैं, जो गाय चाहिए, उनमें से ले लो।'' दामोदरदास ने कहा- '' श्री आचार्य जी महाप्रभु की ऐसी आज्ञा हैं, इसलिए इस छल्ला को बेचकर गाय लाओ।'' सद्दूपाण्डेय ने उस छल्ला को बेचकर दो गाय खरीद कर दी। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने वे दोनों गायें श्रीनाथजी को समर्पित कर दीं। इसके बाद सद्दूपाण्डेय ने दस गाय श्री नाथजी को भेंट कर दीं। सारे वैष्णवों को ज्ञात हुआ कि श्रीनाथजी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु को गायों के लिए आज्ञा की अत: वैष्णवों ने गायें भेजना प्रारम्भ किया। किसी ने दो, किसी ने चार, किसी ने दस ऐसे करते हुए दो सौ के लगभग गायें एकत्रित हो गईं। श्रीनाथजी को गायें बहुत प्रिय हैं अत: उनका नाम गोपाल श्री आचार्य जी महाप्रभु ने रख दिया। श्री गुसाँई जी ने ''गोपाल'' नाम से ''गोपालपुर'' गाँव बसाया। इसीलिए सूरदास जी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के लिए -''प्रगट गोपाल नाम किये हैं, प्रथम गाय सुर गायो।'' कहा है। इस प्रकार सद्दूपाण्डेय तथा नरो आदि सब कोई श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे परम कृपापात्र भगवदीय थे सो इनकी वार्ता का पार नहीं है। इसलिए इनकी वार्ता अब कहाँ तक लिखे।

अथ नरहरदास संन्यासी की वार्ता

[वैष्णव - ८१, प्रसङ्ग-१]

एक बेना कोठारी था। उसने प्रथमत: नरहरदास संन्यासी के पास नाम पाया था। एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु द्वारिका पधारे थे। उस समय बेना कोठारी और नरहरदास सन्यासी दोनों श्री आचार्यजी महाप्रभु के साथ थे। वे भी द्वारिका साथ ही गए थे। वहाँ श्री आचार्य जी महाप्रभु नरहरदास सन्यासी के ऊपर बहुत प्रसन्न हुए। तब नरहरदास सन्यासी ने विनती की- ''महाराज, मेरे ऊपर कृपा करिए। मैं आपसे एक प्रार्थना करना चाहता हूँ।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु मुस्करा कर चुप रह गए फिर श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- ''क्या प्रार्थना करना चाहते हो?'' नरहरदास कोठारी ने कहा- ''महाराज, बेना कोठारी को शरण लीजिए।'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कृपा करके उसे नाम दिया और समर्पण कराया। फिर तो वे नरहरदास सन्यासी के ऊपर बहुत प्रसन्न हुए। इस प्रकार नरहरदास सन्यासी श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे। इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखा जाए?

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अथ गोपालदास जटाधारी- श्रीनाथजी की खवासी करते की वार्ता

[वैष्णव - ८२, प्रसङ्ग-१]

श्रीनाथजी गोपालदास जटाधारी से बहुत सानुभाव थे। गर्मी के दिनों में जब श्रीनाथजी को भोग आता था तब गोपालदास अपने नेत्र मूँदकर पंखा करते थे। रात्रि के समय जब श्रीनाथजी जगमोहन में पौढ़ते तो वहाँ भी गोपालदास खड़े रहकर आँख मूँदकर पंखा करते थे। चार प्रहर तक खड़े रहते, परन्तु देह में आलस्य नहीं होता था। रात्रि के समय में श्री ठाकुर जी और श्री स्वामीजी के वचन भी सुनता था। श्रीठाकुरजी अपने श्रीमुख से कहते है- ''गोपालदास, आँख खोल लो तुमसे हमारा पर्दा कैसा?'' परन्तु गोपालदास अपने नेत्र नहीं खोलता था। वह कहता- ''महाराज मुझे श्री आचार्य जी महाप्रभु की आज्ञा नहीं है। फिर मैं नेत्र क्यों खोलूँ?'' कभी श्रीनाथजी अपने श्रीहस्त से गोपालदास के मुख में कुछ देते थे, ऐसी कृपा करते थे। इस प्रकार सेवा करते हुए कितने ही दिन बीत गए। एक दिन गोपालदास ने भी आचार्य जी महाप्रभु से विनती की- ''महाराज मुझे पृथ्वी की परिक्रमा करने की आज्ञा प्रदान करो। मेरा यह मनोरथ है।'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- ''अवश्य अपना मनोरथ पूर्ण करो।'' इस प्रकार श्री आचार्य जी महाप्रभु की आज्ञा से गोपालदास पृथ्वी की परिक्रमा के लिए गए। उस समय वैष्णवों ने कहा- ''महाराज ऐसे कृपापात्र का मन, ऐसा क्यों कर होता है?'' तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- ''यह गया तो है, परन्तु जा नहीं सकेगा। दो-चार मंजिल जाने पर ही इसको विरह होगा और उस विरह में ही इसकी देह छूट जाएगी।'' तब वैष्णवों ने पूछा- ''महाराज, इसकी देह, इस प्रकार क्यों कर छूटेंगी?'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- ''इससे महाअपराध हुआ है?'' इसका श्री ठाकुरजी से विरोध है, उससे महाअपराध हुआ है। उस महाअपराध के कारण इसकी यह गति हुई हैं। इसने महाअपराध किया हैं। तब वैष्णवों ने पूछा- ''महाराज, इसकी देह इस प्रकार पड़ेगी, यह तो सही है लेकिन महाअपराध क्या हुआ है? यह तो बताओ।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- पहले यह श्रीनाथजी के बाग की रखवाली करता था। एक ब्राह्मण बालक श्री ठाकुरजी का सेवक था। रात्रि के समय बाग में से फूल चुराकर ले जाता था। एक दिन गोपालदास ने उसे देख लिया। वह बालक भागकर अपने मन्दिर

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

में छुप गया। गोपालदास ने उसे वहाँ जाकर पकड़ा और जोर से मुक्का से मारा। वह बात श्री ठाकुरजी की सुधि में अब आई कि इससे महाअपराध हुआ है। इसीलिए इसकी पृथ्वी की परिक्रमा की इच्छा हुई है। इस प्रकार गोपालदास चार मंजिल पर पहुँचा कि उसको श्री ठाकुरजी का विरह हुआ और उसने देह छोड़ दी। श्री आचार्य जी महाप्रभु जी ने जब सुना तो उन्होंने अपने श्रीमुख से कहा – "गोपालदास के परलोक में तो कोई हानि नहीं है। क्योंकि यह श्रीनाथजी के चरणों में पहुँच चुका था। लेकिन यह भी ध्यान रखे कि भगवदीय को सर्वथा विरोध नहीं करना चाहिए। यदि विरोध करेगा तो यही गति होगी। भगवदीय के विरोध से गोपालदास की यह गति हुई। यह गोपालदास श्री आचार्यजी महाप्रभु का ऐसा कृपापात्र भगवदीय था अतः इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए?"

अथ कृष्णदास ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव - ८३, प्रसङ्ग-१]

कृष्णदास एक गाँव में अकिञ्चन भाव से रहते थे। एक बार दस पन्द्रह वैष्णव मिलकर श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शनार्थ अडेल जा रहे थे। वे वैष्णव उस गाँव में आए जिसमें कृष्णदास रहते थे। वे सब वैष्णव कृष्णदास के घर गए। उस समय कृष्णदास घर में नहीं थे। वे किसी आवश्यक कार्य से गाँव से तीन कोस दूर गए हुए थे। घर में कृष्णदास की स्त्री थी अतः कृष्णदास की स्त्री ने उन वैष्णवों को दण्डवत प्रणाम किया और श्री कृष्ण स्मरण पूर्वक बहुत सम्मान दिया। उन्हें घर में बैठने का आग्रह किया। जब वैष्णव आकर बैठ गए तो वह सोचने लगी- "अब क्या करूँ?" उसके मन में विचार आया कि गाँव का एक बनिया (व्यापारी) नित्य प्रति टोक कर कहा करता है- "तू मुझसे मिल, जो तू माँगेगी, मैं दूँगा।" इसलिए आज उससे सीधा सामग्री लानी चाहिए। यह विचार करके वह उस व्यापारी की दुकान पर गई। उस व्यापारी ने उसे पुनः टोका। उस स्त्री ने उससे कहा- "मैं तुमसे कल मिलूँगी, आज तो तुम जो सौदा चाहिए वह दो।" उस व्यापारी ने कहा- "तू मुझसे प्रण करे तो मैं मानूँ।" उस स्त्री ने उससे प्रण कर दिया। उस व्यापारी ने भी उसे जो सीधा सामग्री वाञ्छनीय थी, सब दे दी। वह सामग्री लेकर घर आ गई। रसोई करके

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

श्री ठाकुरजी को भोग समर्पित किया। समयानुसार भोग सराकर अनवसर करके वैष्णवों को महाप्रसाद लिवाया। वैष्णवों ने भलीभाँति से महाप्रसाद लिया। इतने में ही कृष्णदास आ गए। उन्होंने वैष्णवों को दण्डवत प्रणाम किया और अन्दर जाकर अपनी स्त्री से पूछा- "क्या समाचार है ? वैष्णवों को महाप्रसाद लिवाया है या नहीं ?" स्त्री ने कहा- "महाप्रसाद तो लिवा दिया है।" कृष्णदास ने तत्काल पूछा- "सीधा सामग्री कहाँ से लाई और कैसे लाई ?" तब स्त्री ने सारा वृतान्त कह दिया कि बनिया मुझे टोक कर नित्य कहता था कि तू मुझसे मिल तू कहेगी वहीं दूँगा। इसलिए आज उससे मिलने का कौल (वायदा) करके सीधा सामग्री ले आई हूँ। कृष्णदास यह जानकर बड़े प्रसन्न हुए। दोनों स्त्री पुरुषों ने शीतल महाप्रसाद लिया। कृष्णदास वैष्णवों के समीप जा बैठे। सारी रात्रि भगवद्‌वार्ता में ही व्यतीत हो गई। प्रातःकाल होने पर वैष्णव लोग विदा होकर चले गए। कृष्णदास थोड़ी सी दूर तक पहुँचाने भी गया। फिर पुनः घर आकर स्नान किया और श्रीठाकुरजी की सेवा करके व्यावृत हो गए। उसकी स्त्री ने रसोई करके श्री ठाकुरजी को भोग समर्पित किय। भोग सराकर अनवसर कर महाप्रसाद ढक कर रख दिया। जब कृष्णदास सायंकाल में अपने घर आए तो दोनों ने शीतल महाप्रसाद लिया। इसके बाद कृष्णदास ने अपनी स्त्री से कहा- "तुमने कल उस व्यापारी से कौल किया था, वह तुम्हारी प्रतीक्षा में होगा। अतः उसका प्रणती निर्वाह करो।" कृष्णदास का आदेश प्राप्त कर उस स्त्री ने उबटने से स्नान किया तथा स्त्रियोचित सब श‍ृङ्गार करके जब वह स्त्री जाने का उद्यत हुई तो वर्षा आने लगी। थोड़ी देर तक मेह बरसा। मार्ग में सभी ओर कीचड़ हो गई थी। कृष्णदास ने अपनी स्त्री से कहा- "तू मेरे कन्धे पर बैठ ले। मार्ग में किचड़ हो रही है। यदि तेरे कीचड़ के पैरों को देखकर व्यापारी तेरा अनादर करेगा तो उत्तम नहीं होगा।" यह कह कर कृष्णदास अपनी स्त्री को कंधे पर बैठाकर चल दिए। व्यापारी की दुकान पर लाकर उसे कंधे से नीचे उतारा। उस स्त्री ने व्यापारी को हेला पार (आवाज लगा) कर किवाड़ खुलवाए और उस बनिया के घर में अन्दर चली गई। व्यापारी पैर धोने के लिए जल लाया और बोला- "तेरे पैर कीचड़ में भरें होंगे, इन्हें पानी से धो ले।" उस स्त्री ने कहा- "मेरे

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पैर तो सूखे है इनमें कीचड़ नहीं लगी है।'' उस व्यापारी ने कहा- ''मार्ग में तो कीचड़ बहुत है, तेरे पैर कोरे कैसे रह गए?'' उस स्त्री ने कहा- ''तूझे इससे क्या प्रयोजन है, तु तो अपना काम कर।'' व्यापारी ने कहा- ''यह तो तुझे बताना होगा। वर्षा से मार्ग कीचड़ से भरा है, तेरे पाँव सूखे कैसे रह गए? इसमें क्या रहस्य है।'' तब वह स्त्री बोली- ''तू यह पूछकर क्या करेगा?'' वह बनिया बोला- ''यह तो तुम्हें बताना होगा।'' इस पर वह स्त्री बोली- ''मेरा भर्तार (पति) मुझे कंधे पर चढ़ाकर लाया है।'' यह बात सुनकर व्यापारी को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने सम्पूर्ण वृतान्त पूछा- ''ऐसा क्या कारण है? मेरे सामने स्पष्ट कहो।'' उस स्त्री ने व्यापारी को सारा विवरण सुना दिया।, जिस प्रकार पूर्व घटनाक्रम घटित हुआ। स्त्री के मुख से घटना की जानकारी मिलने पर बनिया अपने आपको मन ही मन धिक्कारने लगा। वह बोला- ''वास्तव में तुम्हारा जन्म धन्य है। क्योंकि तुम्हारा मन सत्यता और सदाचरण से भरा हुआ है। मेरा जन्म धिक्कारमय है जिसमें पाप वासना भरी हुई है।'' उसने दोनों हाथ जोड़कर दण्डवत की और अपने अपराध के प्रति क्षमा याचना की। वह बोला -''मेरा अपराध क्षमा करो। मेरे ऊपर कृपा रखना। तुम तो मेरी बहिन हो।'' यह कह उसने बड़ा कष्ट माना। इसके बाद उस व्यापारी ने उस स्त्री को वस्त्रादि पहनाकर घर भिजवा दिया। कृष्णदास से भी उस व्यापारी ने बहुत क्षमा याचना की। बार-बार कहा कि आप इस अपराध को क्षमा कर दो। यह हमारी बहिन है। आप हमारे पूज्य हो। तब कृष्णदास ने कहा- ''तेरा क्या अपराध है? तू संकोच मत कर।'' बाद में कितने ही दिन पीछे यह व्यापारी श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक हुआ। नाम समर्पण किया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने इस बनिया का नाम 'ज्ञानचन्द रखा'यह बनिया बड़ा भगवदीय हुआ। कृष्णदास के संग से इसमें भगवद्भाव जागा। इसलिए भगवद्भक्त का ही संग करना चाहिए जिससे भगवद्भक्ति उत्पन्न हो। इसके बाद तो वह बनिया सदा कृष्णदास को नमस्कार करते रहता था। वह उसकी स्त्री से बहिन का सम्बन्ध रखता था। इस प्रकार कृष्णदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपापात्र भगवदीय थे, जिनकी वार्ता का कोई पार नहीं है। अतः इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखा जाए?

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

सन्तदास चौपड़ा क्षत्री - आगरावासी की वार्ता

[वैष्णव - ८४, प्रसङ्ग-१]

सन्तदास चौपड़ा पहले तो बहुत सम्पत्तिवान् थे। बहुत बड़ा व्यापार था। लाखों का व्यापार करते थे। सारा द्रव्य व्यापार में ही खो दिया। पीछे तो सेऊं के बाजार में कौड़ी बेचने लग गए। उनकी २४ टका की पूँजी थी अतः जब तक ढाई पैसा नहीं कमा लेते थे, तब तक वहाँ बैठे रहते थे। कौड़ियों की ढेरी की कीमत पैसों की कर रखते थे। अतः ग्राहक पैसा रखकर कौड़ियों की ढेरी ले जाते थे। संतदास वहाँ बैठकर पुस्तक बाँचते थे। किसी से बोलते नहीं थे। वे तो भगवद् रस में लीन रहते थे। कोई प्रेमी आता था तो उसे भगवद्वार्ता सुना देते थे। अन्य प्रकार की कोई भी बात नहीं करते थे। रसोई के खर्च में एक टका लगाते थे तथा धेले (आधा पैसा) की चबेनी लाकर रखते थे। रात्रि को जो भी वैष्णव आकर कथा में बैठते थे और भगवद् वार्ता करते थे, उन्हें चबेनी का महाप्रसाद बाँट देते थे। वैष्णव जन प्रसाद लेकर ही जाते थे। इस प्रकार ढाई पैसे में निर्वाह करते थे। इस प्रकार बहुत दिन बीते। एक बार गौड़ देश के नारायणदास ने सुना कि सन्तदास के लिए द्रव्य का संकोच है अतः नारायणदास ने सन्तदास को एक पत्र लिखा और एक मुहरों की थैली भेजी। वह हुण्डी कासद लेकर आया। कासद ने सन्तदास को पत्र दिया। सन्तदास ने पत्र को पढ़ा। उसमें हुण्डी लिखी थी वह भी पढ़ी। हुण्डी तो सन्तदास ने श्री गुसाँईजी के पास भेज दी और एक टका कासद को दिया। सन्तदास ने नारायणदास को पत्र लिखा, उसमें लिखा कि तुमने जो हुण्डी भेजी वह हमने अडेल श्री गुसाँईजी को भिजवा दी है। तुम्हारी प्रभुता में हमारी एक दिन की रसोई नहीं हुई। रसोई की बचत का एक टका कासद को दे दिया। जब हुण्डी अडेल पहुँची तो गुसाँई जी ने भण्डारी से हुण्डी पढवाई "वह हुण्डी एक सौ मुहरों की, नारायणदास ने गौड़ देश से सन्तदास को भेजी और सन्तदास ने उसे यहाँ (अडेल) भेजा।" श्रीगुसाँईजी ने कहा- "सन्तदास तो श्री आचार्य जी महाप्रभु के बड़े कृपापात्र भगवदीय हैं। अतः वैष्णव का द्रव्य अपने पास क्यों रखेंगे ?"

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

[प्रसङ्ग-२]

बहुत दिनों के बाद श्री गुसाँईजी ने श्री गोकुलवास किया। तब सन्तदास उत्सव के दिन आगरा से दर्शन के लिए आते थे। जब श्री गुसाँईजी आ जाते थे तो सन्तदास के यहाँ बिना उनके बुलाये ही उनके घर जाते थे। श्री गुसाँईजी उन्हें श्री आचार्य जी महाप्रभु का परम कृपापात्र सेवक समझ कर उस पर ऐसी कृपा करते थे। कितने ही दिनों के बाद जब सन्तदास की देह थकी तो श्री गोकुल से चापाभाई को बुलाया। वह चापाभाई श्री गुसाँईजी की आज्ञा मान कर आगरा आया। सन्तदास ने चापाभाई से कहा- "यह घर तुम्हारा है।" तुम चाहो तो मेरी स्त्री को एक दिन रहने देना और नहीं चाहो तो इसे गहने रख देना। अथवा इसे बेचकर दाम ले जाना। यह कह कर घर से सम्बन्धित सभी पत्र-खत चापाभाई को सौंप दिए। चापाभाई पत्र-खत लेकर श्री गोकुल आए। उन्होंने श्री गुसाँईजी को सब समाचार कहे। इसके बाद सन्तदास जब बहुत अशक्त हुए तब बहुत वैष्णव इकट्ठे हुए। उन्होंने कहा- "सन्तदास, तुम चाहो तुम्हें रेणुका स्थल अथवा मथुरा जहाँ कहो वहाँ ले चले।" तब सन्तदास ने कहा- "मुझे रेणुका स्थल क्या कृतार्थ करेगा?" तब वैष्णवों ने कहा- "श्री गोकुल ले जाएँ।" तब सन्तदास ने कहा- "श्रीगोकुल जाकर क्या राख झड़वाऊँगा?" इस प्रकार कह कर उसने आगरा में ही देह त्याग दी। वैष्णवों ने वहीं उसका संस्कार कर दिया। इसके बाद वैष्णवों ने यह बात श्री गुर्साईजी के आगे कही। श्री गुसाँईजी ने अपने श्री मुख से कहा- "सन्तदास ऐसे भगवदीय हैं, इनकी वार्ता का पार नहीं हैं। कहाँ तक लिखें।"

अथ सुन्दरदास की वार्ता

[वैष्णव - ८५, प्रसङ्ग-१]

सुन्दर दास, श्री जगन्नाथराय से दश कोस दूर एक गाँव में रहते थे। वहाँ पर श्री कृष्ण चैतन्य का सेवक माधोदास भी रहता था। सुन्दरदास और माधोदास का परस्पर प्रेमभाव बहुत था। जब सुन्दरदास श्री आचार्य जी महाप्रभु की सराहना करते थे तो माधोदास कहता था- "मेरे सर्वस्व तो श्री कृष्ण चैतन्य ही हैं। एक बार श्री आचार्य जी महाप्रभू ने वहाँ पर पदार्पण किया। सुन्दरदास ने उनकी अपने घर में पधरावनी की। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने वहाँ रसोई करके श्री ठाकुरजी को भोग समर्पित किया। जब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने भोग सराया तो माधोदास ने थाल को आते हुए देख श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

आचार्यजी महाप्रभु तो महाप्रसाद ग्रहण करके पौढ़ गए। उस समय माधोदास ने सुन्दरदास से कहा- "तेरे गुरु के हाथ से श्री ठाकुर जी ने भोग आरोगा नहीं है। मैं तो जब भोग समर्पित करता हूँ तो एक ग्रास भी भोग शेष नहीं रहता है।" सुन्दरदास ने यह चर्चा श्री आचार्य जी महाप्रभु से की। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने माधोदास से जब पूछा तो उसने अपने ठाकुर जी का भोग आरोग ने का सारा वृत्तान्त सुना दिया। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने माधोदास से कहा - "कल हम तेरे घर आएँगे और देखेंगे कि हमारे आगे श्री ठाकुर जी भोग आरोग लेंगे, तो हम जानेंगे।" दूसरे दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु माधोदास के घर पधारे और कहा - "माधोदास, अब तू श्री ठाकुर जी के आगे थाल से भोग रखो।" तब माधोदास ने प्रतिदिन की भाँति श्री ठाकुर जी के आगे भोग रखकर बाहर आ गया। श्री आचार्य जी महाप्रभु मंदिर के द्वार पर बैठे रहे। वहाँ एक प्रेत नित्य प्रति आकर श्री ठाकुर जी के आगे से भोग खा जाता था। वह प्रेत उस दिन भी आया लेकिन मंदिर के द्वार पर श्री आचार्य जी महाप्रभु को देखा। वह प्रेत लज्जित (खिस्या ना) होकर बोला - "राज, अब तो भूखा रहना पड़ेगा।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "अब तक तूने जो खाया, सो खाया, लेकिन अब तू भोग नहीं खा पाएगा। अब तू यहाँ से चला जा।" वह प्रेत वहीं से पुनः (वापिस) लौट गया। जब माधोदास भोग सराने के लिए गया तब देखा कि थाल ज्यों का त्यों ही रखा है। तब माधोदास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से कहा - "आपके सामने मेरे श्री ठाकुर जी ने संकोच से भोग आरोगा नहीं है।" इस प्रकार सामान्य वचन कहे। श्री आचार्य जी महाप्रभु उसकी बातें सुनकर चुप रहे। कुछ भी नहीं बोले। जब माधोदास रात्रि के समय सोया तब श्री ठाकुर जी के अनुचर आकर माधोदास को पीटने लगे। उसे बहुत मारा। खाट से औंधा कर पटक दिया। माधोदास ने उसने पूछा - "तुम लोग मुझे क्यों मारते हो?" तब श्री जगन्नाथ राय जी ने कहा - "तू ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से सामान्य वचन क्यों बोले? तू बता मैंने तेरे यहाँ कब भोग आरोगा है। जो तू भोग रखता था, उसे तो एक प्रेत खा जाता था। आज द्वार पर श्री आचार्य जी महाप्रभु बैठे थे इसलिए वह भोग नहीं खा सका। तू उनसे अनुचित बोला है। वे तो मेरे ही स्वरूप हैं।" माधोदास ने श्री ठाकुर जी से कहा - "मैं प्रातःकाल श्री आचार्य जी महाप्रभु से क्षमा याचना कर लूँगा। मैं उनसे अपना अपराध क्षमा करा लूँगा। मुझे तो आज तक कुछ ज्ञान ही नहीं था।" प्रातःकाल उठकर माधोदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के पास आया और विनती करके बोला - "महाराज, मेरा अपराध क्षमा हो। मैं आपके स्वरूप को नहीं

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पहचानता था।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु तो परम दयालु हैं प्रसन्न होकर बोले - ''इसमें तेरा क्या अपराध है? हम तेरे ऊपर बहुत प्रसन्न हैं।'' माधोदास ने विनती की - ''महाराज, आप मेरे घर पधारिए।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु माधोदास के घर पधारे। प्रसन्न होकर माधोदास को नाम सुनाया उसके बाद निवेदन कराया। इसके बाद श्री आचार्य जी महाप्रभु ने माधोदास के ठाकुर को पंचामृत से स्नान कराया। श्री ठाकुर जी का शृङ्गार करके सिंहासन पर पाट बैठाया। इसके पश्चात् श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पाक सिद्ध करके भोग समर्पित किया। समयानुसार भोग सराकर, अनवसर करके, श्री आचार्य जी महाप्रभू ने माधोदास से कहा - ''तू वैष्णवों को बुला ला।'' माधोदास ने कहा - ''महाराज, पाँच -सात वैष्णवों को बुला लाऊँ?'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - ''पाँच-सात की क्या बात है? तू जितने वैष्णवों को बुलाना चाहे, बुला ला।'' माधोदास ने कहा - ''महाराज, प्रसाद तो थोड़ा सा ही है, यदि वैष्णव अधिक आएँगे तो प्रसाद सभी के लिए पूरा कैसे होगा ?'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने माधोदास से कहा - ''अरे, तेरी बुद्धि मारी गई है, प्रसाद कभी भी नहीं घटता है। तेरे गाँव में जितने वैष्णव हैं, उस सब को बुला ला।'' माधोदास गाँव भर के सारे वैष्णवों को बुला लाया। वहाँ सभी वैष्णवों को महाप्रसाद लिवाया गया, तो भी थाल भरा ही रहा। तब माधोदास से श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - ''वैष्णव के विषय में तो विश्वास होना चाहिए। भगवत प्रसाद सदा अटूट ही रहता है।'' इस प्रकार माधोदास को श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अङ्गीकार किया। सुन्दर दास के संग से माधोदास का मोह भंग हुआ। इसलिए संग तो वैष्णव का ही करना चाहिए। सुन्दरदास, श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय थे, इसलिए इनकी वार्ता को कहाँ तक लिखा जाए?

अथ मावजी पटेल व उनकी स्त्री विरजो की वार्ता

[वैष्णव - ८६, प्रसङ्ग-१]

मावजी पटेल तथा उनकी स्त्री विरजो दोनों वर्षभर में दो बार श्री नाथ जी एवं श्री गुसाँई जी के दर्शन करने के लिए श्री गोकुल में आया करते थे। श्री गुसाँई जी उन पर बहुत प्रसन्न रहते थे। उनके ऊपर बहुत कृपा करते थे। उनका कृष्णभट्ट से संग हुआ। उन्होंने कृष्णभट्ट से कहा - ''तुम हमारे माथे सेवा पधराओ। कृष्णभट्ट ने श्री गुसाँई जी की आज्ञा से उनके माथे सेवा पधराई। श्री गुसाँई जी ने उनके सेव्य श्री ठाकुर जी को पाट बैठाया। वे दोनों बड़े स्नेह भाव ने भलीभाँति सेवा करते थे। श्री महाप्रभु के सेवक

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

वहाँ से दस कोस पर रहते थे, उनको महाप्रसाद लिवाया करते थे। इस प्रकार की भलीभाँति सेवा कृष्णभट्ट के सत्सङ्ग से कर पाए।''

[प्रसङ्ग-२]

एक बार उत्सव के दिन सब वैष्णव प्रसाद लेने के लिए बैठे थे। विरजों ने वैष्णवों को अनसरवड़ी महाप्रसाद परोसा। उस समय उसके मन में यह भाव उत्पन्न हुआ कि ''सभी वैष्णवों की मण्डली को किसी दिन मैं अपने हाथ से सरवड़ी महाप्रसाद करूँ।'' विरजो ने कृष्णभट्ट से विनती की - ''महाराज, मेरा ऐसा मनोरथ है कि वैष्णव मण्डली बैठी हो और में उनको अपने हाथ से सरवड़ी महाप्रसाद लिवाऊँ।'' कृष्णभट्ट ने कहा - ''ऐसा मनोरथ तो भक्तिभाव से ही होता है लेकिन यह द्रव्य-साध्य है।'' विरजो ने पूछा - ''द्रव्य साध्य शब्द का अर्थ मुझे खोल कर समझाओं।'' तब कृष्णभट्ट ने कहा - ''वैष्णव मण्डली को लेकर श्री गुसाँई जी के पास श्री गोकुल पहुंचा जावे और उनसे मनोरथ निवेदन किया जावे। फिर जो उनकी आज्ञा हो, वह किया जावे। श्री गुसाँई जी की आज्ञा हो जाए तो ही सखड़ी महाप्रसाद लिया जा सकता है। अत: यह द्रव्य साध्य है। मार्ग का सारा खर्च वहन करना ओर वैष्णव मण्डली की आज्ञा लेना।'' इसके पश्चात् विरजो ने मावजी पटेल से अपना मनोरथ कहा और कृष्णभट्ट का प्रस्ताव उसके सम्मुख रखा। मावजी पटेल ने कहा - ''मेरे पास दो लक्ष मुद्रा है, यदि इससे मनोरथ पूर्ण होना सम्भव हो तो करिए।'' कृष्णभट्ट ने कहा - ''इतने द्रव्य से कार्य तो हो जाएगा। अपने को श्री गुसाँई जी के पास चलना चाहिए, उनकी जो आज्ञा हो, वह कार्य करना चाहिए।'' मावजी की गाँठ में द्रव्य बहुत था अत: सभी द्रव्य को लेकर उज्जैन आए। वहाँ कृष्णभट्ट ने समस्त वैष्णवों को इकट्ठा किया और श्री गुसाँई जी के दर्शनार्थ श्री गोकुल जी के लिए प्रस्थान किया। श्री गोकुल में आकर श्री गुसाँई जी के दर्शन किए। तत्पश्चात् कृष्णदाभट्ट ने श्री गुसाँई जी से विरजो का मनोरथ निवेदन किया। कृष्णभट्ट ने कहा - ''महाराज, विरजो का मनोरथ है कि वैष्णव मण्डली बैठी हो, और विरजो अपने हाथ से समस्त वैष्णव मण्डली को सखड़ी महाप्रसाद परोसे।'' श्री गुसाँई जी ने कहा - ''यह मनोरथ तो पुरुषोत्तम क्षेत्र के बिना पूर्ण नहीं हो सकता है।'' श्री गुसाँई जी की आज्ञा पाकर विरजो समस्त वैष्णव मण्डली को लेकर श्री जगन्नाथ राय के दर्शनार्थ चल दी। कितने ही दिनों में विरजों समस्त वैष्णव मण्डली सहित श्री जगन्नाथ रायजी के धाम में पहुँची। वहां सर्वप्रथम श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

जगन्नाथ राय के दर्शन किए और नाना प्रकार की सामग्री सिद्ध करा कर श्री जगन्नाथराय के लिए भोग समर्पित किया। इसके बाद वह महाप्रसाद सरवड़ी व अनसरवड़ी सब प्रकार का विरजो ने अपने हाथ से वैष्णव मण्डली को परोसा। वैष्णव मण्उली को महाप्रसाद लिवा कर विरजो ने अपना मनोरथ सफल किया। मनोरथ पूर्ण होने के बाद विरजो कुछ दिन तक वहाँ रही, फिर वैष्णव मण्डली सहित श्री गोकुल में आई। श्री गुसाँई जी के दर्शन किए। दण्डवत प्रणाम करके समस्त वृत्तान्त श्री गुसाँई जी को सुनाया। श्री गुसाँई जी बहुत प्रसन्न हुए। इसके बाद जो भी द्रव्य शेष रहा वह समस्त श्री गुसाँई जी को भेंट कर दिया। श्री गुसाँई जी विरजों के भाव से बहुत प्रसन्न हुए। श्री गुसाँई जी ने समस्त वैष्णवों को प्रसाद लिवाया। तत्पश्चात् श्री गुसाँई जी ने अपने आप प्रसाद ग्रहण किया। श्री गुसाँई जी वैष्णव मण्डली सहित विरजो के साथ श्री नाथ जी द्वार पधारे। वहाँ श्री नाथजी के दर्शन किए। इस प्रकार जब विरजो का सब मनोरथ पूर्ण हो गया तो वह श्री नाथ जी तथा श्री गुसाँई जी से विदा लेकर सभी वैष्णवों सहित अपने देश को चली गई। वह विरजो ऐसी भगवदीय थी।

[प्रसङ्ग-३]

विरजो वर्ष में दो बार श्री गोकुल में आया करती थी। वह एक गाड़ा (बड़ी गाड़ी) गुड़ तथा एक गाड़ा घी भरकर लाती थी। वहाँ वह एक माह तक रहती थी। उनमें से पन्द्रह दिन तो श्री गोकुल में तथा अगले पन्द्रह दिन श्रीनाथजी द्वार में ठहरती थी। उसका क्रम रहता था कि वह सामग्री सिद्ध कर के भोग समर्पण कर भोग सराकर ढक कर रख देती थी। जब गायों के ग्वाले आते तो महाप्रसाद और दूध अङ्गीकार करते। उनको खिरक में ही महाप्रसाद लिवाती थी। जब वहाँ से आती थी तो दोनों स्थानों पर पधरावनी कराती थी। इस प्रकार वह विरजो पद्मरावल के संग से ऐसी भगवदीय थी। इसलिए संग करे तो भगवदीय का ही संग करे। विरजो की वार्ता का कोई पार नहीं है अतः कहाँ तक उल्लेख करें।

अथ गोपालदास नरोड़ा वासी की वार्ता

[वैष्णव - ८७, प्रसङ्ग-१]

श्री आचार्य जी महाप्रभु ने गोपालदास को आज्ञा दी थी कि तुम सभी को नाम दिया करो। उनकी आज्ञानुसार गोपालदास नाम देते थे। एक बार श्री आचार्य जी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

महाप्रभु नरोड़ा पधारे। उस समय गोपालदास घर पर नहीं थे। गोपालदास के बेटे घर पर थे। गोपालदास व्यावृत्ति (उदरपूर्ति के लिए किया जाने वाला कार्य) के लिए गए थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने गोपालदास के बेटों से पूछा – ''गोपालदास कहाँ गए है ?'' गेपालदास के बेटों ने कहा – ''श्री ठाकुर जी के काम से गए हैं।'' यह सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु का मन अप्रसन्न हुआ। उन्होंने विचारा कि गोपालदास के बेटे ऐसे कैसे बोलते हैं। ये कैसे वैष्णव है ? श्री आचार्य जी महाप्रभु ने विचार किया – ''यहाँ रहना उचित नहीं हैं।'' पुनः मन में विचार आया – ''गोपालदास को भी आ जाने दें, देखते हैं वह कैसे बोलते हैं ?'' संध्या के समय गोपालदास आए। उन्होंने श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन किए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने गोपालदास से पूछा – ''गोपालदास, तुम कहाँ गए थे ?'' गोपालदास बोला – ''महाराज, यह पेट लगा है, इसकी पूर्ति हेतु व्यावृत्ति को गया था।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपने श्री मुख से कहा – ''यह वैष्णव का लक्षण है कि निज उदरपूर्ति हेतु की जाने वाली व्यावृत्ति में श्री ठाकुर जी का नाम न ले।''

[प्रसङ्ग–२]

एक समय गोपालदास श्रीनाथजी के दर्शन के लिए आए। उनके साथ एक सेवक भी था। वहां उन्हें ज्वर चढ़ आया। दो – चार लंघन भी किए। रात्रि के समय गोपालदास को प्यास लगी। उन्होंने सेवक से जल माँगा। सेवक गहरी नींद में था। अतः उसने नहीं सुना। श्री ठाकुर जी जलपान की झारी लेकर स्वयं पधारे और गोपालदास को जल पिलाया। वे उस झारी को वहाँ (गोपालदास के निकट) ही रख आए। श्री नाथ जी का हृदय अति कोमल है अतः भक्त की आर्त्त को सह नहीं सकते हैं।

[प्रसङ्ग–३]

और भी–एक दिन गोपालदास ने विरह में चौपरा गाया –

''सिरवंडी श्यामघन सखी कंठ मनोहर हार।

धन्य दिन जिन देख सूं नयनन नन्द कुमार॥''

उन्होंने ऐसे बहुत चौपरा लिखे हैं।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

[प्रसङ्ग-४]

अन्यच्च - एक समय श्री गुसाँई जी नरोड़ा पधारे थे। उन्होंने वहाँ गाँव से बाहर ही अपना डेरा किया। उत्थापन के समय गोपालदास श्री गुसाँई जी के दर्शन के लिए आए। उस समय गोपालदास से दो वैष्णवों ने कहा - "हमें श्री गुसाँई जी से नाम दिलाओ।" गोपालदास ने कहा - "जो नाम हम देते हैं, वही नाम श्री गुसाँई जी देते हैं। अतः तुम्हें घर चलकर नाम देंगे।" उन वैष्णवों का मन श्री गुसाँई जी से नाम पाने का था, अतः उन्होंने तीन बार गोपालदास से यही कहा। तीनों बार गोपालदास ने उनसे पूर्ववत् ही कहा - "घर चलकर हम तुम्हें नाम देंगे।" यह बात श्री गुसाँई जी ने अपने कानों से सुन ली। श्री गुसाँई जी ने उन वैष्णवों से पूछा - "तुम क्या चाहते हो।" उन वैष्णवों ने कहा - "महाराज, हमको नाम दीजिए।" श्री गुसाँई जी ने उन्हें नाम सुनाकर कृतार्थ किया। फिर गोपालदास से श्री गुसाँई जी ने कहा - "गोपालदास, तुम्हारे द्वारा दिया गया नाम श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अङ्गीकार किया है, वह तो ठीक है। लेकिन जिन्होंने तुम से नाम पाया है, वह हमारा तो कभी भी हो नहीं सकता है। यह बात श्री गुसाँई जी ने गोपालदास से क्षोभ करके कहीं थी। इसके बाद तो गोपालदास ने जिनको भी नाम दिया था, उन सभी को श्री गुसाँई जी से नाम दिलाया गया। तभी वे सब कृतार्थ हो सके श्री गुसाँई जी से नाम पाने से पूर्व से सब "गंगोज्ब" कहे जाते थे। गोपालदास के स्वामित्व के कारण इन जीवों का अकाज (हानि) भी हुआ। गोपालदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के कृपापात्र भगवदीय थे इनकी वार्ता कहाँ तक लिखी जाए?

अथ सूरदास - गऊघाट पर रहते की वार्ता

[वैष्णव - ८८, प्रसङ्ग-१]

एक समय श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अड़ेल से व्रज में पदार्पण किया। कितने ही दिनों के बाद वे गऊघाट पर आए। गऊघाट आगरा और मथुरा के बीचों बीच है। श्री आचार्यजी महाप्रभु गऊघाट पर उतरे। वहाँ उन्होंने स्नान करके संध्या वंदन किया। इसके पश्चात् श्री आचार्य जी महाप्रभु सामग्री करने के लिए बैठे। उनके साथ सेवकों का समाज भी बहुत था। सभी सेवक अपने अपने श्री ठाकुरजी के लिए रसोई करने लग गए। गऊघाट के ऊपर सूरदास जी का स्थल था। सूरदास जी स्वामी थे अतः वे

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

सेवक भी बनाते थे। वे भगवदीय थे। वे गायन भी अच्छा करते थे। बहुत लोग सूरदास जी के सेवक हो चुके थे। जब श्री आचार्य जी महाप्रभु गऊघाट पर उतरे तो सूरदास जी के सेवकों ने उनसे जाकर कहा– ''वे श्री आचार्य जी महाप्रभु स्वयं ही पधारे हैं, जिन्होंने दक्षिण में दिग्विजय किया है, सभी पण्डितों को जीतकर भक्तिमार्ग की स्थापना की है। श्री वल्लभाचार्य यहाँ पधारे हैं।'' सूरदास जी ने अपने सेवकों से कहा– ''तू जाकर दूर बैठजा। जब भोजन बनाकर विराजें तो मुझे खबर (सूचित) करना। हम श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शनार्थ वहाँ जाएँगे।'' वह सेवक थोड़ी दूर जाकर बैठ गया। श्री आचार्य जी महाप्रभु पाक सिद्ध कर रहे थे। श्री आचार्यजी महाप्रभु ने भोग समर्पित किया। पीछे समयानुसार भोग सराकर अनवसर किया तथा श्री आचार्य जी महाप्रभु महाप्रसाद लेकर गद्दी के ऊपर विराजे। वहाँ सेवक भी पहुँचकर श्री आचार्य जी महाप्रभु के आस–पास आकर बैठ गए। उसी समय सूरदास जी का सेवक आया और उसने सूरदास जी से कहा– ''श्री आचार्यजी महाप्रभु विराज रहे हैं।'' तब सूरदास जी अपने स्थल से श्री आचार्यजी महाप्रभु के दर्शनों के लिए आए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा– ''सूर आओ बैठो। तब सूरदास जी आचार्यजी महाप्रभु के दर्शन करके आगे आ बैठे।'' श्री आचार्यजी महाप्रभु ने कहा– ''सूर कुछ भगवद् यश वर्णन करो। सूरदास जी ने कहा– ''जो आज्ञा।'' सूरदास जी ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के आगे एक पद गाया–

पद रागघनाश्री– **हों हरि सब पतितन को नायक।**
को करि सके बराबरि मेरी इते मान कौ लायक ॥१॥

जो तुम अजामिल सों कीनी सो पाती लिख पाऊँ।
होय विश्वास भलौ जिय अपनैं औरहुं पतित बुलाऊँ ॥२॥

सिमटे जहां तहां ते सब काऊ आय जुरेइक ठौर।
अबके इतने आन मिलाऊं बेर दूसरी और ॥३॥

होड़ा होड़ा मन हुलास करि करे पाप भर पेट।
सबहिन ले पायन तर परिहों यही हमारी भेंट ॥४॥

ऐसी कितनीक बनाऊं प्रानपति सुमिरन है भयौ आडौ।
अबकी बेर निवार लेउ प्रभु सूर पतित को ठाडौ ॥५॥

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

और पद गाया- **राग घनाश्री-**

प्रभु मैं सब पतितन को टीकौ।
और पतित सब द्यौस चारि के मैं तो जन्मत ही कौ ॥१ ॥
बधिक अजामिल गनिका तारी ओर और पूतना ही को।
मोहि छांडि तुम और उधारे मिटै शूल क्यों जी को ॥२ ॥
कोउ न समरथ सुद्ध करन कों खेंचि कहत हों लीको।
मरियत लाज सूर पतितन में कहत सबन में नीको ॥३ ॥

जब सूरदास ने ऐसे पदों को श्री आचार्य जी महाप्रभु के आगे गाकर सुनाया तो सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "सूर होकर ऐसे क्यों गिड़गिड़ा रहे हो। कुछ भगवल्लीला का वर्णन करके सुनाओ।" सूरदास ने कहा- "महाराज, मैं तो कुछ समझना नहीं हूँ।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "जा स्नान करके आ। हम तुझे समझाएँगे।" सूरदास स्नान करके आए तो श्री आचार्य जी महाप्रभु ने सर्वप्रथम उसे नाम सुनाया, फिर समर्पण कराया, और इसके बाद दशम स्कन्ध की अनुक्रमणिका कही। इससे उसके समस्त दोष दूर हो गए और सूरदास को नवधा भक्ति की सिद्धि हुई। इसके बाद सूरदास ने भगवल्लीला का वर्णन किया। दशम स्कन्ध की अनुक्रमणिका से सम्पूर्ण लीला की स्फूरणा (ज्ञान) हुई। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने दशम स्कन्ध की सुबोधिनी में मंगलाचरण का श्लोक सूरदासजी ने कहा-

नमामि हृदये शेषे लीलाक्षीराब्धिशायिनम्।
लक्ष्मी सहस्त्र लीलाभिः सेव्यमानं कलानिधिम्॥

[नित्य (अक्षर) लीला रूप समुद्र में हृदय रूपी शेष पर शयन करने वाले सहस्त्रों लक्ष्मी लीलाओं से सेव्य कलानिधि (चन्द्र) को मैं नमस्कार करता हूँ।]

उसी समय श्री महाप्रभु के सन्निधान में पद की रचना कर गाया-

राग विलास- चकई री चलि चरण सरोवरि जहाँ न प्रेम वियोग।

यह पद सम्पूर्ण करके सूरदास ने गाया। यह पद दशम स्कंध के मङ्गलाचरण की कारिका के अनुसार रचा। इसमें कहा- "तहां श्री सहस्त्र सहित नितक्रीडत शोभित।" सूरदास ने जब इस प्रकार के पद लिखें तो श्री आचार्य जी महाप्रभु ने जान लिया कि सूरदास को सम्पूर्ण सुबोधिनी की स्फूरणा (ज्ञात) हो गई है और लीला का अभ्यास

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

हुआ है। इसके बाद सूरदास ने नन्दमहोत्सव की रचना की और श्री आचार्य जी महाप्रभु ने आगे पद गाया–

राग देवगन्धार– ''ब्रज भयो महर के पूत जब यह बात सुनी''

यह पद सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने अपने श्री मुख से कहा– ''सूरदास तो मानों कहीं निकट ही विराजमान थे।'' इसके बाद सूरदास ने अपने जितने सेवक किए थे, उन सब को श्री आचार्य जी महाप्रभु से नाम दिलाया। इसके बाद सूरदास जी ने बहुत से पदों की रचना की। श्रीआचार्य जी महाप्रभु ने सूरदास को ''पुरुषोत्तम सहस्रनाम'' सुनाया। तब सूरदास जी को सम्पूर्ण भागवत की स्फूरणा (ज्ञात) हुई। इसके बाद जो भी पद लिखें वे भागवत के प्रथम स्कन्ध से द्वादश स्कन्ध तक के लिखे। ये सूरदास श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे परम कृपापात्र भगवदीय थे। तत्पश्चात् श्री आचार्य जी महाप्रभु ने गऊघाट पर दो-तीन दिन तक निवास किया। इसके बाद उन्होंने व्रज में पदार्पण किया। उस समय सूरदास जी भी श्री आचार्य जी महाप्रभु के साथ ब्रज में आ गए।

[प्रसङ्ग–२]

अब श्री आचार्य जी महाप्रभु ब्रज को पधारे तो प्रथम बार श्री गोकुल में पधारे। उनके साथ सूरदास जी आए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपने श्रीमुख से सूरदास जी को कहा– ''सूरदास श्री गोकुल के दर्शन करो।'' सूरदास जी ने श्री गोकुल को दण्डवत् प्रणाम किया। दण्डवत प्रणाम करते ही श्री गोकुल की बाल लीलाओं की स्फुरण (ज्ञान) सूरदास जी के हृदय में उद्भावित हुईं। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने श्री भागवत की सकल लीलाएं सूरदास जी के हृदय में समावेशित कर दी थीं अतः श्री गोकुल के दर्शन करते ही सकल बाललीलाओं की स्फुरणा (ज्ञान) श्री सूरदास जी को हुई। सूरदासजी ने विचार किया कि श्री गोकुल की बाललीलाओं का वर्णन करके श्री आचार्य जी महाप्रभु के आगे सुनाना चाहिए। उन्होंने सर्वप्रथम जन्मलीला का पद सुनाया और फिर श्री गोकुल की बाललीला का पद गाया–

पद– राग विलावल **सोभित कर नवनीत लिये।**
घुटुरुन चलत रेणु तन मंडित मुख दधि लेप किये॥१॥
चारु कपोल लोल लोचन गोरोचन तिलक दिये।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

लट लटकत मानो मत्तमधुपगन माधुरी मधुर पिये ॥२ ॥
कठुला कंठ व्रज केहरिनख राजत रुचिर हिये।
धन्य सूर एकौ पल या सुख कहा भयोशत कलप जिये ॥३ ॥

यह पद सूरदासजी ने गाया जिसे सुनकर आप बहुत प्रसन्न हुए और भी बहुत से पद गाए। तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने विचार किया कि श्रीनाथजी के यहाँ और तो सभी प्रकार के मण्डान (विधान) हो गया हैं लेकिन कीर्तन का मण्डान (विधान) नहीं किया है अतः यह सेवा सूरदास जी को दे दी जाए। यह विचार करके आप श्रीजी द्वार पधारे तथा सूरदास जी को भी अपने साथ ले गए। श्रीनाथजी द्वार पधारकर आपने स्नान किया और मन्दिर में पधारे। सूरदास जी से कहा कि स्नान करके ऊपर आओ तथा श्रीनाथजी के दर्शन करो। सूरदास जी पर्वत के ऊपर गए। वहाँ श्रीनाथजी के दर्शन किए। तब आपने सूरदास जी से कहा- "श्रीनाथजी को कुछ सुनाओ।" सूरदास जी ने आज्ञा के अनुसार प्रथम विज्ञप्ति का पद सुनाया-

पद - रागघनाश्री- **"अब हौं नाच्यौ बहुत गुपाल।"**

यह पद सम्पूर्ण करके श्रीनाथजी के आगे सुनाया तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा- "सूरदास अब तुम मैं कुछ भी अविद्या शेष नहीं है।" तुम्हारी अविद्या तो प्रभु ने दूर कर दी हैं। इसलिए अब कुछ भगवद् यश वर्णन करो। इसके पश्चात् सूरदास जी ने माहात्म्य और लीला का यश गाकर सुनाया।

पद - राग गौरी- **"कोन सुकृत इन व्रज वासिन को।"**

यह पद सम्पूर्ण करके गाया। इस पद को सुनकर श्री महाप्रभु जी बहुत प्रसन्न हुए। जैसा श्री आचार्य जी महाप्रभु ने मार्ग का प्रकाश किया, उसी के अनुसार सूरदास जी ने पदों की रचना की। श्री आचार्य जी महाप्रभु के मार्ग का क्या स्वरूप है? "माहात्म्य ज्ञान पूर्वक सुदृढ़ स्नेह की तो पराकाष्ठा है। स्नेह के आगे 'माहात्म्य' रहता ही नहीं है। अतः भगवान बार-बार माहात्म्य जानते हैं। नाम प्रकरण में- पूतना, शकटासुर, तृणावर्त, गर्गाचार्य, यमलार्जुन, वैकुण्ठ दर्शन आदि लीलाओं के माध्यम से बहुत माहात्म्य बताया है लेकिन इन ब्रह्मभक्तों का स्नेह भी परम काष्ठापन्न है। इसलिए जब तक लीला की स्मृति रहे तब तक ही माहात्म्य रहे, धीरे-धीरे वह विस्मृत हो जाता है और स्नेह सदा बना रहता है।"

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

[प्रसङ्ग-३]

सूरदास जी ने सहस्त्रों पद लिखें है अतः उनके पदों का संग्रह 'सूरसागर' नाम से जाना जाता है। जब सूरदास जी के पदों को देशाधिपति ने सुना तो सुनकर विचार किया कि सूरदासजी से किसी प्रकार मिला जाये। भगवद् इच्छा से उनका सूरदासजी से मिलाप हुआ। देशाधिपति से सूरदासजी से कहा- "सूरदासजी मैंने सुना है, तुमने विष्णुपद बहुत लिखे हैं। मुझे परमेश्वर ने राज्य दिया है। गुणी जन मेरा यशोगान करते हैं अतः तुम भी मुझे कोई विष्णु-पद गाकर सुनाओ। सूरदासजी ने देशाधिपति के सम्मुख कीर्तन का पद गाया।"

पद- राग विलावल- **"मन रे तू करि माधो सों प्रीति।"**

यह पद देशाधिपति के सम्मुख करके सुनाया। यह पद ऐसा पद है, यदि अहर्निश इस पद का ध्यान बना रहे तो सदा भगवदनुग्रह की आर्ति बनी रहे। संसार से वैराग्य हो जाए, कुसंग से भय बना रहे, भगवदीय के संग रहने की चाह बनी रहे, श्रीठाकुरजी के चरणारविन्द के ऊपर सदा स्नेह रहे और लौकिक उपादानों पर आसक्ति नहीं हो। इस पद को सुनकर देशाधिपति बहुत प्रसन्न हुआ। इसके बाद देशाधिपति ने कहा- "सूरदास जी, मुझे परमेश्वर ने राज दिया है, सभी गुणी जन मेरा यश गाते है अतः आप भी मेरा यश गाकर सुनाओ। तब सूरदासजी ने यह पद गाया-

पद- राग केदारो- **"नाहिंन रही मन में ठौर।"**

यह पद सम्पूर्ण रूप से सुनकर देशाधिपति अकबर बादशाह ने अपने मन में विचार किया- "यह मेरा यश क्यों कर गाएँगे। इनको मेरी ओर से कुछ लालच हो तो ही यशोगान करें। ये तो परमेश्वर के जन है।" सूरदास जी ने इस पद के अन्त में गाया-

"हों जो सूर ऐसे दर्श को इमरत लोचन प्यास।"

यह सुनकर देशाधिपति ने पूछा- "सूरदासजी तुम्हें नेत्रों से कुछ दिखाई तो देता नहीं है, फिर ये नेत्र प्यासे कैसे मरते हैं? बिना देखे ही तुम उपमा देते हो, यह कैसे दे पाते हो?" यह सुनकर सूरदास जी तो कुछ बोले नहीं, फिर देशाधिपति ने स्वयं ही कहा- "इनके लोचन तो परमेश्वर के पास हैं। वहाँ देखकर ही ये वर्णन कर पाते हैं।" ऐसा समाधान देशाधिपति ने स्वयं ही कर लिया। उसने यह भी विचार किया कि इनको कुछ देना चाहिए लेकिन पुनः मन में विचार आया ये तो भगवदीय है अतः

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

इनको किसी भी पदार्थ की इच्छा नहीं है। इस प्रकार देशाधिपति से विदा होकर श्रीनाथजी द्वार पर आ गए।

[प्रसङ्ग-४]

एक समय सूरदास जी मार्ग में चले जा रहे थे। कुछ लोग चौपड़ खेल रहे थे। वे चौपड़ के खेल में तल्लीन थे। उन्हें किसी आने जाने वाले का ज्ञान नहीं था। सूरदास जी के साथ कुछ भगवदीय थे। उनसे सूरदासजी ने कहा- "देखो ये व्यक्ति किस प्रकार अपना जीवन व्यर्थ में खो रहे हैं। भगवान् ने इनको मनुष्य की देह सेवा और भजन करने के लिए दी है और ये लोग इस देह से हाड़ौ (हड्डी के बने पासे) को कूट रहे है।" इसमें इनकी कोई लौकिक सिद्धि भी नहीं है। इन्हें इस लोक में तो अपयश मिल रहा है और परलोक में इनको भगवान् से बहिर्मुखता प्राप्त हो रही है। श्री ठाकुरजी ने इनको मनुष्य देह दी है। इनको यदि चौपड़ ही खेलना है तो इस प्रकार की चौपड खेलनी चाहिए। सूरदास जी ने अपने साथियों को एक पद सुनाया-

पद- राग केदारो- **मन तू सोच विचार।**
भक्ति बिन भगवान् दुर्लभ कहत निगम पुकार॥१॥
साधुसंगति डारि फाँसा फेरि रसना सारि।
दाव आवक परयो पूरौ उतरि पहिली पार॥२॥
छांडि सत्रह सुनि अठारह पंच ही को मार।
दूरि ते तज तीन काने चमिक चौकि विचार॥३॥
काम क्रोध जंजाल मूल्यों ठग्यों ठगिनी नारि।
'सूर' हरि के पद भजन बिन चल्यो दोड कर झारि॥४॥

यह पद सूरदासजी ने अपने संग के साथियों को गाकर सुनाया। इस पद में सूरदास जी ने कहा- "मन तू समझ सोच विचार" ये तीनों वस्तु चौपड़ में चाहिए, वहीं तीन वस्तु भगवान् के भजन में भी चाहिए। यदि समझ नहीं होगीतो श्रवण क्या करेंगे? इसलिए सर्वप्रथम तो समझ चाहिए। इसके बाद 'सोच' क्या है? अर्थात् चिन्ता अर्थात् भगवान् के प्राप्ति की चिन्ता नहीं होगी तो संसार से वैराग्य कैसे होगा? इसलिए 'सोच' 'अर्थात्' विचार यदि जीव को विचार ही नहीं है तो संग व दुस्संग में अन्तर कैसे करेगा? इस प्रकार से तीन वस्तु हों तो ही भगवदीय भी हो। इसलिए भगवदीय को ये तीन वस्तु अवश्य चाहिए। चौपड़ में भी ये तीन वस्तु ही चाहिए। 'समझ' अर्थात्

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

'गिनना' नहीं आएगा तो पासे (गोट) कैसे चलेगा? सोच अर्थात अगम यदि मेरा दाव पड़े तो मैं यह पासे (गोट) चलू। विचार अर्थात् उसी में तन-मन लगा दे। ये तीन वस्तु हों तो चौपड़ खेली जाए। सो ये सूरदास जी श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे परम कृपापात्र भगवदीय थे।

[प्रसङ्ग-५]

सूरदासजी ने श्रीनाथजी द्वार पर आकर बहुत दिन तक श्रीनाथजी की सेवा की। बीच-बीच में श्रीगोकुल में श्रीनवनीत प्रियजी के दर्शन के लिए आते थे। एक बार सूरदासजी श्री गोकुल आए। श्रीनवनीत प्रियजी के दर्शन किए। वहाँ बाल लीला के बहुत से पद सुनाए। श्री गुसाँई जी पदों को सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। श्री गुसाँई जी ने एक 'पालना' संस्कृत में रचा। सूरदास जी को भी 'पालना' रचना सिखाया। सूरदास जी ने श्रीनवनीत प्रिय जी के झूलते समय यह पद गाकर सुनाया-

पद - राग रामकली- ''प्रेङ्ख पर्याङ्क शयनम्''

यह पद सूरदास जी ने सम्पूर्ण कर के गाकर सुनाया। इसके बाद इसी भाव के बहुत से पद रचकर श्रीनवनीत प्रियजी को सुनाए। श्रीगुसांई जी बहुत प्रसन्न हुए। पालना के भाव अनुसार गाया हुआ पद इस प्रकार है-

पद- राग विलावल- **बाल विनोद आंगन में की डोलनि।**

मणिमयभूमि सुभगनन्दालय बलि बलि गई तोतरि बोलनि॥
कठुला कंठ रुचिर केहरि नख व्रज माल बहु लई अमोलनि।
वदन सरोज तिलक गोरोचन लरलटकनि मधुगनि लोलनि॥२॥
लीन्यौ कर परसत आनन पर कछू खाय कछू लगो कपोलनि।
कहै जस सूर कहां लो वरनो धन्य नन्द जीवन जग तोलनि॥३॥

× × ×

गोपाल दुरे हैं माखन खात।
देख सखी सोभा जो बाढ़ी अति स्याम मनोहर गात॥१॥
उठि अवलोकि ओट ठाड़ी है जिहि विधि नहीं लखि लेत।
चक्रत नैन चहुं दिस चितवन और सबन कों देत॥२॥

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

सुन्दर कर आनन समीप हरि राजत यह आकार।
जनु जलरुह तजि वैरि विधु सों लाये मिलत उपहार॥३॥
गिरि गिरि परत वदन ते ऊपर द्वै दधिसुत के बिन्दु।
मानहु सुधाकन खोर वत पिय जय दुन्द॥४॥
बाल विनोद विलोक सूर प्रभु बित भरि ब्रज की नारि।
फुरत न वचन वरजिवे कौ मन रही विचारि विचारि॥५॥

× × ×

राग जैत श्री- कहाँ लगति वरनों सुन्दर ताई।
खेलत कुंअर कतिक आंगन में नैन निरखि सुख पाई॥१॥
कुल्हें लसत स्याम सुन्दर के बहु विधि रंग बनाई।
मानहुं नव घन ऊपर राजत मघवा धनुष चढाई॥२॥
सेत पीत अरु असित लाल मनि लटकनि भाल कराई।
मानहुं असुर देव गुरु सों मिलि भूमिज सों समुदाई॥३॥
अति सुदेश मृदु विहर हरत मन मोहन मुख बगराई।
मानहुं मंजुल कंजन ऊपर वर अलि अवलि फिरि आई॥४॥
दूध देत छवि कहि न जात कछू अति पल लय झलकाई।
किलकत हसत दुरति प्रगटत मानों विधु मैं विपुलताई॥५॥
खंडित वचन देत पूरन मुख अद्‌भुत यह उपमाई।
घुटुरुन चलत उठत प्रमुदित मन सूरदास बलि जाई॥६॥

× × ×

राग विलावल- देखि सखी एक अद्‌भुत रूप।
एक अम्बुज मथि देखियत बीस दधिसुत जूप॥१॥
एक अवली दोय जलचर उभे अर्क अनूप।
पंच वारिज ढिंगहि देखियत कहौं कहा स्वरूप॥२॥
सिसु गति में भई सोभा कोऊ करौ विचार।
सूर श्री गोपाल की छबि राखि यह उरधारि॥३॥

इस प्रकार के अनेक पद गाकर पुनः श्रीनाथजी द्वार आए।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

[प्रसङ्ग-६]

सूरदासजी ने श्रीनाथजी की सेवा बहुत दिन तक की। जब भगवद् इच्छा जानी कि अब प्रभु की बुलाने की इच्छा है, यह विचार करके वे परासोली आ गए। जहाँ श्रीजी कलात्मक रासलीला नित्य लीला के रूप में करते रहते हैं। परासोली में वे श्रीनाथजी की ध्वजा को दण्डवत करके ध्वजा के सम्मुख मुख करके सो गए। उनके अन्त:करण में भाव था कि श्री आचार्य जी महाप्रभु अवश्य दर्शन देंगे। अब यह देह तो थक चुकी हैं, यदि इस देह से श्रीनाथजी के दर्शन हो जाएँ तो परम सौभाग्य ही मानूं। श्री गुसाँई जी का नाम कृपासिन्धु है, वे भक्तों के मनोरथों को पूर्ण करने वाले हैं। इस प्रकार श्री गुसाँई जी का चिन्तन करने लगे। श्रीगुसाँईजी भी कैसे कृपासिन्धु है जो सूरदासजी को एक क्षण भी नहीं भुला पाते हैं। जब श्री गुँसाई जी श्रीनाथ जी का शृंगार करते थे तो सूरदास जी मणिकोठा में खड़े खड़े कीर्तन करते रहते थे। उस दिन श्री गुसाँईजी ने सूरदास जी को नहीं देखा। श्री गुसाँईजी ने पूछा- "आज सूरदास जी नहीं दिखाई दे रहे हैं, क्या बात है?" तब वैष्णवों ने कहा- "महाराज, सूरदासजी तो आज परासोली की ओर जाते देखे गए हैं।" श्री गुसाँईजी ने समझ लिया भगवदिच्छा से अब सूरदास जी का अवसान का समय है अत: वे परासोली चले गए हैं। श्री गुसाँई जी ने कहा- "पुष्टिमार्ग का जहान् अब जाने को है, जिसे जो चाहिए, वह उनसे ले ले। यदि भगवदिच्छा से राजभोग आरती के पीछे तक रहते हैं तो मैं भी पीछे ही आ रहा हूँ।" श्री गुसाँई जी थोड़ी थोड़ी देर में सूरदास जी के समाचार मँगाते रहे। जो आता था, वही कहता था - "महाराज, सूरदास जी तो अचेत हैं, कुछ बोलते नहीं हैं।" इस प्रकार होते होते श्रीनाथजी के राजभोग का समय हो गया। राजभोग की आरती करके श्री गुसाँई जी श्री गिरिराज से नीचे उतरे और आप परासोली पधारे। भीतरिया सेवक रामदास आदि कुम्भनदास जी, श्री गुसाँई जी के सेवक गोविन्द स्वामी, चतुर्भुजदास आदि सभी श्री गुसाँई जी के साथ आए। आते ही श्री गुसाँई जी ने सूरदास जी से पूछा - "सूरदास जी, कैसे हो?" सूरदास जी ने श्री गुसाँई जी को दण्डवत करके कहा - "महाराज, आप आ गए हो, मैं भी आपकी प्रतीक्षा में था।" यह कहकर सूरदास जी ने यह पद गाया।

पद - राग सारङ्ग - **देखो देखो हरिजू को एक सुभाय।**
अति गँभीर उदार उदधिप्रभु ज्ञान सिरोमनिराय ॥१॥
राई जितनी सेवा को फलमानत मेरु समान।
समझिदास अपराध सिंधु सम बूंद न एकौ मान॥२॥

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

वदन-प्रसन्न कमल पद सन्मुख देखत हो हरि जैसे।
विमुख हू भये कृपा या मुख की जब देखौं तब तैसे ॥३॥
भक्त विरह कातर करुणा मय डोलत पाछें लागे।
सूरदास ऐसे प्रभु को कब दीजै पीठ अभागे ॥४॥

यह पद सूरदास जी से सुनकर श्री गुसाँई जी बहुत प्रसन्न हुए। ऐसा दैन्य प्रभु अपने सेवकों को भी प्रदान करें। इस दैन्य के पात्र ये हीं हैं। उस समय श्री गुसाँई जी के पास चतुर्भुजदास भी खड़े थे। उन्होंने कहा - "सूरदास जी ने बहुत भगवद् यश का वर्णन किया है, लेकिन श्री आचार्य जी महाप्रभु के यश का वर्णन नहीं किया है।" यह सुनकर सूरदास जी बोले - "मैंने तो सब श्री आचार्य जी महाप्रभु का ही यश वर्णन किया है। मैंने तो उन्हें कभी भी भगवत स्वरूप से पृथक् नहीं माना। यदि पृथक मानता तो पृथक से यश वर्णन करता। लेकिन तुम से कहता हूँ" - यह कहकर उन्होंने यह पद गाया।

पद - राग विहागरौ - **भरोसो दृढ इन चरणन केरो।**

श्री वल्लभ नखचन्द्र छटा बिनु सब जग मांझि अंधेरो ॥१॥
साधन और नहीं या कलि में जासों होत निबेरो।
सूर कहा कहि दुविधि आंधरो बिना मोल को चेरो ॥२॥

इस पद को कहने के बाद सूरदास जी को मूर्छा आ गई तब श्री गुसाँई जी ने पूछा - "सूरदास जी की चित्तवृत्ति कहाँ है?" तब सूरदास जी ने एक पद और कहा -

पद - राग सारङ्ग -

बलि बलि बलि हौं कुमर राधिक नंद सुवन जासों रति मानी।
वे अति चतुर तुम चतुर सिरोमनि प्रीति करी कैसे रहै छानी ॥१॥
वे ईजु धरत तन कनक पीतपट सो ते सब तेरी गति ठानी।
ते पुनि श्याम सहज यह शोभा अम्बर मिस अपने डर आनी ॥२॥
पुलकित अंग अबही ह्वै आयो निरखि सुमग निज देह सियानी।
सूर सुजान सखी के बूझे प्रेम प्रकाश भयौ विहसानी ॥३॥

यह पद कह कर सूरदास जी ने श्री ठाकुर जी के श्री मुख के दर्शन किए, उसमें

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

भी करुणा रस के भरे नेत्रों के दर्शन किए। श्री गुसाँई जी ने पूछा – "सूरदास जी, अब नेत्र की वृत्ति कहाँ है?" तब सूरदास जी ने यह पद और कहा –

पद – राग विहागरौ – **खंजन नैंन रूप रस माते।**

अति सै चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते ॥१ ॥
चलि चलि जात निकट श्रवणन के उलटि पलटि ताटंक फंदाते।
सूरदास अंजन गुन अटके नातर अब उड़ि जाते ॥२ ॥

इतना कहकर सूरदास जी ने इस शरीर को त्याग दिया। वे भगवल्लीला में लीन हो गए। श्री गुसाँई जी सब सेवकों के सहित श्री गोवर्द्धन जी आए। इस प्रकार सूरदास जी श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे परम कृपा पात्र थे, सो इनकी वार्ता का कोई पार नहीं है। अतः इनकी वार्ता को कहाँ तक विस्तार दिया जाए?

अथ परमानन्द कन्नौजिया ब्राह्मण की वार्ता

[वैष्णव – ८९, प्रसङ्ग-१]

परमानन्ददास जी परम भगवल्लीला मध्यपाती श्री ठाकुर जी के परम सखा थे। जब श्री आचार्य जी महाप्रभु दैवी जीवों के उद्धार करने के लिए, श्री गोवर्द्धन नाथ जी की आज्ञा से भूतल पर प्रगट हुए तब श्री ठाकुर जी सहित समस्त परिकर भी प्रकट हुआ दैवी जीव भी अनेक देशान्तरों में प्रगट हुए, जिसका व्याख्यान श्री गोपालदास जी ने वल्लभाख्यान में किया है। उन्होंने गाया है – "अनेक जीव ने कृपा करवा देशान्त प्रवेश" अतः परमानन्द दास जी का जन्म कन्नौज में कन्नौजिया ब्राह्मण के घर हुआ। परमानन्ददास बहुत योग्य थे और कवि हृदय थे। वे भगवत् – कृपा के पात्र हुए। वे कीर्तन बहुत अच्छा गाते थे इसीलिए उनके साथ भगवत् समाज अधिक मात्रा में रहता था। ये स्वामी कहलाते थे अतः सेवक भी बनाते थे। एक बार भगवदिच्छा से परमानन्दास जी कन्नौज से प्रयाग आए। ये कीर्तन बहुत अच्छा गाते थे अतः प्रयाग में इनका कीर्तन – गायन सुनने के लिए बहुत लोग आया करते थे। अडेल से जो भी लोग प्रयाग आते थे वे परमानन्द दास जी का कीर्तन गायन सुनकर ही अडेल लौटते थे और वहाँ जाकर इनके कीर्तन-गायन की बहुत प्रशंसा करते थे। वे कहते – "प्रयाग में परमानन्ददास जी आए हैं जो कीर्तन बहुत अच्छा गाते हैं।" श्री आचार्य जी महाप्रभु के

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

जलघड़िया कपूर क्षत्री की उनकी राग पर बहुत आसक्ति थी लेकिन उन्हें सेवा से अवकाश ही नहीं मिल पाता था जिससे वे परमानन्ददास जी का कीर्तन सुनने प्रयाग न आ सके। एक दिन एक वैष्णव प्रयाग से अडेल आया और बोला – "आज एकादशी है, अतः आज परमानन्द दास जी प्रयाग में जागरण करेंगे।" यह सुनकर जलघड़िया ने अपने मन में विचार किया – "आज परमानन्द दास जी का कीर्तन सुनने के लिए प्रयाग चलना चाहिए।" कपूर क्षत्री ने सेवा सम्पन्न की और रात्रि में अपने घर आए। घर आकर सोचा – "इस समय रात्रि में नाव तो मिलेगी नहीं लेकिन वे तैरने में पूर्ण निपुण हैं अतः नदी को तैरकर पार कर लेना चाहिए।" यह विचार कर वे अपने घर से चले और यमुना जी के तीर पर आकर खड़े हो गए। उन्होंने वस्त्र उतार कर माथे से बाँध लिए और अँगोछा की पर्दनी लगा ली, यमुना जी को तैरकर पार कर लिया। वस्त्र पहन कर वहाँ आए जहाँ परमानन्द दास जी ठहरे हुए थे। इनकी परमानन्द दास जी से कोई जान–पहचान तो थी नहीं अतः जहां सभी लोग बैठे थे ये भी एक ओर जा बैठे। लेकिन सभी लोग इन्हें श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक के रूप में जानते थे अतः इन्हें आदर पूर्वक बैठाया। परमानन्द स्वामी ने कीर्तन प्रारम्भ किया। उन्होंने सर्वप्रथम विरह के पद गाए। इन्होंने विरह के पद क्यों गाए? यह हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं कि ये लीला–मध्यपाती श्री ठाकुर जी के परमसखा हैं। वहां से तो श्री ठाकुर जी से बिछुड़ आए लेकिन यहां पर अभी तक श्री ठाकुर जी के दर्शन नहीं हो सके। अब इन्हें श्री आचार्य जी महाप्रभु का दर्शन होगा। श्री आचार्य जी महाप्रभु के मार्ग का यह सिद्धान्त है – "भगवदीयों का संग भगवत्कृपा से होता है।" भगवदीय क्षत्री कपूर जलघरिया को परमानन्द स्वामी के कीर्तन गायन सुनने के उत्कट उत्कण्ठा श्री आचार्य जी महाप्रभु के परम अनुग्रह से हुई। अतः उसको रात्रि के समय अडेल से प्रयाग आना हुआ। यह श्री आचार्य जी महाप्रभु की परमानन्द स्वामी के ऊपर परम कृपा थी कि क्षत्री कपूर जलघड़िया को परमानन्द स्वामी के यहाँ भेजा। क्षत्री कपूर श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे सेवक थे जिनको श्री ठाकुर जी एक क्षण भी नहीं छोड़ते थे, इनके संग ही रहते थे। सूरदास जी ने गाया है – "भक्त विरह करत करूणामय डोलत पाछै–पाछै।" जगन्नाथ जोशी की वार्ता में भी लिखा है – "जब राजपूत ने तलवार चलाई तब श्री ठाकुर जी ने हाथ पकड़ लिया।" इस प्रकार स्पष्ट है कि श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवकों के निकट ही विराजते हैं। इसीलिए परमानन्द स्वामी ने विरह के पद गाए।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पद – राग विहागरो –**ब्रज के विरही लोग विचारे।**

बिन गोपाल ठगे से ठाड़े अति दुर्बल तनु हारे ॥१ ॥
मात जसोदा पंथ निहारत निरखत सांझ सकारे।
जो कोई कान्ह कान्ह कहि बोलत अंखियन बहत पनारे ॥२ ॥
यह मथुरा काजर की रेखा जे निकसे ते कारे।
परमानन्द स्वामी बिनु ऐसे जैसे चंदा बिनु तारे ॥३ ॥

इसके बाद भी जो पद गाए, वे इस प्रकार हैं –

पद – राग विहागरो –**सब गोकुल गोपाल उपासी।**

जो गाहक साधन के ऊधो सो सब वसन ईसपुर कासी ॥१ ॥
जदपि हरि हम तजि अनाथ करि अब छांडत क्यों रति की गांसी।
अपनी सीतलता उन छांडत जद्यपि विधुभयो राहु ग्रासी ॥२ ॥
किहि अपराध जोग लिखि पठयो प्रेम भजन ते करत उदासी।
परमानन्द ऐसी का विराहिनि मांगे मुक्ति छांड़ि गुन रासी ॥३ ॥

× × ×

राग कान्हरो – **कौन रसिक है इन बातन को।**

नंदनंदन बिन कासों कहिये, सुनी री सखी मेरे दुखया तनकों ॥१ ॥
कहां वह यमुना पुलिन मनोहर कहां वह चंद सरद राति को।
कहां वे मंद सुगंध अनलरस कहां वे षट्पद जलजातन को ॥२ ॥
कहां वे सेज पौढिवो वन कौ फूल बिछौना मृदुपातन को।
कहां वे दरस परस परमानन्द कमल नैन कोमल गातन को ॥३ ॥

× × ×

राग सोरठ- **माई को मिलिवै नन्द किसो रै।**

एक बार कौ नैन दिखावें मेरे मन को चोरे ॥१ ॥
जागत जाय गनत नहीं खूंटत क्यों पाऊँगी मोरे।
सुनरी सखी अब कैसे जी जै सुनि तमचर खग रोरे ॥२ ॥
जो पै प्रीति सत्य अन्तरगति जिनि काहू बनि हौ रे।
परमानन्द प्रभु आन मिलेंगे सखी सो जिन फौरै ॥३ ॥

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

इत्यादि विरह के पद परमानन्द स्वामी ने रात्रि भर गाए। जब पिछली रात्रि चार घड़ी शेष रही तब सब लोग अपने - अपने घर चले गए। उसी प्रकार श्री आचार्य महाप्रभु के सेवक जलघड़िया कपूर भी, परमानन्द स्वामी से जय श्री कृष्ण स्मरण करके चल दिए। वे परमानन्द का कीर्तन सुनकर मन ही मन बड़े प्रसन्न हो रहे थे। उन्होंने चलते समय परमानन्द स्वामी से कहा - ''जैसा हमने सुना था, उससे भी अधिक देखने पर अनुभव किया। आप पर पूर्ण भगवद् अनुग्रह है। जलघड़िया क्षत्री कपूर भी श्री महाप्रभु जी के परम भगवदीय हैं।'' ये जो अड़ेल से चलकर आए हैं परमानन्द स्वामी पर कृपा करके ही आए है, नहीं तो भगवदीय किसी के घर क्यों जाए? यह पहले ही कह दिया गया है कि जलघड़िया क्षत्री कपूर श्री आचार्य जी महाप्रभु के निकट ही रहते हैं, इसका यह आशय है कि इन क्षत्री कपूर की गोद में बैठकर श्री नवनीत प्रिय जी ने परमानन्द स्वामी के पद सुने हैं, यह श्री आचार्य जी महाप्रभु के मार्ग की मर्यादा है कि श्री आचार्य महाप्रभु के अनुग्रह के बिना श्री ठाकुर जी भी कृपा नहीं करते हैं। उन जलघड़िया क्षत्री कपूर की गोद में बैठकर श्री नवनीत प्रिय जी को परमानन्द स्वामी के पद क्यों सुनने पड़े, उसका भी एक हेतु है कि भगवदीय परमानन्द स्वामी पर अनुग्रह करने के लिए श्री नवनीत प्रिय जी स्वयं पधारे। वे जलघड़िया क्षत्री कपूर जब परमानंद स्वामी से ''जय श्री कृष्ण'' करके चले तो श्री यमुना जी के तीर पर आए। वहाँ आकर विचार करने लगे कि यदि नाव की प्रतीक्षा की गई तो सेवा छूट जाएगी और श्री आचार्य जी महाप्रभु भी क्रोधित होंगे (खीझेंगे) अतः जिस प्रकार तैरकर श्री यमुना जी को पार करके आए थे वैसे ही तैरकर श्री यमुना जी को पुनः पार कर गए। आते ही स्नान करके अपनी सेवा में तत्पर हो गए। इधर प्रयाग में सारी रात्रि जागरण के कारण श्रमित (थकान) होकर परमानन्द स्वामी कुछ देर के लिए सो गए। उन्हें निद्रा आ गई और स्वप्न हुआ। स्वप्न में रात्रि का दृश्य उपस्थित हुआ और जलघड़िया क्षत्री कपूर की गोद में विराजे हुए श्री नवनीत प्रिय जी के दर्शन हुए। स्वप्न में परमानन्द स्वामी श्री नवनीत प्रिय जी से कुछ कहने को हुए कि आँखे खुल गई। श्री नवनीत प्रिय जी के स्वरूप के दर्शन कोटिकन्दर्प लावण्य के समान परमानन्द स्वामी ने अपने हृदय में धारण कर लिए। मन में चटपटी सी लगी कि ये दर्शन पुनः कब होंगे? यह विचार आया कि ये दर्शन श्री आचार्य जी महाप्रभु के जलघड़िया क्षत्री कपूर के बिना नहीं हो सकते हैं अतः उनके पास ही चलना चाहिए। उनसे मिलने पर ही कार्य सिद्ध होगा। यह विचार आते ही वे तत्काल ही प्रयाग से अडेल के लिए रवाना हो गए। श्री

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

यमुना जी के तीर पर आकर खड़े हो गए। सबसे पहली जो नाव चली उसमें बैठकर पार उतर गए। आगे जाकर देखा तो श्री आचार्य जी महाप्रभु स्नानादि करके संध्या वन्दन कर रहे हैं। परमानन्द स्वामी को श्री आचार्य जी महाप्रभु का दर्शन ऐसा हुआ, मानो साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम श्री कृष्णचन्द्र के दर्शन हो गए हों। वल्लभाष्टक में लिखा है – "वस्तुतः कृष्ण एव स, ।" इसी प्रकार परमानन्द स्वामी को दर्शन हुए। यहाँ यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक जलघड़िया क्षत्री कपूर की गोद में श्री नवनीत प्रिय जी क्यों बैठे? इसका भी यही कारण है – जिस जलघड़िया के माथे पर ऐसे प्रभु विराजते हैं उनकी गोद में श्री नवनीत प्रिय जी क्यों नहीं विराजेंगे। परमानन्द स्वामी के मन में भाव आया कि जलघड़िया क्षत्री कपूर के मिलने का ही यह फल है कि अडेल आते ही श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन हुए। परमानन्द स्वामी तो इस विचार में ही मग्न थे कि श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपने श्री मुख से कहा – "परमानन्द, कुछ भगवद् यश वर्णन करो।" तब परमानन्द स्वामी ने विरह के पद गाए –

पद – राग सारङ्ग – **कोन बेर भई चले री गोपाले।**

हों ननसारि गई ही न्योंते बार बार बूझति ब्रज बाले ।।१ ।।
तेरे तन को रूप कहां गयौ भामिनि अरुमुख कमल सुखाय रह्यौ।
सब सौभाग्य गयो हरि के संग हृदय सों कमल विरह दह्यौ ।।२ ।।
को बोले को नैन उघारे को प्रति उत्तर देहि विकल मन।
सो सर्वस्व अक्रूर चुरायौ परमानन्द स्वामी जीवन धन ।।३ ।।

× × ×

राग सारङ्ग – **जिय की साधि जिय ही रही री।**

बहुरि गोपाल देखि नहीं पाए विलपति कुंज अहीरी ।।१ ।।
एक दिन सोजु सखी यह मारग बेचन जात दही री।
प्रीति के लिए दान मिस मोहन मेरी बांह गही री ।।२ ।।
बिन देखे छिन जात कलप सम विरहा अनल दही री।
परमानन्द स्वामी बिन दर्शन नैनन नदी बही री ।।३ ।।

× × ×

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

राग सारङ्ग - **वह बात कमलदल नैनन की।**
बार-बार सुधि आवत सजनी वह दुरि देनी सेननि की ॥१॥
वह लीला वह रास सरद को गोरज रजनी आवनि।
अरु वह ऊँची टेर मनोहर मिसकरि मोहि बुलावनि ॥२॥
वसन कुंज में रास खिलायो विथा गमाई मैन की।
परमानन्द प्रभु सों क्यों जीवे जो पौखी मृदु वैन की ॥३॥

× × ×

इस प्रकार परमानन्द स्वामी ने विरह के पद गाए। यह सुनकर परमानन्द स्वामी से कहा - "कुछ बाल लीला का वर्णन करो।" परमानन्द स्वामी ने कहा - "महाराज, मैं तो कुछ भी नहीं समझता हूँ।" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "स्नान करके आओ, हम तुमको समझाएँगे।" परमानन्द स्वामी ने पूछा - "महाराज, आपका वह विरक्त सेवक कहाँ है?" श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "कुछ सेवा कार्य करता होगा।" यह सुनकर परमानन्द स्वामी स्नान करने को गए। वहाँ उन्होंने देखा तो यमुना जल की गागर लेकर आता हुआ कपूर क्षत्री दिखाई दिया। उसके निकट आने पर परमानन्द स्वामी कपूर क्षत्री से मिले। उन्हें देखकर परमानन्द स्वामी बहुत प्रसन्न हुए। परमानन्द स्वामी ने उनको नमस्कार किया और कहा - "रात्रि में जागरण में आप पधारे थे और आपकी गोद में विराजमान श्री ठाकुर जी ने रात्रि को कीर्तन सुना। श्री ठाकुर जी ने मुझसे कहा - मैंने श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक जलघड़िया क्षत्री कपूर की गोद में बैठकर मैंने तेरा कीर्तन सुना है।" इस प्रकार आपकी कृपा से मेरा भाग्य सिद्ध हुआ है और यहाँ आते ही मुझे श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन प्राप्त हुए हैं। यह सुनकर जलघड़िया ने कहा - "ऐसा मत कहो, यदि श्री आचार्य जी महाप्रभु सुनेंगे तो बहुत खीझेंगे (क्रोधित होंगे) कि मैं सेवा छोड़कर क्यों गया? इसलिए यह बात मत बोलो।" यह सुनकर परमानन्द स्वामी को बहुत आश्चर्य हुआ और कहा - "ये धन्य हैं जिनके ऊपर श्री ठाकुर जी का ऐसा अनुग्रह है कि ये अपना स्वरूप छुपाते हैं।" इसके बाद परमानन्द स्वामी तो स्नान करने गए और जलघड़िया जल की गागर लेकर मन्दिर में गया। परमानन्द स्वामी स्नान करके श्री आचार्य जी महाप्रभु के आगे आकर खड़े हो गए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा - "आगे आकर बैठो।" तब परमानन्द स्वामी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

आगे जाकर बैठे। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने उन्हें "नाम" सुनाया। फिर मंदिर में पधार कर श्री नवनीत प्रिय जी के सन्निधान में परमानन्द स्वामी का ब्रह्म सम्बंध कराया। परमानन्द स्वामी को श्री भागवत की अनुक्रमणिका सुनाई। क्योंकि परमानन्द स्वामी से श्री आचार्य महाप्रभु ने भगवद् यश वर्णन करने को कहा था तो उन्होंने विरह के पद सुनाए और जब बाल लीला गाने को कहा तो परमानन्द स्वामी ने अनभिज्ञता प्रकट की। परमानन्द स्वामी ने बाल लीला से अनभिज्ञता प्रकट क्यों की? यह ऊपर वर्णन कर चुके हैं। ये श्री ठाकुर जी से बिछुड़े हैं अतः इन्हें विरह की स्फूर्ति तो विद्यमान है लेकिन संयोग का सुख विस्मृत हो गया हैँ इस सम्पूर्ण सुख की स्फुरणा (ज्ञान) के लिए श्री आचार्य जी महाप्रभु ने परमानन्द स्वामी को अनुक्रमणिका सुनाई क्योंकि सम्पूर्ण लीला विशिष्ट पूर्ण पुरुषोत्तम तो श्री आचार्य जी महाप्रभु के घर में पधारे हैं अतः उन्हीं के माध्यम से सम्पूर्ण लीलाओं का ज्ञान सम्भव है। श्री आचार्य जी महाप्रभु तो "श्री भागवत पीयूष समुद्रमथनक्षमः" हैं। श्री गुसाँई जी ने श्री भागवत को "अमृत का समुद्र" कहा है। इसलिए श्री आचार्य जी महाप्रभु ने परमानन्द स्वामी के हृदय में श्री भागवत रूपी समुद्र को स्थापित किया। इसीलिए सूरदास जी और परमानन्द स्वामी दोनों सागर हुए। वाणी में दोनों समान हैं सम्पूर्ण अष्टकाव्य में वाणी की समता है। श्री आचार्य जी महाप्रभु के द्वारा अमृत-सागर की स्थापना के आधार पर सूरदास और परमानन्द स्वामी का काव्य "सूरसागर" और "परमानन्द सागर" के रूप में जाना गया। अब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने अपने श्री मुख से परमानन्द स्वामी को बाल लीला वर्णन करने के लिए आदेशित किया तो परमानन्द स्वामी ने तत्काल पद - रचना करके श्री नवनीत प्रिय जी के सन्निधान में पद सुनाए।

पद - रागसामरी - **भाई री कमल नैन श्याम सुंदर झूलत है पलना।**
बाल लीला गावत सब गोकुल की ललना ॥१॥
अरूण तरूण कमल नखमन शशि ज्योति।
कुंचित कच भ्रमराकृति लटकैं लर गज मोती ॥२॥
लाल अंगूठा गहि कमल पानि मेलत मुख मांहीं।
अपनो प्रति बिम्ब देखि पुनि पुनि मुसिकाहीं ॥३॥
जसुमत के पुन्य पुञ्ज निरखि निरखि लाले।
परमानन्द स्वामी गोपाल सुत सनेह पाले ॥४॥

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

यह पद सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु बहुत प्रसन्न हुए पुनः एक पद गाकर सुनाया।

पद – राग विलावल – **जसोदा तेरे भाग्य की कही न जाय।**

जो मूरति ब्रह्मादिक दुर्लभ सो प्रगटे हैं आय ॥१॥

शिव नारद सनकादि महामुनि मिलवे करत उपाय।

ते नंद लाल धूरिधूसरि वपु रहत गोद लिपटाय॥२॥

रतन जटित पोढाय पालने वदन देखि मुसिक्याय।

झूलो मेरे लाल जाऊं बलिहारी परमानन्द बलि जाई॥३॥

× × ×

पद – राग विलावल – **"मणिमय आंगन नंद के खेलत दोऊ भैया।"**

इस प्रकार बाल लीला के पद परमानन्द दास ने गाए जिन्हें सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु बहुत प्रसन्न हुए। परमानन्द दास जी श्री आचार्य जी महाप्रभु के पास रहे ओर उन्हें कीर्तन की सेवा प्रदान की। परमानन्द जी, श्री नवनीत प्रिय जी के लिए प्रतिदिन नवीन पद रचकर सुनाया करते थे। जब अनवसर होता तो वे श्री आचार्य जी महाप्रभु के आगे पद गाकर कीर्तन किया करते थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु नित्यप्रति कथा कहते थे तो परमानन्ददास जी नित्य कथा श्रवण करते थे और उसी प्रसंग के कीर्तन करके परमानन्द दास जी सुनाते थे। एक दिन परमानन्द दास जी ने श्री ठाकुर जी के चरणाविन्द का माहात्म्य सुना और उसी माहात्म्य के अनुसार पद रचना करके श्री आचार्य जी महाप्रभु को कीर्तन गाकर सुनाया जिसे सुनकर वे बहुत प्रसन्न हुए।

पद – राग कान्हरो – **चरण कमल बन्दौ जगदीश जे गोधन के संग धाए।**

जे पद कमल धूरि लपटाने कर गहि गोपिन के उर लाए॥१॥

यह पद सम्पूर्ण करके परमानन्ददास जी ने गाया तथा श्री आचार्य जी महाप्रभु के स्वरूप का पद गाकर प्रार्थना की।

पद – राग कान्हरो – **यह मांगो गोपी जन वल्लभ।**

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

यह पद सम्पूर्ण करके गाया। इस पद को सुनकर श्री आचार्य जी महाप्रभु ने मन में जान लिया कि परमानन्द दास ने व्रज दर्शन की अभिलाषा प्रकट की है अत: व्रज के लिए अवश्य चलना चाहिए।

[प्रसङ्ग-२]

श्री आचार्य जी महाप्रभु ने व्रज में पधारने का उद्यम किया। उनके साथ दामोदर दास हरसानी, कृष्णदास मेघन, परमानन्द दास और यादव दास हलवाई तथा सभी वैष्णव रसोई की सामग्री लेकर चले। श्री आचार्य जी महाप्रभु जब व्रज के लिए चले तो मार्ग में परमानन्द दास का गाँव कन्नौज आया। परमानन्द दास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु से विनती की – "महाराज आप मेरे घर पधारिए। आपके अनुग्रह से मेरा भाग्य सिद्ध हुआ है अत: अब मेरे घर को भी पवित्र कीजिए।"श्री आचार्य जी महाप्रभु आप स्वयं अन्तर्यामी, कृपा निधान और भक्त मनोरथ पूरक कृपा करके परमानन्द दास के घर पधारे। वहाँ भली भाँति से रसोई कर श्री ठाकुर जी को भोग समर्पित किया। पीछे भोग सराकर आप ने प्रसाद ग्रहण किया तथा गद्दी तकियों के ऊपर विराजे। उस समय उन्होंने परमानन्द दास से कहा – "कुछ भगवद् यश का गान करो।"

परमानन्द दास ने मन में विचारा कि इस समय श्री आचार्य जी महाप्रभु का मन तो ब्रज में श्री गोवर्द्धन के पास है, इसलिए विरह का पद गाना चाहिए। उन्होंने विरह का ऐसा पद गाया जिसमें एक क्षण भी कल्प के समान प्रतीत हो।

पद – राग सोरठ – **हरि तेरी लीला की सुधि आवै।**

कमल नैन मन मोहिनी मूरत मन मन चित्र बनावै ॥१ ॥
एक बार जाहि मिलत माया करि सो कैसे विसरावै।
मुख मुसिक्यान बंक अवलोकनि चाल मनोहर भावै ॥२ ॥
कब हुक निविड़ तिमिर आलिंगन कब हुक पिक सुर गावै।
कबहुँक संभ्रमि कासि कासि कहि संग ही उठि धावै ॥३ ॥
कबहुँक नैन मूंदि अन्तरगत मणिमाला पहिरावै।
परमानन्द प्रभु श्याम ध्यान करि ऐसे विरह गमावै ॥४ ॥

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

यह पद परमानन्द दास ने प्रेम विभोर होकर गाया तो श्री आचार्य जी महाप्रभु को मूर्च्छा आ गई। जिस लीला का पद परमानन्द दास ने गाया उसी लीला में श्री आचार्य जी महाप्रभु मग्न हो गए। देहानुसंधान भी नहीं रहा। श्री आचार्य जी महाप्रभु की तीन दिन तक मूर्च्छा रही। दामोदरदास हरसानी आदि सभी सेवक तीन दिन तक श्री आचार्य जी महाप्रभु के दर्शन करते रहे, उसी प्रकार बैठे रहे। चौथे दिन श्री आचार्य जी महाप्रभु सावधान हुए। सभी वैष्णव प्रसन्न हुए। इसके बाद परमानन्द दास मन में डर गए अतः विरह के पदों का गाना त्याग कर सीधे ही पद सुनाने लगे उन्होंने पद गाया -

पद - राग विभाग - **माई री हौं आनन्द गुन गाऊँ।**

गोकुल की चिन्तामनि माधो जो मांगौ सो पाऊँ॥१॥

जब ते कमल नैन ब्रज आये सकल संपदा बाढी।

नन्दराय के द्वारे देखौ अष्ट महा सिधि ठाडी॥२॥

फूले फले सदा वृंदावन कामधेनु दुहि लीजै।

माग्यो मेह इन्द्र बरसावै कृष्ण कृपा ते जी जै॥३॥

कहत जसोदा सखियन आगे हरि उत्कर्ष जनावै।

परमानन्ददास को ठाकुर मुरली मनोहर भावै॥४॥

और भी एक पद गाया।

पद - राग गौरी - **''विमल जस वृंदावन के चन्द कौ।''**

यह पद परमानन्द दास ने सम्पूर्ण करके गाया और पुनः एक पद गाया।

राग सारङ्ग - **''चलि री सखि नन्द गाँव जाइ बसिये।''**

यह पद सम्पूर्ण करके गाया। पद में यह कहा कि ''चल री सखी नन्द गाँव जाय बसिये'' यह सुनकर श्री महाप्रभु जी ब्रज के लिए पधारे। सर्व प्रथम श्री आचार्य जी महाप्रभु श्री गोकुल में श्री यमुना तीर पर छोंकर के वृक्ष के नीचे बैठक में विराजे। वहाँ एक बैठक श्री द्वारिकानाथ जी के मन्दिर के निकट भीतर की बैठक है। वही उनके रात्रि विश्राम ओर रसोई का स्थान है। वहाँ श्री आचार्य जी महाप्रभु का घर था, जब भी आप श्री गोकुल पधारते थे, तो वहीं उतरते थे अतः यह भीतर की बैठक है। तत्पश्चात्

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

सभी वैष्णवों ने श्री यमुना जी में स्नान किया। वहां पर परमानन्द दास जी ने श्री यमुना जी का यश वर्णन पद गाकर किया है। वह पद इस प्रकार है –

राग रामकली – "**श्री यमुना जी यह प्रसाद हों पाऊँ।**

तिहारे निकट रहौं निसिवासर रामकृष्ण गुन गाऊँ ॥१॥

मज्जन विमल करों पावन जल चिन्ता कलह बहाऊँ।

तिहारी कृपा मान की तनया हरिपद प्रीति बढाऊँ ॥२॥

विनती करों यही वर मांगों अधम संग विसराऊँ।

परमानन्द दास फलदाता मदन गोपाल लडाऊँ ॥३॥

× × ×

राग रामकली – "**श्री यमुना जी दीन जानि मोहि दीजै।**"

ऐसे पद सम्पूर्ण करके श्री यमुना जी से सम्बंधित परमानन्द दास ने श्री आचार्य जी महाप्रभु के आगे गाए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने परमानन्द दास को बाल लीला विशिष्ट श्री गोकुल के दर्शन कराए। परमानन्द दास को दर्शन हुए कि श्री ठाकुर जी मार्ग में खेल रहे हैं और व्रजभक्त श्री यमुना जी से जल की गागर भर कर ले जाते हैं, श्री ठाकुर जी उनके लिए जल की गागर उठा रहे हैं। उन व्रज बालाओं की कंचुकी तोड़ रहे हैं, इस प्रकार दर्शन करते ही परमानन्द दास ने पद रचना कर श्री आचार्य जी महाप्रभु के आगे गाए।

पद – राग विलावल – **यमुना जल घट भरि ले चली चन्द्रावलि नारी।**

मारग में खेलत मिले श्री घनश्याम मुरारी ॥१॥

नैनन सो नैना मिले मन रह्यौ है लुभाई।

मोहन मूरति जिय वसी पग धरयो न जाई ॥२॥

मन की प्रीति प्रगट भई यह पहेली भेंट।

परमानन्द ऐसे मिली जैसे गुड़ में चेंट ॥३॥

× × ×

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

राग सारङ्ग – **लाल नेक टेको मेरी बहियां।**

औघट घाटि चल्यौ नहिं जाई रपटत हों कालिंदी महियां ॥१॥

यह पद सम्पूर्ण करके गाया। इसके बाद परमानन्द दास ने बाल लीला के पद गाए तथा गोकुल के स्वरूप वर्णन का पद गाया।

राग कान्हरौ – **गावत गोपी मधु मृदु बानी।**

जाके भवन वसत त्रिभुवन पति राजानंद यशोदा रानी ॥१॥

गावत वेद भारती गावति गावत नारदादि मुनि ज्ञानी।

गावत गुन गंधर्व काल शिव गोकुल नाथ महातम जानी ॥२॥

गावत चतुरानन जगनायक गावति गावत शेष सहस्त्रमुख रास।

मन क्रम वचन प्रीत पद अम्बुज अब गावति परमानन्द दास ॥३॥

इस पद को गाने के पश्चात् उन्होंने एक पद और भी गाया।

राग कान्हरौ – **रानी जसुमति गृह आवत गोपी जन।**

वासर ताप निवारन कारन बारम्बार कमल मुख निरखन ॥१॥

चाहत पकरि देहरी उलँघन किलक किलक हुलसत मन ही मन।

राई लोन उतारि दोऊ कर वार फेर वारत तन मन धन ॥२॥

लेत उठाय चांपति हीयो भरि प्रेम विवस लागे दृग ढरकन।

चली लेय पलना पौढावन को अरकसाय पौढे सुंदर घन ॥३॥

देत असीस सकल गोपीजन चिरजीवों जो लौ गंग जमुन।

परमानन्द दास को ठाकुर भक्त वत्सल भक्तन मनरंजन ॥४॥

× × ×

राग हमीर – **चितै चितै चित चोरयो री माई।**

यह पद सम्पूर्ण करके गाया। इस प्रकार परमानन्द दास ने ऐसे बहुत पद गाए। इसके बाद परमानन्द दास ने श्री गोकुल नाथ जी के दर्शन किए और श्री गोकुल पर वे

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

बहुत आसक्त हुए। तब उन्होंने ऐसे पद गाए जिनमें श्री आचार्य जी महाप्रभु से प्रार्थना की गई थी कि मुझे श्री गोकुल में अपने चरणार विन्द के आश्रित रखो। मैं तो सर्व लीला विशिष्ट पूर्ण पुरुषोत्तम आपके नित्यप्रति दर्शन की अभिलाष रखता हूँ।

राग कान्हरौ – **॥ जब लगि जमुना गाय गोवर्धन तब लगि गोकुल गांव गुसांईं॥**

यह पद सम्पूर्ण करके प्रार्थना के पद गाए। कितने ही दिनों तक श्री आचार्य जी महाप्रभु श्री गोकुल में विराजते रहे, बाद में सभी वैष्णवों को साथ लेकर श्री गोवर्द्धन नाथ जी के दर्शनार्थ पधारे।

[प्रसङ्ग-३]

श्री आचार्य जी महाप्रभु स्नान करके पर्वत के ऊपर पधारे। उनके आते ही परमानन्द दास ने श्रीनाथजी के दर्शन किए। वे श्री नाथ जी के श्री मुख का दर्शन करते ही वहाँ के वहीं खड़े रह गए। श्री महाप्रभु जी ने अपने श्री मुख से परमानन्द दास से कहा – "कुछ भगवत् लीला का गान करो।" परमानन्द दास ने विचार किया – "यहाँ क्या गाऊँ?" फिर सोचकर उन्होंने प्रथम अवतार लीला, फिर चरणारविन्द की वन्दना तत्पश्चात् भगवत् स्वरूप का वर्णन और पीछे बाल लीला के पद गाने का निर्णय लिया। इसके बाद परमानन्द दास ने श्री ठाकुर जी के माहात्म्य का पद रचकर सुनाया।

पद –राग कान्हरो – **मोहन नन्द राय कुमार।**

प्रगट ब्रह्म निकुंज नायक भक्तहित अवतार ॥१॥

प्रथम चरण सरोज वन्दौ श्याम धन गोपाल।

मकर कुण्ड गण्डमण्डित चारु नेत्र विशाल ॥२॥

वलराम सहित विनोद लीला से कर हेत।

दास परमानन्द प्रभु हरि निगम बोलत नेति ॥३॥

और इसके बाद आसक्ति का पद गाया।

राग पूरवी – **मेरो माई माधो सों मन लाग्यो।**

मेरो नैन और कमल नैन को इकठौरौ करि सान्यौ ॥१॥

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

लोक वेद की कानि तजी मैं न्योती अपने आन्यौ।

एक गोविन्द चरण के कारण वैर सबन सों ठान्यौ ॥२॥

अब को भिन्न होय मेरी सजनी दूध मिल्यौ जैसे पान्यो।

परमानन्द मिली गिरिधर सों है पहली पहिचान्यौ ॥३॥

इस प्रकार परमानन्द दास ने पद गाए और श्री आचार्य जी महाप्रभु ने शयन आरती करके श्री नाथ जी को शयन कराया। अनवसर के पश्चात् आप नीचे पधारे तो परमानन्द दास भी साथ ही नीचे आ गए। रामदास भीतरिया ने परमानन्द दास के लिए दूध भेजा। जब परमानन्द दास दूध लेने लगे तो उन्हें वह अधिक तप्त (गर्म) अनुभव हुआ। उन्होंने मन में विचार किया कि इतना तप्त दुग्ध श्री ठाकुर जी कैसे आरोगते होंगे। दूध तो सुहाता सा गर्म होना चाहिए। उन्होंने यही बात भीतरिया रामदास से कही। भीतरिया रामदास ने कहा – "आप भगवदीय हैं जैसे आज्ञा करेंगे हम वैसे ही करेंगे।" प्रातःकाल सभी सेवक स्नान करके श्री गोवर्द्धन नाथ जी की सेवा में तत्पर हुए। श्री आचार्य जी महाप्रभु स्नान करके श्री गिरिराज जी के ऊपर पधारे। उन्होंने श्री गोवर्द्धन नाथ जी को जगाया तो परमानन्द दास ने श्री ठाकुर जी के जगाने का पद गाया।

पद –राग विभास – **जागो गोपाल लाल मुख देखौ तेरौ।**

पाछें गृहकाज करो नित्य नेम मेरो ॥१॥

विगसत निशा अरुण दिसा उदित भयौ भान।

गुञ्जत भृङ्ग पङ्कजवन जागिये भगवान ॥२॥

द्वार ठाड़े बन्दीजन करत हैं उच्चार।

वंश प्रसंग गावत हरि लीला सार ॥३॥

परमानन्द स्वामी गोपाल जगत मङ्गल रूप।

वेद पुराण पढत ज्ञान महिमा अनूप ॥४॥

इस पद को गाने के बाद परमानन्द दास ने कलेवा का पद गाया।

पद –रामकली – **ग्वालिन पिछवारे ह्वै बोल सुनायो।**

कमल नयन प्यारो करत कलेऊ कोरि न मुख लों आयो ॥१॥

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

अरी मैया एक व्याई मैया बछरा उहां ही बसायो।

मुरली न लई लकुटिया न लीनी अरबराय कोऊ सखा न बुलायो ।।२ ।।

चक्रत भई नन्दजू की रानी सत्य आय कैंधों सपनों पायो।

फूले अङ्ग न माय रसिक वर त्रिभुवन पति सिर छत्र जो छायो ।।३ ।।

मिलि बैठे संकेत सघन वन विविध भांति कियो मन भायो।

परमानन्द सयानी ग्वालिनि उलटि अङ्ग गिरिधर पिय पायो ।।४ ।।

ऐसे पद परमानन्द दास ने गाए। पीछे मङ्गला के पट खुले। परमानन्द दास ने श्री गोवर्द्धन नाथ जी से पूछा – ''आप तातौ दूध क्यों आरोगते है ?'' यह सुनकर श्री नाथ जी ने कहा – ''ये हमको जैसे समर्पण करते हैं, हम वैसा ही आरोग लेते हैं।'' परमानन्द दास ने श्रीनाथजी के भक्त वत्सलभाव को जान लिया। परमानन्द दास उन्हें नित्य प्रति कीर्तन पद रचना करके सुनाया करते थे। एक समय एक राजा दर्शन के लिए आया। श्री गोवर्द्धन नाथ जी के दर्शन करके बहुत प्रसन्न हुआ। उसने अपनी रानी से जाकर कहा – ''श्री गोवर्द्धननाथ जी ठाकुर बहुत सुन्दर हैं, तू जाकर दर्शन करके आ।'' रानी ने कहा – ''हम तो हमारी कुलरीति के अनुसार ही दर्शन कर सकती हैं।'' राजा ने कहा – ''श्री गोवर्द्धन नाथ जी के दर्शन करने पर्दा की कोई आवश्यकता नहीं है। प्रभु के दरबार में पर्दा क्या करना है ?'' लेकिन रानी ने राजा की बात स्वीकार नहीं की। राजा ने श्री आचार्य जी महाप्रभू से जा कहा – ''महाराज, मैंने तो रानी से बहुत कहा है लेकिन वह दर्शन करने नहीं आ रही है। यदि आप कृपा करके दर्शन करावें तो वह दर्शन कर सकती है।'' श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – ''उसे यहाँ ले आओ, उसे सर्वप्रथम एकान्त में दर्शन करा देंगे। बाद में और लोग दर्शन कर लेंगे।'' तब राजा ने अपनी रानी को श्री गोवर्द्धन नाथ जी के दर्शन कराने के लिए लाया। उस समय सब लोक एक तरफ (सरक) हठ गए। रानी जब दर्शन करने लगी, उसी समय सिंहपौर के किवाड़ खोल दिए। दर्शनार्थियों की भीड़ आकर रानी पर पड़ी और रानी के सब वस्त्र खिसक गए। पर्दा स्वतः हट गया। रानी ने बहुत लज्जा का अनुभव किया। तब राजा ने रानी से कहा – ''मैंने तुझसे पहले ही कहा था कि श्री ठाकुर जी से क्या पर्दा करना है ? ये तो ब्रज के ठाकुर हैं इन्होंने किसी का पर्दा रखा ही नहीं तो तुम्हारा पर्दा कैसे रह सकता है ?'' उस समय परमानन्द दास ने पद गाकर सुनाया।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पद –राग देवगंधार – "**कौन यह खेलिबे की बानि।**"

मदन गोपाल लाल काहू की राखत नांहिन कानि।।१ ।।

यह तुक परमानन्द दास ने गाई थी तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कहा – "परमानन्द दास, ऐसे कहो – भली यह खेलिवे की बानि –" तब परमानन्द ने पद को संशोधित कर इस प्रकार गाया।

पद –राग देवगंधार – "**भली यह खेलवे की बानि।**"

मदन गोपाल लाल काहू की नांहिन राखत कानि।।१ ।।

अपने हाथ ले डोलत अनवरत दूध दही घृत सानि।

जो वरजों तो आंख दिखावें पर धन को दिन दानि ।।२ ।।

सुनरी जसोदा सुत के करतव पहले माथ मथानि।

फोरि डारि दधि-गरि अजिर में कौन सहे नित हानि।।३ ।।

ठाड़ी देखत नंद जू की रानी मूंदि कमलमुख हानि।

परमानन्द दास जानत है बोलि बूझि धों आनि।।४ ।।

यह पद परमानन्द दास ने गाया इसकेबाद भी कितने ही पद गाए। जो लीला श्री ठाकुर जी ने की, उन लीलाओं के पद गाए। एक दिन भगवदीय रामदास जी, कृष्णदास जी और कुम्मनदास जी सब वैष्णव मिलकर वहाँ आए जहाँ परमानन्द दास जी रहते थे। उन भगवदीय जनों को अपने आवास पर आया हुआ देखकर परमानन्ददास बहुत प्रसन्न हुए। वे बोले – "मेरा बड़ा सौभाग्य है, आज मेरा भाग्य सिद्ध हो गया है क्योंकि जिनके मन में श्री ठाकुर जी सदा विराजते हैं, वे भगवदीय मेरे घर पधारे हैं। यह तभी संभव होता है जब श्री ठाकुर जी का पूर्ण अनुग्रह और भगवदीयों पर पूर्ण कृपा हो।" इस अवसर पर जबकि भगवदीय मेरे घर पधारे हैं मुझे कुछ न्यौंछावर करना चाहिए लेकिन मेरे पास ऐसा कुछ नहीं है जो मैं न्यौंछावर कर सकूँ अतः परमानन्द दास ने एक पद गाया।

पद –राग हमीर – **आये मेरे नन्द नन्दन के प्यारे।**

माला तिलक मनोहर बाने त्रिभुवन के उजियारे।।१ ।।

प्रेम सहित बसत मन मोहन नेकहु रख न टारे।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

हृदय कमल के मध्य विराजत श्री व्रजराज दुलारे ॥२॥

कहा जानों कौन पुण्य प्रकट भयौ मेरे घर जु पधारे।

परमानन्द प्रभु करि न्यौछावर वार-वार हौं वारे॥३॥

यह पद भगवदीयों को भेंट किया और अपने घर आये हुए भगवदीयों को विदा किया। इसके बाद परमानन्द दास ने श्री नाथ जी की भलीभाँति सेवा की। ये परमानन्द दास जी, श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐस कृपा पात्र भगवदीय थे कि इनकी वार्ता का कोई पार नहीं है। अत: परमानन्द के बारे में कहाँ तक लिखा जाए?

अथ कुम्भनदास गोरवा की वार्ता

[वैष्णव - ९०, प्रसङ्ग-१]

कुम्भनदास जी श्री गोवर्द्धन पर्वत के पास जमुनावतौ गाँव में रहते थे। सारस्वत कल्प में श्री यमुना जी का प्रवाह इस गाँव के निकट ही था अत: इस गाँव का नाम "जमुनावतौ" था। कुम्भनदास जी जमुनावतौ में रहते थे और परासोली चन्द्रसरोवर के ऊपर कुम्भनदास जी की धरती अर्थात् कृषि भूमि थी। कुम्भनदास जी वहाँ खेती करते थे। कुम्भनदास जी श्री गोवर्द्धन नाथ जी के परमसखा थे और कृपा पात्र भी थे। श्री गोवर्द्धन नाथ जी प्रगट होकर श्री महाप्रभु जी को बुलाएंगे। उस समय ये भगवदीय भी प्रसिद्धि को प्राप्त होंगे।

श्री आचार्य जी महाप्रभु पृथ्वी की परिक्रमा करते हुए झारखण्ड में पधारे। झारखण्ड में श्री गोवर्द्धन नाथ जी ने, श्री आचार्यजी महाप्रभु को आज्ञा दी "हम गोवर्द्धन में तीन दमन हैं - नागदमन, इन्द्रदमन और देवदमन। इनमें मध्य देवदमन हमारा नाम है। तुम हमें आकर पधराओ। हमारी सेवा का प्रकार भी प्रकट करो।" तब श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पृथ्वी परिक्रमा के कार्यक्रम को वहाँ ही स्थगित करके शीघ्र ही पधारे। उनके साथ दामोदर दास हरसानी, कृष्णदास मेघन, गोविन्द दुबे, जगन्नाथ जोशी और रामदास - ये पाँच वैष्णव थे। श्री आचार्य जी महाप्रभु श्री गोवर्द्धन की तलहटी में आकर सद्दू पाण्डे के चबूतरा पर आकर विराजे। श्री गोवर्द्धन नाथ जी के प्राकट्य में सद्दू पाण्डे भवानी नरो श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक हुए। उनको श्री आचार्य जी महाप्रभु ने श्री गोवर्द्धन नाथ जी की सेवा सौंपी। व्रज में श्री आचार्य जी महाप्रभु के बहुत से सेवक हुए। उसी समय कुम्भनदास जी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

भी श्री आचार्य जी महाप्रभु की शरण में आए। श्री आचार्य जी महाप्रभु ने श्री गोवर्द्धन नाथ जी का एक छोटा सा मन्दिर सिद्ध कराया। उसी में श्री नाथ जी को पधराया और रामदास चौहान को सेवा की आज्ञा प्रदान की। उस समय ब्रजवासी लोग दूध-दही-मक्खन आदि लाते थे और श्री गोवर्द्धन नाथ जी आरोगते थे। वहाँ रामदास को जो भी भगवद् इच्छा से आय होती थी वे भोग धरते थे और आप प्रसाद लिया करते थे। जो भी ब्रजवासी श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक हुए थे, उन्हें श्री आचार्य जी महाप्रभु ने आज्ञा दी कि यह स्वरूप मेरा सर्वस्व है अतः सभी तरह इनका ध्यान रखना और सदा सेवा में तत्पर रहना। कुम्भनदास जी आदि सभी सेवकों को यह भी आज्ञा दी कि तुम देवदमन के दर्शन किये बिना महाप्रसाद मत लेना। इस प्रकार सभी सेवकों को आज्ञा देकर श्री आचार्य जी महाप्रभु पुनः पृथ्वी की परिक्रमा के लिए प्रस्थान कर गए। उन्होंने अपनी यात्रा पुनः झारखण्ड से प्रारम्भ की, जहाँ पर उसे स्थगित किया था।

कुम्भनदास जी नित्य प्रति श्री गोवर्द्धन नाथ जी के दर्शनों के लिए आते थे। कुम्भनदास जी उनके आगे बहुत सुन्दर कीर्तन भी गाया करते थे। उनकी गायकी बहुत प्रभावी थी। चूँकि श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कुम्भनदास जी को नाम सुनाया था तब ब्रह्म सम्बंध कराया था। वे उसी भाव से श्री नाथ जी के सम्मुख पद रचना करके सुनाया करते थे। श्री नाथ जी कुम्भनदास जी से सखाभाव मानते थे। वे उनके घर भी पधारते थे। बहुत क्रीड़ा किया करते थे तथा कुम्भनदास जी से वार्ता भी करते थे। कुम्भनदास जी के ऊपर श्री नाथ जी की पूर्ण कृपा थी। रामदास श्री गोवर्द्धन नाथ जी की सेवा करते थे। इसी समय ब्रज में म्लेच्छ का उपद्रव हुआ। तब मानिक चन्द पाण्डेय, सद्दू पाण्डेय, रामदास चौहान व कुम्भनदास जी ने सब वैष्णवों से मिलकर विचार-विमर्श किया "क्या किया जाना चाहिए? क्योंकि यह म्लेच्छ बड़ा धर्मद्वेषी है।" सभी ने एक मत से राय प्रकट की - "इसमें अपने किए कुछ भी नहीं होता है, अतः श्री नाथ जी से पूछना चाहिए कि अब क्या करणीय है।" श्री नाथ जी से पूछने पर उन्होंने आज्ञा दी - "हमको यहाँ से ले चलो। अब हम यहाँ से उठेंगे।" सभी ने पूछा - "महाराज, कहाँ पधारेंगे?" तब आपने श्री मुख से आज्ञा प्रदान की - "टोड के घने में चलेंगे।" तब एक भैंसा मँगवाया और उस पर श्री नाथ जी को बैठाया। एक ओर से तो रामदास चौहान ने पकड़ा और दूसरी ओर से कुम्भनदास जी पकड़े रहे। सभी सेवक भी संग ही थे। घने में काँटे बहुत थे। इसलिए काँटों में उलझ कर सभी के वस्त्र

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

फट गए। शरीर भी छिद गए। सभी लोग बहुत दुःखी हुए। घना के मध्य एक तालाब था, वहाँ वृक्षों के मध्य एक चौक था। वहीं पर एक बड़े वृक्ष के नीचे श्री नाथ जी विराजे। जो भी कुछ सामग्री साथ थी उसी से रामदास ने भोग समर्पित किया और जल के लिए करुआ (लोटा) भरकर आगे रखा। सभी वैष्णव बैठे तब श्री गोवर्द्धन नाथ जी ने कुम्भनदास जी से कहा – "कुम्भनदास, कुछ गाओ।" कुम्भनदास तो मन में कुढ रहे थे अतः एक नया पद रचना करके सुनाया।

पद – राग सारङ्ग – **भावत है तोय टोड को घनो।**

कांटा लागै गोखरू भागे पड्यौ जात यह तनौ ॥१ ॥

सिंहै कहा लोकटी को डर यह कहा बानक बन्यौ।

कुम्भनदास प्रभु तुम गोवर्द्धन धर वह कौन रांड ढेढनी को जन्यौ ॥२ ॥

यह पद कुम्भनदास ने गाया जिसे सुनकर श्रीनाथजी मुसिक्या कर चुप रहे। इतने में गोवर्द्धन से समाचार आया कि म्लेच्छ की फौज़ आई थी सो पीछे फिर कर चल गई, तब श्री गोवर्द्धन नाथ जी पर्वत के ऊपर मन्दिर में पधारे।

[प्रसङ्ग-२]

अब पुनः श्री गोवर्द्धन नाथ जी पर्वत के ऊपर मन्दिर में विराजमान हुए। लोगों को बहुत हर्ष हुआ। देवदमन को धन्य है। ऐसा भयंकर म्लेच्छ का उपद्रव आया लेकिन देवदमन के प्रताप से सब मिट गया। कुम्भनदास जी ने प्रसन्न होकर पद रचना कर श्री गोवर्द्धन नाथ जी को सुनाए।

पद –राग श्रीराग – **जयति जयति हरिदास वर्य वरने।**

यह पद सम्पूर्ण करके गाया और इसके बाद और भी पद गाए।

पद –राग सारंग – **कृष्ण तरनी तनया तीर।**

यह पद सम्पूर्ण करके गाया। नित्य प्रति रचना करके नवीन से नवीन पद कुम्भनदास जी श्री नाथ जी को सुनाने लगे तो उनके पद जगत में प्रसिद्धि पाने लगे। लोग इनके पदों को गाने लगे। किसी कलाकार ने इनका पद फतेहपुर सीकरी में देशाधिपति अकबर के सामने गाया। उस पद को सुनकर देशाधिपति का मन उस पद में रम गया। उसने अपना माथा धुन कर कहा कि ऐसे महापुरुष हो चुके हैं जिसको परमेश्वर के साक्षात् दर्शन हुए हैं।

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

तब उस कलाकार ने कहा – "महाराज, ये महापुरुष तो अभी भी विद्यामान हैं।" यह सुनकर देशाधिपति बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने उस कलाकार से कुम्भनदास जी का पता पूछा। उस कलाकार ने बताया कि श्री गोवर्द्धन जी के पास जमुनावतौ गाँव में कुम्भनदास नाम से ख्यात हैं, वहीं निवास करते हैं। देशाधिपति ने कहा – "उन्हें यहां बुलाओ, हम उनसे मिलेंगे।" यह विचार आते ही देशाधिपति के मनुष्य सवारी लेकर कुम्भनदास जी को बुलाने के लिए गये। कुम्भनदास जी उस समय परासौली में थे, अपने घर नहीं थे। अत: उस मनुष्य को बता दिया गया कि कुम्भनदास जी परासोली में बैठे हैं। उस मनुष्य ने परासोली में पहुँचकर बता दिया कि उन्हें बादशाह ने याद किया है। कुम्भनदास जी ने कहा – "भैया, मैं तो देशाधिपति का चाकर भी नहीं हूँ। देशाधिपति को मुझसे क्या प्रयोजन है?" मनुष्यों ने कहा – "बाबा हम तो कुछ समझते नहीं हैं, हमें तो दशाधिपति का आदेश है कि कुम्भनदास को लाओ। उनके द्वारा भेजी हुई पालकी है और घोड़ा है, जिस पर भी सवार होकर चलना चाहो, उस पर सवार होकर चलो, हम तो आपको लेने को आए हैं अत: आपको चलना तो पड़ेगा।" कुम्भनदास जी ने विचार किया कि देशाधिपति की आज्ञा है, इसलिए बिना गये तो निर्वाह होगा नहीं। अत: कुम्भनदास जी उसी समय अपनी पनहीं पहनकर चल दिए। वाहक व्यक्ति ने कहा – "बाबा, सवारी पर बैठकर चलो।" कुम्भनदास जी ने कहा – "भैया, मैं तो कभी भी सवारी पर नहीं बैठा हूँ अत: पैदल ही चल लूँगा।" यह कहकर पैदल ही साथ-साथ चल दिए। फतेहपुर सीकरी आ पहुँचे और देशाधिपति के डेरा पर पहुँच गए। उस मनुष्य ने देशाधिपति को समाचार दिया कि कुम्भनदासजी आ गए हैं। देशाधिपति ने उन्हें ससम्मान लाने का आदेश दिया और कुम्भनदास जी के पहुँचने पर देशाधिपति ने आदरभाव से कहा – "आओ, कुम्भनदास जी यहां आकर बैठो।" कुम्भनदास ने देखा "रतन जटित रावटी में मोतियों की झालर लगी हुई है"। ऐसे स्थल पर कुम्भनदासजी जाकर बैठ गए। मन मे विचार करने लगे – "इस स्थल से तो हमारे ब्रज के हींसों की कँटीली झाडियाँ अधिक सुखदायी हैं जहाँ श्री नाथ जी खेलते रहते हैं। यह स्थल तो दु:खदायी प्रतीत होता है।" इतने में ही देशाधिपति बोला – "कुम्भनदास जी तुमने विष्णुपदों की रचना की है अत: आप हमें विष्णुपद गाकर सुनाओ।" कुम्भनदास जी मन में कुढे (खीझे) हुए थे अत: विचार करने लगे – "इसके सम्मुख क्या गाऊँ? मेरी वाणी के भोक्ता तो श्री गोवर्द्धन धरण हैं। इसके सम्मुख तो ऐसा गाना चाहिए कि दुबारा बुलाने का मन ही न हो। इसके कारण मेरे प्रभु की सेवा छूटी है, इसलिए इसको कठोर वचन सुनाने चाहिए। यदि यह बुरा भी मान जाएगा तो मेरा क्या करेगा?" उन्होंने विचारा –

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पद –राग कान्हरो – **''जो जाको मन मोहन संग करै।**
एको के सबसे नहीं सिरे जो जग वैर परै॥''

यह विचार करके कुम्भनदास जी ने एक नया पद रचकर गाया।

पद –राग सारङ्ग – **भक्तन को कहा सीकरी काम।**
आवत जात पन्हैया टूटी बिसर गयौ हरि नाम॥१॥
जाको मुख देखें दुःख लागै ताको करन परी परनाम।
कुम्भनदास लाल गिरिधर बिन यह सब झूठौ धाम॥२॥

यह पद गाया जिसे सुनकर देशाधिपति अपने मन में बहु कुढा (खीझा) और विचार किया कि इनको कुछ लालच दिया जावे ताकि ये हमारा यशोगान कर सकें। इन्हें तो परमेश्वर से ही सच्चा स्नेह है। यह विचार कर के देशाधिपति ने कुम्भनदास जी को सीख दी। कुम्भनदास जी वहाँ से चल दिए। मार्ग में बहुत क्लेश हुआ। वे यह विचारते रहे कि प्रभु के श्री मुख के कब दर्शन होंगे ? इस विचार के साथ ही कुम्भनदास जी ने पद गाया।

पद –राग घनाश्री – **कबहू देख हों इन नैननु।**
सुंदर श्याम मनोहर मूरति अंग-अंग सुख देननु॥१॥
वृन्दावन विहार दिन दिन प्रति गोप वृन्द संग लेननु।
हंसि हंसि हरखि पतौवन पीवनु बांटि बांटि पय फेननु॥२॥
कुम्भनदास केते दिन बीते किये रेणु सुख सेननु।
अब गिरिधर बिन निश अरुवासर मन न रहतु क्यों चेननु॥३॥

यह पद मार्ग में गाते हुए आए और आकर श्री गोवर्द्धन नाथ जी के दर्शन किए। दो दिन तक कुम्भनदास को दर्शन नहीं हुए क्योंकि वे फतेहपुर सीकरी गए थे, कुम्भनदास जी को वे दो कल्प के समान बीते। श्री नाथ जी के दर्शन करते ही सब दुःख विसर गया और उन्होंने पद गाया।

पद –राग धनाश्री – **नैन भरि देख्यो नंद कुमार।**
ता दिन ते सब भूलि गयो हों विसर्‌यो पति परिवार॥१॥
बिनु देखे हों विकल भई री अंग अंग सब हारि।
ताते सुधि है सांवरी मूरति लोचन भरि भरि वारि॥२॥

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

रूप राशि परिमित नहीं मानों कैसे मिले कन्हाई।
कुम्भनदास प्रभु गोवरधन धर मिली बहुरि उर लाई॥३॥

× × ×

पद –राग घना श्री – **हिलगत कठिन है या मनकी**
जाके लिये देखि मेरी सजनी लाज गई सब तन की॥१॥
धर्म जाउ अरु लोग हंसो सब अरु आवो कुल गारी।
सो क्यों रहे ताहि बिन देखे जो जाको हित कारी॥२॥
रस लुब्धक निमिष नहीं छांडत ज्यों अधीन मृग गाने।
कुम्भनदास यह सनेह भरम को श्री गोवर्द्धन घर जाने॥३॥

ऐसे बहुत पद कुम्भनदास जी ने गाए जिन्हें सुनकर श्री नाथ जी बहुत प्रसन्न हुए और वे कहने लगे – "यह मो बिन रहत नांही।"

[प्रसङ्ग–३]

एक बार राजा मानसिंह सब तरफ से दिग्विजय करके अपने देश को लौट रहे थे। उनके मन में विचार हुआ कि मथुरा–वृन्दावन होकर चलना चाहिए। यह विचार आते ही उन्होंने आगरा से मथुरा के लिए प्रस्थान कर दिया। मथुरा आकर उन्होंने विश्राम घाट पर स्नान किया और श्री केशोराय के दर्शन करके वृन्दावन के लिए चल दिए ग्रीष्मकाल था अतः वृन्दावन के सन्त–महन्तों ने यह विचार किया कि राजा मानसिंह मन्दिरों के दर्शन करने तो अवश्य आएगा अतः उन्होंने अपने अपने श्री ठाकुर जी को जरी के सुन्दर बागे धारण कराए, आभूषण भी बहुत धराए, पिछवाई व चँदोवा भी सब जरी के ही लगाए। उष्णकालीन ताप के कारण राजा मानसिंह से खड़ा नहीं रहा गया। इस प्रकार के चार–पाँच से मन्दिरों के दर्शन किए, सभी मन्दिरों में यही व्यवस्था पाई। सब स्थानों से विदा होकर राजा मानसिंह अपने डेरा पर आए। यहाँ आकर उन्हें विचार आया कि यहाँ से तुरन्त चल देना चाहिए। राजा मानसिंह ने कूँचकर दिया और तीसरे प्रहर में श्री गोवर्द्धन गाँव में आ गए। मानसी गंगा के ऊपर उन्होंने डेरा लगाया और श्री हरदेव जी के दर्शन किए। जैसे वृन्दावन के महन्तों ने ठाट बाट से श्री ठाकुर जी का श‍ृङ्गार कर रखा था, वैसा ही यहाँ भी ठाट बाट से श्री ठाकुर जी का श‍ृङ्गार कर रखा था, वैसा ही यहाँ भी ठाट बाट पाया। जब

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

राजा मानसिंह यहाँ से दर्शन करके चलने लगा तो किसी ने कहा – ''महाराज, यहाँ पर श्री गोवर्द्धन नाथ जी बहुत सुन्दर ठाकुर हैं, वहाँ भी आप दर्शन करने के लिए चलें। ये ठाकुर तो ब्रज के राजा हैं अतः इनके दर्शन तो अवश्य करिए।'' राजा मानसिंह वहाँ से चलकर गोपालपुर गाँव में आए। वहाँ आकर पूछा – ''दर्शनों का समय क्या है?'' किसी ने कहा – ''उत्थापन के दर्शन तो हो चुके हैं अब तो भोग के दर्शन होंगे।'' यह सुनकर राजा मानसिंह श्री गोवर्द्धन नाथ जी के दर्शनों के लिए गिरिराज ऊपर आए। उष्णकाल था अतः मार्ग के श्रम को दूर करते हुए चले आए। गर्मी में राजा बहुत व्याकुल हो गए थे। इतने में ही भोग के दर्शनों के लिए किवाड़ खुले। राजा मानसिंह को मणिकोटे में ले गए। उन दिनों श्री नाथ जी की सेवा पूर्ण वैभव से होती थी। बड़ा मन्दिर सिद्ध हुआ था। श्री गोवर्द्धन नाथ जी के आगे गुलाब कुण्ड का शृङ्गार हुआ था। निज मन्दिर व मणिकोठा सभी जलमय हो रहे थे। उस समय राजा मानसिंह दर्शनों के लिए गए थे। दर्शन करके उन्होंने साष्टाङ्ग दण्डवत की। ग्रीष्म से व्याकुल राजा को शीतलता का अनुभव हुआ। बहुत सुख प्राप्त हुआ और श्री गोवर्द्धन नाथ जी का श्रीमुख देखकर तो राजा अति प्रसन्न हुआ। उसने कहा – ''साक्षात् पूर्ण ब्रह्म श्री कृष्ण वृन्दावन चन्द्र श्री गोवर्द्धन नाथ जी हैं। जो कुछ भागवत में सुना था, वह आज आँखों से देखा है। धन्य है, आज मेरा बड़ा भाग्य है।'' मन में उसने यह भी कहा – ''यह भोग का समय है। प्रभु की राजधानी का समय है। प्रभु विराजे हैं, आगे ताल मृदङ्ग बज रही हैं, कीर्तन हो रहा है।'' उस समय कुम्भनदास जी मणिकोठा में दर्शन कर रहे थे और कीर्तन गा रहे थे। कुम्भनदास जी का पद राजा मानसिंह के मन में समा गया। जैसा कोटि कन्दर्प लावण्य स्वरूप और वैसा ही भावात्मक कुम्भनदास जी के कीर्तन का पद, उन्हें भाव विभोर कर दिया।

पद –राग नट –

रूप देखि नैना पल लागै नहीं।
गोवर्द्धन के अङ्ग अङ्ग प्रति निरखि नैन मन रहत नहीं ॥१॥
कहारी कहौं कछू कहत न आवै चित चौर्यौ वे मांग दही।
कुम्भनदास प्रभु के मिलिवे की सुन्दर बात सखियन सों जु कही ॥२॥

× × ×

पुनः पद –गाकर सुनाया

पद –राग श्री राग –

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

आवत गिरिधर मन जु हर्यौ हौ।
हों गृह अपने मन सचु सों बैठी निरखि वदन अचरा विसर्यौ हो ॥१॥
रूप निधान रसिक नन्द नन्दन निरखि नैन धीरज न धर्यौ हौ।
कुम्भनदास प्रभु श्री गोवर्द्धन घर अङ्ग अङ्ग प्रेम पीयूष भर्यौ हौ ॥२॥

ऐसे पद कुम्भनदास जी गा रहे थे इतने में भोग के दर्शन हो चुके। तब राजा मानसिंह दण्डवत करके अपने डेरा पर गया। कुम्भनदास जी भी संध्या आरती के दर्शन करके अपनी सेवा सम्पन्न करके अपने घर को गए। राजा मानसिंह अपने डेरा पर पहुँच कर अपने इर्द-गिर्द बैठे लोगों से श्री गोवर्द्धन जी के शृङ्गार की वार्ता करने लगे। फिर उन्होंने पूछा - "श्री गोवर्द्धन नाथ जी के आगे कौंन पद गा रहा था? इन्होंने ऐसे विष्णुपद गाए हैं जिनके बारे में कुछ भी नहीं कहा जा सकता है?" किसी ने कहा - "महाराज, एक ब्रजवासी है जो पद गा रहा था, उसका नाम कुम्भनदास है। ये वही कुम्भनदास है जो देशाधिपति से मिले थे। इनके बारे में आपने सुन तो लिया होगा।" राजा मानसिंह ने इच्छा प्रकट की - "हम भी इनसे मिलना चाहते हैं।" अतः राजा मानसिंह प्रातःकाल उठे और गिरिराज जी की परिक्रमा के लिए निकले। व परासोली पहुँच गए। उस समय कुम्भनदास जी स्नान कर बैठे ही थे, इतने में ही श्री गोवर्द्धन नाथ जी पधारे और अपने श्री मुख से बोले - "कुम्भनदास जी, मैं तुमसे एक बात कहूँगा।" इतने में ही राजा मानसिंह आ गए और कुम्भनदास जी को प्रणाम कर बैठ गए। श्री नाथ जी तो वहाँ से हटकर दूर खड़े हो गए। श्री नाथ जी कुम्भनदास और उनकी भतीजी को दिखाई दे रहे थे। कुम्भनदास जी की दृष्टि तो श्री नाथ जी पर लगी हुई थी, वे श्री नाथ जी को अपलक दृष्टि से देख रहे थे। तब उनकी भतीजी बोली - "बाबा, राजा बैठे हैं।" कुम्भनदास जी ने कहा - "मैं क्या करूँ बैठे हैं तो? जो बात कह रहे थे, वे तो बात न कह कर भाग कर चले गए।" उसी समय दूर से ही श्री नाथ जी ने पुनः कहा - "कुम्भनदास, मैं तुमसे एक बात कहूँगा।" यह सुनकर कुम्भनदास जी बहुत प्रसन्न हुए। वे अपनी भतीजी से बोले - "ओ अमुकी, आरसी लाओ, मैं तिलक करूँगा।" भतीजी ने कहा - "बाबा, आरसी को तो पड़िया पी गई।" राजा मानसिंह ने उनकी भतीजी से पूछा - "ओ छोरी, पडिया क्या पी गई?" तब उसने कठौती में पानी भर कुम्भनदास जी के सामने रखा और कहा - "बाबा, इसमें मुँह देखकर तिलक कर लीजिए।" कुम्भनदास जी कठौती के पानी में मुँह देखकर तिलक करने लगे। इतने में ही राजा मानसिंह ने अपनी सोने की आरसी कुम्भनदास जी के आगे रखी और कहा - "बाबा, इस आरसी को

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

लीजिए और इसमें मुँह देखकर तिलक किया करिए।'' कुम्भनदास जी बोले – ''अरे भैया, मैं इस आरसी का क्या करूँगा? हमारे यहाँ तो छान (फूँस) के घर हैं, कोई इस सोने की आरसी के पीछे हमारी जान ले लेगा। हम तो इस आरसी को नहीं लेंगे।'' इसके बाद राजा मानसिंह ने कुम्भनदास जी के आगे सोने की थैली रखी। कुम्भनदास जी ने कहा – ''हमको धन की कोई आवश्यकता नहीं है। हमारी तो खेती है, इसका धन प्राप्त होता है। हमारे लिए तो वही पर्याप्त है। उसी से हमारा खान-पान चल जाता है।'' राजा मानसिंह ने कहा – ''तुम्हारे इस गाँव का अधिकार तुम्हें लिख देता हूँ।'' कुम्भनदास ने कहा – ''भैया, मैं ब्राह्मण नहीं हूँ। मैं तेरा दान के लिए संकल्प जल कैसे स्वीकार करूँ? दान लेना तो ब्राह्मण को ही शोभा देता है।'' तब राजा मानसिंह ने कहा – ''बाबा, कुछ तो आज्ञा दो, मैं आपकी क्या सेवा करूँ?'' कुम्भनदास जी ने कहा – ''तुम हमारा कहा हुआ मानोगे?'' राजा मानसिंह ने हाथ जोड़कर कहा – ''महाराज, आप कहोगे वही मैं करूँगा।'' कुम्भनदास जी ने कहा – ''भैया, अब तुम चले जाओ और पुनः इस हेतु से मेरे यहाँ कभी मत आना।'' राजा मानसिंह ने कहा – ''धन्य है महाराज, मैं सारी पृथ्वी पर घूमकर आया हूँ, मैंने माया के भक्त तो बहुत देखे हैं, लेकिन भगवद् भक्त के दर्शन मुझे केवल आज ही हुए हैं।'' यह कहकर राजा मानसिंह दण्डवत करके उठकर चल दिया। इसके बाद श्री नाथ जी ने कुम्भनदास जी से आकर वह बात कही जिसे सुनकर कुम्भनदास बहुत प्रसन्न हुए। इसके बाद कुम्भनदास जी, श्री गिरिराज पर्वत के ऊपर आकर श्रीनाथ जी की सेवा में तत्पर हुए।

[प्रसङ्ग-४]

एक समय कुम्भनदास जी से मिलने के लिए वृन्दावन के महन्त हरिवंश आदि आए। उन्होंने यह भी सुना था कि कुम्भनदासजी से श्रीनाथजी वार्ता करते हैं। उन्होंने यह भी सुना कि कुम्भनदास जी बहुत सुन्दर पद रचना करके कीर्तन करते हैं। उन्होंने कुम्भनदास जी का कीर्तन-काव्य सुना भी था और उनका यह दृढ विश्वास था कि ऐसे पदों की रचना बिना श्री ठाकुर जी के साक्षात्कार के सम्भव नहीं है। यह विचार करके कुम्भनदास जी से मिलने आए। वे कुम्भनदास जी से मिलकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा – ''कुम्भनदास जी, तुमने विष्णुपद बहुत रचे है, उन्हें सुनकर हमारा मन बहुत राजी (प्रसन्न) हुआ है लेकिन आपका रचा हुआ स्वामिनी जी का पद नहीं सुना है। आप कोई स्वामिनी जी का पद सुनाओ।'' तब कुम्भनदास जी ने स्वामिनी जी का पद रचकर उनके सम्मुख सुनाया। वह पद इस प्रकार है –

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पद -राग रामकली - **ताल चर चरी**

कुंवरि राधिका के तुव सकल सौभाग्य की, वा वदन पर कोटि सत चन्द्र वारों ॥

खञ्जन कुरङ्ग सत कोटि जवन ऊपर, सिंह सत कोटि ऊपर न्योंछावरी उतारों ॥

मत्तससकोटि चालि पर कुम्भ सत कोटि, इन कुचन पर वारि डारों ॥१ ॥

कीर दश कोटि दशनन पर कहिन वारों।

पक्व कन्दूर बन्धूक सत कोटि अधरन ऊपर वारि रूचिर गर्व टारों॥

नाग सत कोटि बेनी ऊपर कपोत सत कोटि कोटि कर जुगल पारों।

वारने नांहिन कोऊ लोक उपमा जुधारों ॥२ ॥

दास कुम्भन स्वामिनी सुखन सिख अति अद्भुत सुठान कहां लगि समारों।

लाल गिरिधर कहत मोहि तोहि लों जी वह रूप छिन छिन निहारों ॥३ ॥

यह पद कुम्भनदास जी ने गाया जिसे सुनकर महन्त बहुत रीझे। वे बोले - "हमनें स्वामिनी जी के बहुत पद रचे हैं। बहुत उत्तम से उत्तम उपमा भी दी हैं लेकिन आपके पद ने तो उन सब पर पानी फेर दिया है। वास्तव में आप महापुरुष हैं, आपकी सराहना कहाँ तक करें?" उन महन्त जी ने कुम्भनदास जी की बहुत बड़ाई की, वे बहुत प्रसन्न हुए। सभी सन्त महन्त कुम्भनदास जी से विदा होकर अपने घर को गए।

[प्रसङ्ग-५]

एक समय श्री गुसांई जी श्री गोकुल में अपने घर से श्री नवनीत प्रिय जी से आज्ञा लेकर देशाटन करने को निकले और सर्वप्रथम श्री नाथ जी द्वार पधारे। उनका संकल्प द्वारिका जाने का था। श्री नाथ जी द्वार में पधार कर उन्होंने श्री ठाकुर जी का सेवा शृङ्गार किया। बाद में भोजन करके गादी ऊपर विराजे तो सभी सेवक दर्शन करने को आए। उस समय बातें चली कि कुम्भनदास जी के पास द्रव्य का बहुत संकोच है। उनके सात बेटे हैं। आमदनी केवल खेती की है। खेती में जो धान आता है उसी से गुजारा करते हैं। यह बात सुनकर गुसाँई जी ने इसे अपने मन में ही रखा। उत्थापन के समय कुम्भनदास जी दर्शनों के लिए आए। श्री गुसाँई जी ने कहा - "हम द्वारिका में श्री रणछोड़ जी के दर्शन हेतु जा रहे हैं और परदेश भी जाएँगे क्योंकि वैष्णवों का बहुत आग्रह है अतः तुम भी हमारे साथ चलो। परदेश में भगवदीय को गृह कार्य की बाधा नहीं होती है। उसका समय व्यतीत हो जाता है और कुछ जान भी नहीं पड़ता है। मुझे यह भी

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

ज्ञात हुआ है कि आपके यहाँ द्रव्य का भी बहुत संकोच है अतः कुछ सिद्धि भी हो जाएगी। अतः आपको हमारे साथ चल देना चाहिए।'' कुम्भनदास जी ने कहा – ''जो आज्ञा।'' इतने में ही दर्शन का समय हो गया। श्री गुसाँई जी स्नान करके श्री नाथ जी के मन्दिर में पधारे। श्री नाथ जी की सेवा सम्पन्न करके और श्री नाथ जी को पौढा कर बैठक में पधारे। उन्होंने कुम्भनदास जी को निर्देश किया – ''कुम्भनदास जी, तुम सेवा से निवृत्त होकर शीघ्र ही आना हम कल आरती करके अप्सरा कुण्ड पर जाकर ठहरेंगे।'' कुम्भनदास जी श्री गुसाँई जी को दण्डव प्रणाम करके अपने घर आए। प्रातःकाल आप अपनी सेवा सम्पन्न करके और श्री नाथ जी के दर्शन करके अप्सरा कुण्ड पर आए। श्री गुसाँई जी, श्री नाथ जी की आज्ञा लेकर नीचे आए। आपने भोजन किया और सेवकों को महाप्रसाद लिवाया। उसी समय प्रस्थान का मुहूर्त्त था अतः प्रस्थान करते हुए अप्सारा कुण्ड पर डेरा किया। जो सेवक आगऊ (आगे) खड़े थे उन्होंने श्री गुसाँई जी का डेरा पधराया। वे पौढे ही थे कि शेष सेवक भी वहाँ आ पहुँचे। कुम्भनदास जी वहाँ बैठकर श्री नाथ जी से बिछुडने के क्रम में विचार करने लगे – ''प्राणनाथ विछुरन की विरियाँ जानत नांहिन काऊ। हृदय की बात किसे कही जाए। कहे तो उसे जो बात कहने को हो।'' यह विचार करते करते श्री नाथ जी के उत्थान का समय हो गया। श्री गुसाँई जी अपने डेरा में जगे। कुम्भनदास को भी दर्शनों की सुधि हुई। अतः वहाँ पूँछरी की ओर कोने में जाकर बैठकर कीर्तन गाने लगे। वे कीर्तन गा रहे हैं और उनके नेत्रों से अविरल अश्रु प्रवाह हो रहा था।

पद –राग सारङ्ग – **केते द्दैज गये बिन देखे।**

तरुण किशोर रसिक नन्द नन्दन कछूक उठति मुख रेखें।।१ ।।
वह शोभा वह कान्ति वदन की कोटिक चन्द विशेषे।
वह चितवन वह हास मनोहर वह नटवर वपु मेषे।।२ ।।
स्याम सुन्दर संग मिलि खेलन की आवत जियअपेरवें।
कुम्भनदास लाल गिरिधर बिन जीवन जन्म अलेखें।।३ ।।

यह पद कुम्भनदास जी ने गाया जिसे श्री गुसाँई जी ने अपने डेरे के भीतर सुना। कुम्भनदास जी का क्लेश श्री गुसाँई जी से सहा नहीं गया। श्री गुसाँई जी डेरे के बाहर पधारे। उन्होंने अपने श्री मुख से कहा – ''कुम्भनदास, अब तुम शीघ्र जाकर श्री नाथ जी के दर्शन करो। तुम्हारा परदेश गमन तो पूर्ण हो चुका। जो तुम्हारी अवस्था है, वही अवस्था श्री नाथ जी की भी है। भगवदीयों का बिछोह श्री नाथ जी भी सहन नहीं कर पाते हैं।'' एक बार अक्का जी ने गज्जनधावन को पान लेने के लिए भेज दिया था। गज्जनधावन श्री नवनीत प्रिय जी का

CC-0. In Public Domain. Digitized by Muthulakshmi Research Academy

वियोग एक क्षण भी सहन नहीं कर पाते थे। वे थोडी दूर ही गए थे, उन्हें ज्वर चढ गया। वे मूर्च्छा खाकर गिर गए। श्री अक्का जी ने श्री नवनीत प्रिय जी को भोग समर्पित किया। वहाँ श्री नवनीत प्रिय जी ने गज्जनधावन का बोल नहीं सुना। वे अपने श्री मुख से बोले – "मेरा गज्जन धावन कहाँ है ?" श्री अक्का जी ने कहा – "वह तो पान लेने के लिए भेजा है।" श्री नवनीत प्रिय जी ने कहा – "मेरा गज्जन धावन आएगा तो ही मैं भोग आरोगूँगा।" वे श्री हस्त खेंच कर बैठ गए। गज्जनधावन के आने की प्रतीक्षा करने लगे। श्री अक्का जी ने शीघ्र ही गज्जन धावन को बुलाने के लिए सेवक भेजा। गज्जनधावन शीघ्र आया और उसने श्री नवनीत प्रिय जी से कहा – "बाबा, आरोगो।" तब श्री नवनीत प्रिय जी ने भोग आरोगा यह श्री आचार्य जी महाप्रभु की मर्यादा है, जितना सेवक का स्वामी के प्रति अनुराग होता है। स्वामी (श्री ठाकुर जी) का भी सेवक के प्रति उतना ही प्रेम होता है। श्री भगवद् गीता में भगवान ने कहा है –

श्लोक – "ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।"

[जो भक्त मेरे प्रति जितना आसक्त होता है, मैं भी उससे उतना ही प्रेमासक्त रहता हूँ।]

यह आधा श्लोक श्री ठाकुरजी ने अपने श्रीमुख से कहा है। यहाँ तुम्हारी यह व्यवस्था है, वैसी ही श्री ठाकुर जी की भी व्यवस्था है। "ऐसा कुम्भनदास और श्रीनाथजी का विरह था। अतः श्री गुसाँई जी ने कुम्भनदास जी को श्रीनाथजी के दर्शन करने जाने की सीख दी। कुम्भनदास जी ने श्रीनाथजी के दर्शन करके एक पद गाया।"

पद–राग सारङ्ग : **जो ये चौंप मिलन की होय।**

तो क्यों रहे ताहि बिन देखें लाख करो जिन कोय॥१॥

जो यह विरह परस्पर व्यापै जो कछू जीवन बनें।

लोकलाज कुल की मर्यादा एकौ चित्त न गनें॥२॥

कुम्भनदास प्रभुजाहि तन लागी और न कछू सुहाय।

गिरिधर लाल तोहि बिन देखे छिन–छिन कलप विहाय॥३॥

यह पद कुम्भनदास जी ने श्रीनाथजी के सन्निधान में गाया। इस पद को सुनकर श्रीनाथजी भी बहुत प्रसन्न हुए। कुम्भनदास जी ने श्रीनाथजी को प्रसन्न देखा तो मन में अतीव हर्षित हुए।

[प्रसङ्ग–६]

एक समय कुम्भनदास जी श्री गुसाँईजी के समीप बैठे थे। श्री गुसाँई जी ने कुम्भनदास जी से पूछा– "कुम्भनदास, तुम्हारे कितने बेटा है ?" कुम्भनदास जी ने श्री गुसाँईजी से कहा–

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

''महाराज, मेरा तो डेढ बेटा है। वैसे तो मेरे सात बेटे है।'' श्री गुसाँई जी ने पूछा– ''कुम्भनदास जी, डेढ़ बेटा होने का क्या कारण है ?'' कुम्भनदासजी ने कहा– ''महाराज, एक पूरा बेटा तो चतुर्भुजदास है और आधा बेटा कृष्णदास है क्योंकि वह केवल श्रीनाथजी की गायों की सेवा करता है।'' कुम्भनदास जी ने कृष्णदास को आधा बेटा क्यों कहा है ? उसका कारण है– श्री आचार्य जी महाप्रभु ने पुष्टिमार्ग प्रगट किया है। यह पुष्टिमार्ग है– जो व्रजभक्तों के लिए प्रगट किया गया है। इसलिए भगवदीयों ने गाया है–

''जो सेवा रीति प्रीति ब्रजभक्तन की जनहित जग प्रगटाई।''

ब्रजभक्तों की क्या रीति है ? श्री ठाकुरजी के सन्निधान में रहे तो श्री ठाकुरजी की सेवा करे और श्री ठाकुरजी जीवन में पधारें तो गुणगान दोनों करें। यदि यह सम्पूर्णतः सेवा हो तो ही पूर्णता आवे। इसमें से एक वस्तु हो तो आधा रहे। इसलिए चतुर्भुजदास में सेवा और गुणगान दोनों है अतः वह पूरा है, लेकिन कृष्णदास में केवल सेवा ही है अतः वह आधा है। तब श्रीगुसाँई जी ने अपने श्रीमुख से कहा– ''जो भगवदीय है, वही बेटा है। यदि भगवदीय नहीं हुए और संख्या में बहुत हुए तो किस प्रयोजन के है ? ऐसा चतुर्भुजदास की वार्ता में लिखा है।''

अथ कृष्णदास की वार्ता

[वैष्णव - ९१, प्रसङ्ग-१]

कृष्णदास श्रीनाथजी की गायों के ग्वाल थे। श्री गुसाँई जी ने इन्हें श्रीनाथजी की गायों की सेवा प्रदान की थी। प्रातःकाल गायों के खिरक में सेवा करते थे और फिर गायों को चराने के लिए जंगल को जाते थे। दिनभर गायों की सेवा में रहते थे। सायंकाल गायों के साथ ही लौटते थे। एक दिन पूँछरी की ओर से गाय चराकर गायें के साथ ही आ रहे थे। अन्य सभी गाय तो खिरक में आ गईं, केवल एक गाय जिसकी औंडी (थन) बड़ी और भारी थी अतः वह बहुत धीरे धीरे चलती थी। गाय को खिरक की ओर आते आते अँधेरा हो गया। पर्वत के नीचे अँधेरे में एक नाहर (बघेरा) निकला और गाय पर झपटा। कृष्णदास ने नाहर से कहा– ''यह तो श्रीनाथजी की गाय है, यदि तू भूखा है तो मेरे ऊपर आक्रमण कर।'' इतने में गाय तो भाग कर खिरक में चली गई और नाहर ने कृष्णदास को अपना ग्रास बना लिया।

हम पहले कह चुके हैं कि सब गाय खिरक में आईं तो श्रीनाथजी आप स्वयं गाय

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

दुहने आए। अन्य सब गायों को तो ग्वाले दुहने लगे और उस बड़ी गाय को श्रीनाथ जी स्वयं दुहने को बैठे। कृष्णदास बछड़ा को पकड़े हुए हैं, गाय बछड़ा को चाट रही है और श्रीनाथ जी गाय दुह रहे है, इस प्रकार का दर्शन कुम्भनदास जी को हुआ। गाय दुहने के पश्चात् श्रीनाथजी गिरिराज के ऊपर मन्दिर में पधारे। श्रीगुसाँईजी ने भोग समर्पित किया। कुम्भनदासजी खिरक में से आए और दण्डौती शिला के पास खड़े हुए। इतने में ही समाचार मिला कि कृष्णदास को नाहर ने मार दिया। इस बात को सुनकर कुम्भनदास जी मूर्छित होकर गिर पड़े। देहानुसंधान भी भूल गए। उनको बुलवाने की चेष्टा की गई लेकिन वे कुछ भी नहीं बोल सके। यह समाचार श्री गुसाँईजी के पास भी पहुँचा कि कृष्णदास को नाहर ने मार दिया। कृष्णदास ने गाय को तो बचा लिया लेकिन कृष्णदास हत हुए और अभी तक वे वहीं हत स्थान पर ही पड़े हुए हैं। श्री गुसाँई जी ने कहा– "गाय कभी भी साथ नहीं छोड़ती है, अन्त समय में गाय के दान का संकल्प भी इसीलिए होता है कि गाय जीवन को उत्तम लोक में पहुँचाती है अत: गाय कभी भी साथ नहीं छोड़ती।" श्री गुसाँई जी ने कहा– "कुम्भनदास जी कहां हैं?" तब किसी ने कहा– "महाराज, कुम्भनदास जी को बहुत क्लेश बाधा हुई हैं। कुम्भनदास जी तो ऊपर आ रहे थे तभी किसी ने कुम्भनदासजी को समाचार दिया तो वे सुनते ही मूर्छित होकर गिर गए। वे तो चेष्टा करने पर भी बोलते नहीं है।" श्री गुसाँईजी ने अपने श्रीमुख से कुम्भनदास जी के समाचार लाने का आदेश दिया। समाचार वाहक ने श्री गुसाँई जी को बताया –"महाराज, कुम्भनदास जी को तो कुछ भी बोध नहीं है।" श्री गुसाँई जी शयन-भोग के दर्शन करके श्रीनाथजी को पौढ़ा कर नीचे आए। मार्ग में देखा कि कुम्भनदास जी बेहोश पड़े हैं और उनके चारों ओर लोग उन्हें घेर कर खड़े हैं। लोग कहने लगे– "कुम्भनदास जी कैसे भगवदीय हैं लेकिन पुत्र शोक बहुत बुरा होता है। इस पीड़ा को सहन करना बहुत कठिन है। पुत्र तो अपनी आत्मा है, इस पीड़ा को पचाना बहुत कठिन है।" लोगों की इस प्रकार की बातें सुनकर श्री गुसाँई जी ने विचारा– "कुम्भनदास जी बहुत बड़े भगवदीय हैं, ये पुत्र शोक से इतने आहत होने वाले नहीं हैं, कोई अन्य बात है।" यह बात करके श्री गुसाँई जी ने कुम्भनदास जी से कहा– "कुम्भनदास जी कल प्रातःकाल तुम शीघ्र ही आना तुम्हें हम श्रीनाथजी के दर्शन करायेंगे। तुम अपने मन में अधिक खेद मत करो।" श्री गुसाँईजी के श्रीमुख से कहे गए वचनों को सुनकर कुम्भनदास जी उठ बैठे। बहुत प्रसन्न हुए। श्रीगुसाँई जी को दण्डवत् प्रणाम किया और फिर अपने करणीय कार्यों में लग गए। दूसरे दिन प्रातःकाल कुम्भनदास जी दर्शन के लिए आए। श्रीनाथजी का शृङ्गार करके श्री गुसाँई जी ने कहा– "सबसे पहले

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

कुम्भनदासजी को दर्शन करा दो।'' इस प्रकार कुम्भनदास जी ने वैष्णवों के ऊपर यह उपकार किया, अन्यथा सूत की को मन्दिर में प्रवेश की भी आज्ञा नहीं थी। कुम्भनदास जी के अनुग्रह से सूतकी को दर्शन लाभ होने लगा। कुम्भनदासजी प्रतिदिन एक बार दर्शन करके परासौली में जाकर बैठ जाते थे और वहाँ बैठे-बैठे वियोग के पद गाते रहते थे।

पद- रागघनाश्री- **तुम्हारे मिलन बिन दुखित गुपाल।**

अति आतुर ब्रज सुन्दर प्यारे विरही बेहाल॥१॥

सीतल चन्द तपन भयौ दाहत किरण कमल जनुजाल।

चन्दन कुसुम सुहावत नाही धनसार लगत बढी ज्वाल॥२॥

कुम्भनदास प्रभु नवघन तुम बिन कनकलता मानों सुखी जीव सों काल।

अधरामृत वंशी सींचि लेऊ तुम गिरिगोवर्धनलाल॥३॥

× × ×

राग घनाश्री - **अब दिन रात्रि पहर से भये।**

तबते निघटत नाहिन जबते हरि मधुपुरी गये॥१॥

यह जानिये विधाता जुग सम कीने जाय नये।

जागत जात विहातन के ऐसे प्रीति गये॥२॥

ब्रजवासी अति परम दीन भये व्याकुल सोच लये।

ऊने प्राण दुखित जलरुहगन दारुण हेम पये॥३॥

कुम्भनदास बिछुरत नंद नंदन बहुत सन्ताप भये।

अब गिरिधर बिन रहत निरन्तर नौतन नर छये॥४॥

× × ×

राग केदारो- **औरन के समीप विछुरनों आयो मेरो हिसा।**

सब कोउ सोवै सुख अपने आली मोकों चाहत रिसा॥१॥

ना जानों यह विधाता की गति मेरे आंक लिखे एसौ कौन रिसा।

कुम्भनदास प्रभु गिरिधर कहत निसदिन रही ज्यों चातक घन मिला॥२॥

ऐसे पद गायन करके कुम्भनदास जी ने सूतक का समय बिताया। शुद्ध होने पर कुम्भनदास जी सेवा में आए। कुम्भनदास जी को दर्शन की ऐसी आर्तभावना थी। कुम्भनदास जी श्री आचार्यजी महाप्रभु के ऐसे परम कृपापात्र भगवदीय थे, इनकी वार्ता का कोई पर नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Digitized by Muthulakshmi Research Academy

अथ कृष्णदास अधिकारी की वार्ता

[वैष्णव - ९२, प्रसङ्ग-१]

एक बार कृष्णदास शूद्र द्वारिका गए थे। जब वे श्री रण छोड़ जी के दर्शन करके लौट रहे थे तो उन्हें मीराबाई का गाँव आघन में आने का अवसर मिला। वे मीरा बाई के घर गए। वहाँ हरिवंश व्यास आदि विशेष वैष्णव भी आये हुए थे। उन वैष्णवों को आठ-दस दिन हो गए थे किसी की विदा नहीं हुई थी। कृष्णदास ने आने के साथ ही कहा- "मैं तो चलूँगा।" तब मीरा बाई ने कहा- "अभी बैठो, आप श्रीनाथजी की भेंट लेते जाओ।" मीरा बाई ने कितनी ही मुहरें भेंट स्वरूप देने का मनोरथ किया। जब वे देने लगी तो कृष्णदास ने लेने से मना कर दिया और कहा - "तू श्री आचार्य जी महाप्रभु की सेविका नहीं है, अतः हम तेरी हाथ की स्पर्श की हुई भेंट को छूएंगे नहीं।" यह कहकर कृष्णदास वहाँ से उठकर चल दिए। उस समय उनसे एक वैष्णव ने कहा- "तुमने श्रीनाथजी की भेंट स्वीकार नहीं की यह अच्छा नहीं किया।" कृष्णदास ने कहा- "मीराबाई के यहाँ जितने भी सेवक बैठे हुए थे, सभी की नाक नीचे करके भेंट लौटाई है। इतने अन्य वैष्णव-सेवक कहाँ मिलते। वे भी तो जानेंगे कि एक बार एक शूद्र श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक आया था, उसने भेंट स्वीकार नहीं की थी। फिर उनके गुरु की तो न जाने क्या बात होगी?"

[प्रसङ्ग-२]

पहले श्रीनाथजी की सेवा बंगाली करते थे। श्रीआचार्य जी महाप्रभु ने मुकुट-काछनी और हीरा के आभरण धारण करा दिये थे, उसी प्रकार नित्य सेवा करते थे, जो भेंट आती थी, वह सब खर्च में आ जाती थी, कुछ भी संग्रह करके नहीं रखते थे। बंगालियों के सेवा करते हुए श्री आचार्य जी महाप्रभु ने कृष्णदास को आज्ञा की- "तुम श्री गोवर्द्धन में रहो और टहल (सेवा) करो।" इस प्रकार कृष्णदास अधिकारी हुए और अधिकार करने लगे। एक दिन वे मथुरा को जाने लगे वे अडीग तक ही पहुँचे थे उन्हें पेंडे में अवधूतदास मिले। वे महापुरुष थे। ब्रजमण्डल में भ्रमण करते थे। अवधूत दास ने कृष्णदास को देखकर कहा- "तुम कहाँ जा रहे हो।" कृष्णदास ने कहा- "मैं मथुरा जा रहा हूँ।" अवधूत दास ने पूछा- "श्रीनाथजी की सेवा कौन करता है?" कृष्णदास ने कहा- "बंगाली सेवा करते हैं।" अवधूत दास ने कहा- "श्रीनाथजी को अपना वैभव बढ़ाना है। इसलिए तुम बंगालियों को

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

सेवा से पृथक क्यों नहीं करते हो?'' अवधूतदास से श्रीनाथजी ने कहा- ''मुझे बंगाली बहुत दु:ख देते है।'' बंगाली जब श्रीनाथजी को भोग धरते थे, तो उनकी चुटिया में छोटा सा देवी का स्वरूप था, जब भोग धरते थे तो उस स्वरूप को सामने पधरा देते थे और भोग सराने पर उसे पुनः चुटिया में स्थापित कर लिया करते थे। यह बात श्रीनाथजी ने अवधूतदास को बताई थी। अवधूतदास ने कृष्णदास से कहा- ''तुम बंगालियों को सेवा से दूर करो।'' कृष्णदास ने कहा- ''श्री आचार्यजी महाप्रभु की आज्ञा के बिना हम इन्हें सेवा से पृथक कैसे कर सकते है?'' अवधूतदास ने कहा- ''तुम अडेल जाकर श्री आचार्य जी महाप्रभु से आज्ञा लेकर शीघ्र आओ। इन बंगालियों को जैसे भी बने वैसे सेवा से दूर करो।'' इसके पश्चात् कृष्णदास अडीग से ही श्री गोवर्द्धन आए और बंगालियों से कहा-''मैं तो श्री गुसाँई जी के पास अडेल जा रहा हूँ, तुम सावधानी से सेवा करना।'' इसके बाद सभी सेवकों से भी कहा- ''मैं किसी विशेष कार्य से श्री गुसाँई जी के पास अडेल जा रहा हूँ, तुम सावधान रहना।'' फिर श्रीनाथजी से विदा लेकर अडेल के लिए चल दिए। पन्द्रह दिन की यात्रा करके अडेल में पहुँच गए। श्री गुसाँई जी को दण्डवत प्रणाम किया। श्री गुसाँई जी ने पूछा- ''कृष्णदास तुम किस प्रयोजन से यहाँ आए हो?'' कृष्णदास ने कहा- ''श्रीनाथजी को अपना वैभव बढ़ाना है, बंगालियों ने बहुत माथा उठा रखा है। जो भेंट आती है, उसे ले जाते हैं ओर अपने गुरू को देते हैं।'' श्रीगुसाँई जी ने कृष्णदास से कहा- ''श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने असुर व्यामोह लीला दिखाई। इसके बाद श्री गोपीनाथजी पूर्व देश में पधारे वहाँ पर एक लाख के लगभग भेंट आई। वे वहाँ से अडेल पधारे और कहा- ''यह हमारा प्रथम परदेश भ्रमण है, इससे जो भी भेंट आई है, वह सब श्रीनाथजी के लिए ही समर्पित है।'' श्रीगोपीनाथजी दस-बारह दिन अडेल रहकर पुनः श्रीनाथद्वार पधारे। वहाँ श्रीनाथजी के दर्शन करके जो लाए थे वह सब उनके लिए समर्पित कर दिया। उस समर्पण में जडाऊ आभूषण सोने चाँदी के थाल-कटोरा-डबरा-चम्मच आदि थे। सब कुछ श्रीनाथजी को भेंट करके श्रीगोपीनाथजी अडेल आ गए। एक वर्ष के भीतर ही ये बंगाली सभी सामान अपने गुरु के पास ले गए। वास्तव में बंगालियों ने माथा तो बहुत उठा लिया है लेकिन श्री आचार्य जी महाप्रभु ने इन्हें रखा है। अतः इन्हें हम कैसे निकालेंगे, यह बात समझ में नहीं आ रही है। कृष्णदास ने श्री गुसाँई जी से कहा- ''महाराज श्रीनाथजी की आज्ञा है कि इन बंगालियों को निकालो। अतः आप इस बात में कुछ भी मत बोलो। आप तो केवल आज्ञा कर दो, शेष कार्य तो मैं अपने आप कर लूँगा। जैसे भी बंगाली निकाले जायेंगे मैं अपने आप निकाल दूँगा। आप तो राजा टोडरमल और

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

बीरबल के नाम पृथक्-पृथक् दो पत्र लिख दो। उसमें यह आज्ञा करो कि कृष्णदास जो कहे सो कर देना।'' श्री गुसाँई जी के कृष्णदास के कहे के अनुसार दो पत्र लिख दिए जिन्हें लेकर कृष्णदास आगरा आ गए। वे वहाँ राजा टोडरमल और बीरबल से मिले और उनके नाम के पत्र उन्हें दे दिए। पत्रों को पढ़कर उन्होंने कृष्णदास से पूछा- ''तुम जो कहो हम वही करे।'' कृष्णदास ने कहा- ''अभी तो मैं मथुरा जा रहा हूँ। श्रीनाथजी की सेवा से बंगालियों को पृथक् करना है, इस कार्य में आपको सहायता करनी है।'' यह कह कर कृष्णदास आगरा से विदा होकर श्रीनाथजीद्वार के लिए चले। वे मथुरा आ पहुँचे। मार्ग में अवधूत दास भी मिल गए। अवधूतदास ने कहा- ''कृष्णदास बंगालियों को श्री नाथजी सेवा से पृथक करने में ढील क्यों कर रखी है। श्रीनाथजी की इच्छा है, उन्हें अपना वैभव फैलाना है।'' कृष्णदास ने कहा- ''मैं श्री गुसाँई जी की आज्ञा ले आया हूँ ओर अब श्रीनाथजीद्वार जाकर बंगालियों को सेवा से पृथक् करने का कार्य ही सम्पन्न करना है। इतना कहकर कृष्णदास चले और श्रीनाथजीद्वार आ पहुँचे। वे सभी बंगाली रुद्रकुण्ड के ऊपर रहते थे। उनकी वहाँ पर झोपडियाँ थी। कृष्णदास ने उनकी झोपडियों में आग लगा दी। बहुत शोरगुल हुआ। बंगाली लोग श्रीनाथजी की सेवा छोड़कर नीचे आ गए। कृष्णदास ने पर्वत के ऊपर तो अपने आदमी भेज दिए। बंगालियों ने देखा कि कृष्णदास ने उनकी झोपडियों में आग लगा दी है। वे कृष्णदास से लड़ने लगे। कृष्णदास ने दो-दो चार-चार लाठी सभी को झाड़ दी। बंगाली लोग वहाँ से भागकर मथुरा में रूप सनातन के पास आए। उन्हें सारा घटना चक्र सुना दिया। इतने में ही कृष्णदास भी मथुरा में उनके पास आ गए। रूप सनातन ने क्रोधित होकर कृष्णदास से कहा- ''क्यों रे शूद्र तू कौन है? जो इन ब्राह्मणों को मारता है।'' कृष्णदास ने कहा - ''मैं तो शूद्र हूँ , लेकिन तुम भी तो अग्रिहोत्री हो, तुम भी कायस्थ हो।'' तब सनातन ने कहा- ''यह बात बादशाह सुनेंगे तो तुम क्या जवाब दोगे ?'' कृष्णदास ने कहा- ''मैं तो उचित जवाब दे दूँगा, लेकिन तुम को जवाब देने में दुःख होगा। तुम कायस्थ होकर इन ब्राह्मणों से दण्डवत कराते हो।'' रूप सनातन तो चुप हो गए। फिर कृष्णदास ने बंगालियों से कहा- ''अब ये जाने और तुम जानो। हम तुम्हें अब सेवा में नहीं रखेंगे।'' इसके बाद बंगाली लोग मथुरा के हाकिम (प्रशासक-अधिकारी) के पास गए, उसी समय कृष्णदास भी वहाँ जाकर खडे हो गए। हाकिम (प्रशासक-अधिकारी) ने बंगालियों और कृष्णदास की बातें सुनी और कहा- ''कृष्णदास अब जो कुछ हुआ सो हुआ लेकिन अब तुम इन्हें सेवा में रखो।'' कृष्णदास ने कहा- ''अब हम इन्हें सेवा में नहीं रखेगे। ये हमारे चाकर थे। हमने इन्हें श्रीनाथजी की सेवा सौंपी थी, ये लोग सेवा

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

छोड़कर भाग आए, ऐसे लोगों को हम सेवा में नहीं रख सकते। ये सेवा छोड़ कर क्यों भाग आए ? यदि इनकी झोपड़ी जल गई थी, तो हम नई झोपड़ी बनवा देते। इनका कोई सामान जला था। हम सब दिला देते, लेकिन इन्होंने श्रीनाथजी की सेवा का त्याग कर दिया ऐसे चाकरों को अब सेवा नहीं सौपी जा सकती। इतना होने पर भी आप कहते हैं तो हम श्री गुसाँई जी को लिखेंगे। यदि वे आज्ञा देंगे तो हम इन्हें पुनः सेवा सौंप देंगे।'' हाकिम (प्रशासक-अधिकारी) ने कहा ''ठीक है, तुम श्री गुसाँई जी को लिखो।'' हाकिम से लिखने का वायदा करके कृष्णदास श्रीनाथजीद्वार आए। बंगाली लोग श्री (रुद्र) कुण्ड पर आ गए। कृष्णदास ने श्री गुसाँई जी को पत्र लिखा और उसमें बंगालियों को निकालने का सम्पूर्ण वृत्तान्त लिखकर हाकिम (प्रशासक-अधिकारी) की बात भी लिख दी। तथा अन्त में लिखा कि अब आप स्वयं पधारे तो बात बने। पत्र श्री गुसाँई जी के पास अडेल आया। पत्र पढते ही श्रीगुसाँई जी अडेल से श्री नाथजीद्वार आए। बंगाली लोगों ने श्रीगुसाँई जी से सम्पर्क कर निवेदन किया- '' श्री आचार्यजी महाप्रभु ने हमें श्रीनाथजी की सेवा में रखा था। कृष्णदास ने षडयन्त्र करके हमें सेवा से निकाल दिया है।'' श्री गुसाँईजी ने कहा- ''तुम लोग सेवा छोड़कर क्यों गए ? यह तो सारा दोष तुम्हारा ही है। अब हम तुम्हें सेवा नहीं सौंप सकते।'' बंगालियों ने बहुत विनती की और कहा- ''महाराज, यदि आप हमें सेवा में नहीं रखेंगे तो हम क्या खायेंगे।'' उनकी यह बात सुनकर श्री गुसाँईजीने उन्हें श्रीनाथजी के बजाय श्री मदनमोहन जी की सेवा दी और कहा- ''तुम इनकी सेवा करो, और जो आवै सो तुम खावो।'' तब वे बंगाली श्री मदनमोहन जी की सेवा करने लगे। उन बंगालियों ने श्री गोवर्द्धन में रहना ही छोड़ दिया। इसके पश्चात् श्रीनाथजी की सेवा में गुजराती ब्राह्मण सेवा में रखे। श्रीनाथजी को अपना वैभव बढ़ाना है अतः इन भीतरिया गुजराती ब्राह्मणों को श्रीनाथजी की आज्ञा के अनुसार ही नेग बंधान किया। श्री गुसाँई जी के निर्देशानुसार प्रणालिका के अनुसार श्रीनाथजी की सेवा होने लगी और कृष्णदास अधिकारी होकर अधिकर करने लगे

[प्रसङ्ग-३]

एम समय श्रीनाथजी ने कृष्णदास को आज्ञा दी कि श्याममति को ताल-पखावज सहित लेकर परासोली में आना क्योंकि श्याम कुमार बहुत अच्छी पखावज बजाते थे। शयन आरती के पश्चात् जब अनवसर हुआ तो कृष्णदास श्याम कुमार के घर गए। कृष्णदास ने श्यामकुमार से कहा- ''श्रीनाथजी की आज्ञा है कि मृदङ्ग लेकर परासोली आओ। आपके साथ मुझे भी वहाँ बुलाया है। अतः मेरे साथ चलो।'' श्यामकुमार मृदङ्ग लेकर आया ओर दोनों परासौली पहुँचे। वहाँ जाकर देखा तो श्रीनाथजी स्वामिनी जी के

CC-0. In Public Domain. Digitized by Muthulakshmi Research Academy

साथ विराज रहे है। श्रीनाथजी ने श्यामकुमार से कहा- "तू तो मृदङ्ग बजा और कृष्णदास कीर्तन गाएँगे।" कृष्णदास ने कीर्तन गाना शुरु किया। श्याम कुमार मृदङ्ग बजाने लगे और स्वामिनीजी के साथ श्रीनाथजी नृत्य करने लगे। कृष्णदास ने पद गाया-

पद-राग केदारो-

श्रीवृषभानु नंदिनी नाचत गिरिधर संग
लाग डाट सुरपति अपसरा सङ्ग राखौ।
झपताल मिल्यौ राग केदारौ सप्त सुरन अवधरत तान रंग राख्यौ
पाई सुख सिद्धि भरत काम विविध रिद्धि अभिनवदल सत सुहाग हुलास रंग राख्यो।
वनिता सत यूथ संग लिये निरखत क्यों सहसचंद बलिहारी कृष्णदास सुघर रंग राखौ॥

यह पद कृष्णदास गाते रहे और श्याम कुमार मृदङ्ग बजाते रहे। श्रनाथजी और स्वामिनी जी ने नृत्य किया। श्री आचार्य जी महाप्रभु की कानि से श्रीनाथजी कृष्णदास के ऊपर ऐसी कृपा करते थे।

[प्रसङ्ग-४]

कृष्णदास ने बहुत पदो की रचना की। एक बार सूरदास जी ने कृष्णदास से कहा- "तुम जो पद रचना करते हो, उसमें हमारे पदों की छाया सी प्रतीत होती है।" कृष्णदास ने सूरदास जी से कहा- "इस बार मैं ऐसा पद लिखूँगा जिसमें तुम्हारी छाया तनिक भी प्रतीत नहीं होगी।" कृष्णदास एकान्त में बैठकर पद रचना करने लगे। एकाग्र चित्त से नया पद रचने लगे उसमें उन्होंने तीन तुक तो बना ली लेकिन चौथी तुक नहीं बनी। उन्होंने दो घड़ी तक विचार भी किया, तुक आगे नहीं चल सकी। कृष्णदास ने विचार किया अब प्रसाद लेने के बाद रचना करेंगे। उन्होंने लेखनी दवात और पत्र (कागज) वहीं पर छोड़ दिया और प्रसाद लेने के लिए उठ गए। इधर कृष्णदास तो प्रसाद लेने को बैठे और उधर श्रीनाथजी ने स्वयं अपने श्रीहस्त से तीन तुक लिख दिये। कृष्णदास ने तीन तुक लिखकर आधा पद रच दिया था, शेष आधा पद तीन तुक लिखकर श्रीनाथजी ने पूरा कर दिया। कृष्णदास प्रसाद लेकर आए तो पूरा पद देखकर बहुत प्रसन्न हुए और कहा- "आज सूरदास जी आएँ और मेरा पद सुनें।" उत्थापन का समय हुआ सूरदास जी दर्शन के लिए आए। कृष्णदास ने कहा- "सूरदास जी मैंने एक नये पद की रचना की है, उसमें तुम्हारे पदों की कोई छाया नहीं है।" सूरदास जी ने कहा- "पद सुनाओ, तो ही ज्ञात हो सकेगा कि छाया है अथवा नहीं।" कृष्णदास ने पद सुनाया-

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पद- राग गौरी

आवत बनें कान्ह गोप बालक संग नेचुकीखुर रेणुछुरित अलकाबली।
भौहें मनमथ चाप वक्रलोचन वान सीस सोभित मत्त मयूर चन्द्रावली॥
उदित उडुराज सुन्दर सिरोमणि वदन निरखि फूली नवल जुवती कुमुदावली।
अरुण संकुचित अधर बिंब कलहसात कहत कछुक प्रकट होत कुन्द दसनावली॥
श्रवण कुंडल भाल तिलक बेसरिनाक कण्ठकौस्तुभ मणि सुभग त्रिवलावली।
रत्न हाटक खचित उरसि पदिकनि पांति बीच राजत सुभ पुलक मुक्तावली॥

अथ श्रीनाथजी कृत-

वलय कङ्गण बाजूबंद आजानुभुज मुद्रिका कर दल विराजत नखावली।
क्कणित कर मुरलिका मोहित अखिल विश्व गोपिका जनमसि ग्रथित प्रेमावली।
कटि क्षुद्र घण्टिका जटित हीरामयी नाभि अम्बुज वलित भृङ्ग रोमावली।
धायक बहुक चलत भक्त हित जानि पिय गण्ड मण्डल रुचिर श्रमजल कणावली॥
पीत कौशेय परिधानें सुन्दर अङ्गचरण नूपुर वाद्यगीत सबदावली।
हृदय कृष्णदास गिरिवर धरण लाल की चरण नख चन्द्रिका हरति तिमिरावली॥

× × ×

यह पद कृष्णदास ने सूरदास के आगे सुनाया तो सूरदास जी तीन तुक तक तो चुप रहे, इसके आगे की तुक सुनते ही सूरदास जी बोले- ''कृष्णदास, यहाँ से मेरा तुमसे वाद (विरोध) है! यदि ये पद प्रभु ने लिखे हैं तो कोई वाद नहीं है, क्योंकि प्रभु की वाणी की मुझे पहचान है। यदि तुम कहते हो, ये पद तुम्हारे लिखे हुए हैं, तो वाद प्रस्तुत है।'' यह सुनकर कृष्णदास चुप हो गए। ऐसे परम भगवदीय कृष्णदास थे जिनके पद रचना की पूर्ति स्वयं श्रीनाथजी अपने हस्त कमल से पद लिख कर की।

[प्रसङ्ग-५]

इसी प्रकार एक समय की बात है, जब श्रीनाथजी के भण्डार में कुछ वस्तुओं की आवश्यकता हुई तो कृष्णदास गाड़ा लेकर आगरा गए। आगरा के बाजार में एक वैश्या नृत्य कर रही थी। ख्याल-टप्पा गा रही थी। बहुत भीड़ लगी हुई थी। सभी लोग तमाशा देख रहे थे। बाजार में कृष्णदास भी उस वैश्या का नृत्य देखने लगे। वैश्या का रूप सौन्दर्य आकर्षक था, गायन मधुररस सिक्त था और उसी प्रकार नृत्य भी दर्शनीय था, कृष्णदास उस वैश्या पर आसक्त हो गए। भीड़ के सरकने पर वैश्या भी कृष्णदास के आगे आकर नृत्य करने लगी। कृष्णदास ने मन में सोचा- ''यह वैश्या तो श्रीनाथजी के

CC-0. In Public Domain. Digitized by Muthulakshmi Research Academy

यहाँ नृत्य करने योग्य (लायक) है।'' उन्होंने दश मुद्रा तो उसी स्थल पर दे दी। उस वैश्या से कहा- ''रात्रि को अपने समाज सहित आना, उसे हवेली का पता दे दिया।'' श्रीनाथजी के भण्डार के लिए जितनी सामग्री की आवश्यकता थी, सब कुछ बाजार से खरीद कर, गाड़ा लादकर सिद्ध करा दिया। वह वैश्या भी रात्रि के एक प्रहर व्यतीत होने पर अपने समाज सहित आई। नृत्य-गान हुआ। उस वैश्या की कला पर कृष्णदास प्रसन्न (रीझ) हो गए। उस वैश्या को एक सौ मुद्रा देने के बाद कृष्णदास ने कहा, तेरी गायकी और नृत्यकला बहुत अच्छी है लेकिन तू जो ख्याल-टप्पा गाती है उन पर हमारा सेठ प्रसन्न नहीं होगा। इसलिए हम तुम्हें एक पद देते है, उसे गाने का अभ्यास करो। कृष्णदास ने उसे पूर्वीराग में एक पद रचकर दिया और उसका गाना सिखाया। दूसरे दिन वैश्या को साथ लेकर आगरे से चले तीसरे दिन श्री नाथजीद्वार पहुँचे सभी सामग्री श्रीनाथजी के भण्डार में धराईं। जब उत्थापन का समय हुआ, तो किसी कीर्तनिया को जाने नहीं दिया। उस वैश्या को समाज सहित ले गए। श्री गुसाँईजी मन्दिर में खड़े होकर श्रीनाथजी को पंखा झलने लगे। मणिकोठा में वैश्या नृत्य करने लगी और पद गाने लगी। उसने यह पद गाया-

पद - राग पूरवी

मो मन गिरिधर छवि पर अटक्यो।
ललित त्रिभंगी अंगन परिचलि गयो तहां ई ठटक्यो ॥१॥
सजल श्याम घन सजल नील है फिर चित अनत न भटक्यो।
कृष्णदास कियो प्राण न्योछावरि यह तन जग सिर पटक्यो ॥२॥

× × ×

वैश्या ने यह पद गाया। गाते गाते पिछली तुक आई-

कृष्णदास कियौ प्राण न्योछावरि यह तन जग सिर पटक्यौ।

इतना कहने मात्र से ही उस वैश्या के प्राण निकल गए। वह तो दिव्य स्वरूप धारण करके श्रीनाथ जी की लीला में प्रविष्ठ हो गई। उस वैश्या के सभी समाजी रोने लगे और रोते रोते कहने लगे- ''हमारी तो यही जीविका थी, अब हम क्या खाऐंगे।'' कृष्णदास ने उन सबको कहा- ''तुम क्यों रोते हो चलो, तुम्हें खाने के लिए देता हूँ।'' उन्हें नीचे लाकर उन्हें एक सहस्त्र रुपया देकर विदा किया। कृष्णदास ने अपने मन से

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

उस वैश्या को समर्पित किया था अतः श्रीनाथजी ने उसे स्वीकार किया। श्रीआचार्य जी महाप्रभु की रीति (कानि) से सेवक प्रभु को जो भी समर्पित करता है, श्रीनाथजी उसे भलीभाँति अङ्गीकार करते हैं।

[प्रसङ्ग-६]

कृष्णदास का गंगाबाई से बहुत स्नेह था, यह बात श्री गुसाँईजी को नहीं सुहाती थी। एक दिन श्रीगुसाँईजी ने श्रीनाथजी को भोग समर्पित किया सामग्री पर गंगाबाई की दृष्टि पड़ी। श्रीनाथजी ने भोग नहीं आरोगा। समय होने पर भोग सराया गया, आरती करके अनवसर कर दिया। श्री गुसाँई जी नीचे पधारे। समस्त सेवकों ने तथा भीतरिया आदि सब ने प्रसाद लिया। श्रीगुसाँई जी तो भोजन करके पौढ़ गए। श्रीनाथजी ने भीतरिया को लात मार कर जगाया। उससे कहा- "मैं तो भूखा हूँ।" भीतरिया ने कहा "महाराज श्री गुसाँई जी ने भोग तो समर्पित किया था, तुम भूखे क्यों रहे ?" श्रीनाथजी ने कहा- "राजभोग पर गंगाबाई की दृष्टि पड़ गई थी। अतः हमने राजभोग आरोगा नहीं था।" भीतरिया उठकर श्री गुसाँई जी के पास आया। श्री गुसाँई जी भोजन करके पौढ़े ही थे कि भीतरिया आकर श्री गुसाँई जी के चरण दाबने लगा। श्री गुसाँईजी चौंक उठे। उन्होंने श्रीनाथजी के भीतरिया को देखा, उन्होंने तत्काल पूछा- "इस समय कैसे आए हो ?" भीतरिया ने कहा- "महाराज, आज श्रीनाथजी भूखे हैं। मुझे लात मारकर जगाया और कहा- आज तो मैं भूखा हूँ। मैने श्रीनाथजी से कहा था- महाराज श्रीगुसाँईजी ने भोग तो समर्पित किया था, फिर तुम भूखे क्यों रहे ? तब श्रीनाथजी ने कहा- राजभोग की सामग्री पर गंगाबाई की दृष्टि पड़ गई थी अतः मैंने राजभोग आरोगा ही नहीं।" श्री गुसाँई जी सुनते ही तत्काल स्नान करके पर्वत ऊपर पधारे। वह भीतरिया भी स्नान करके आया। श्री गुसाँई जी ने भीतरिया से कहा- "भात और बड़ी (मँगोड़ी) तैयार करो ताकि शीघ्र ही सिद्ध हो जावें। यह सुनकर भीतरिया ने शीघ्र ही भात और बड़ी सिद्ध की और श्रीनाथजी को भोग समर्पित किया। भीतरिया ने रसोई करने के बाद पुनः स्नान किया और पर्वत ऊपर आया। श्री गुसाँई जी ने आज्ञा की-"राजभोग की सब सामग्री पुनः सिद्ध करो।" उसी के साथ ही शयन भोग की सामग्री भी सिद्ध की गई। राजभोग और शयन भोग सभी साथ-साथ समर्पित किया गया। समय होने पर भोग सरा कर शयन आरती की। श्रीनाथजी को पौढ़ाया। सम्पूर्ण महाप्रसाद नीचे ले गए। जिस डबरा में भोग समर्पित किया था, वह डबरा वहाँ पर ही रह गया। तब रामदास भीतरिया ने कहा- "जो पहले भोग समर्पित किया था, वह डबरा वहाँ ही रह गया। तब श्री गुसाँई

CC-0. In Public Domain. Digitized by Muthulakshmi Research Academy

जी डबरा में से सामग्री लेते हुए नीचे उतरे। सभी सेवकों को वही बड़ी भात का महाप्रसाद रंचक-रंचक (थोड़ा-थोड़ा) बाँट दिया। इसके पश्चात् श्री गुसाँई जी ने भी महाप्रासद आरोगा। बड़ी भात के महाप्रसाद का स्वाद बड़ा अलौकिक अनुभव हुआ। श्री गुसाँईजी ने स्वयं ने यह महाप्रसाद सराया था। कृष्णदास वहाँ पर खड़े थे, अतः बोल पड़े- "महाराज आप ही करने वाले हैं और आप ही आरोगने वाले हैं। फिर प्रसाद उत्तम क्यों नहीं होगा?" श्री गुसाँई जी ने सुनकर हँसते हुए कहा- "तुम्हारे ही किये का भोग भोग रहे है।"

[प्रसङ्ग-७]

श्री गुसाँई जी ने कृष्णदास से जो बात कही कि तुम्हारे ही किये का भोग रहे है। यह बात सुनकर कृष्णदास का मन बिगड़ गया। कृष्णदास ने श्रीगुसाँई जी से कहा- "अब तुम पर्वत के ऊपर मत चढ़ना।" यह सुनकर श्रीगुसाँईजी वहाँ से तत्काल चल दिए और परासौली में रहने लग गए। श्री गुसाँई जी ने मन में विचार कर निर्णय किया कि कृष्णदास तो उन्हें पर्वत के ऊपर मन्दिर में जाने से रोकने वाला कौन है? लेकिन श्रीनाथजी की ही ऐसी इच्छा होगी। ऐसा मन में विचार करके आप कुछ भी नहीं बोले और परासोली में रहने लगे। परासोली में ध्वजा के सामने बैठकर विज्ञप्ति प्रसारित की, कि वे तीन दिन तो श्री गोवर्द्धन में रहेंगे और तीन दिन गोकुल में रहेंगे। इस विज्ञप्ति के अनुसार कृष्णदास के निषेध करने के दिन से लेकर उनका तीन दिन आवास श्री गोकुल में होता और तीन दिन श्री गोवर्द्धन निकट परासोली में रहते। मन्दिर की जो खिड़की परासौली की ओर खुलती उसके सामने श्री गुसाँईजी बैठते थे। श्रीनाथजी खिड़की में आकर श्री गुसाँई जी को दर्शन देते रहते थे। कृष्णदास को जब यह ज्ञात हुआ तो कृष्णदास ने वह खिड़की बन्द कर दी। श्री गुसाँईजी के सेवक, परासोली आवास के समय श्रीनाथजी के राजभोग आरती के बाद अनवसर करके श्रीगुसाँईजी के दर्शन के लिए परासौली, आते आकर श्री गुसाँई जी के चरणोदक लेने के बाद पुनः श्रीनाथजीद्वार पहुँचकर महाप्रसाद लिया करते थे। कृष्णदास सेवकों के इस आचरण से खिन्न तो था लेकिन सेवकों के सामने कृष्णदास की कुछ भी नहीं चलती थी। श्रीगुसाँई जी श्रीनाथजी को पत्र लिखकर रामदास भीतरिया को देते और कहते- "यह पत्र श्रीनाथजी को दे देना।" श्रीनाथजी रामदास भीतरिया सेपत्र प्राप्त करते और बाँच कर उसका (पत्र का) उत्तर लिख कर रामदास भीतरिया के हस्ते श्री गुसाँई जी तक पहुँचाते। श्री गुसाँई जी पत्र को पढ़कर पानी में पत्र डाल देते और उस पानी को पी जाते

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

थे। इस तरह छः मास का समय व्यतीत हो गया। श्री गुसाँई जी ने कृष्णदास को श्रीनाथजी का अधिकारी वैष्णव और श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक समझकर कुछ भी नहीं कहा। हाँ, इतना अवश्य था कि श्रीनाथजी के विरह का खेद बहुत होता था।

इसी बीच एक दिन राजा बीरबल आ गए। उस दिन श्री गुसाँई जी का निवास (मुकाम) परासौली में था और श्री गिरिधर जी घर में थे। राजा बीरबल ने श्री गुसाँई जी को खबर कराई तो प्रहरियों ने कहा- "श्रीगुसाँई जी तो परासौली में रहते है, घर पर श्री गिरिधर जी हैं।" यह सुनकर राजा वीरबल श्री गिरिधरजी के दर्शन करने घर गए। उस समय श्री गिरिधर जी ने राजा बीरबल से कहा- "कृष्णदास अधिकारी, काकाजी को श्रीनाथजी के दर्शन नहीं करने देता है। इस बात से काकाजी को बहुत दुःख है।" तब राजा वीरबल ने श्री गिरिधर जी से कहा- "मैं मथुरा जा रहा हूँ, अभी जाकर कृष्णदास को मन्दिर से बाहर निकाल दूँगा।" राजा वीरबल श्री गिरिधर जी से विदा होकर मथुरा गए और श्री गुसाँई जी भी उसी दिन परासौली से गोकुल पधार गए। राजा वीरबल ने पाँच सौ आदमी कृष्णदास को पकड़ लाने के लिए भेजे। ये आदमी कृष्णदास को पकड़कर वीरबल के पास ले गए। वहाँ उसे बन्दीखाने (कारागृह) में डाल दिया। श्री गिरिधर जी के पास सन्देश भेज दिया कि कृष्णदास अधिकारी को बन्दीखाने में डाल दिया है।

श्री गिरिधर जी ने श्री गुसाँई जी को कहा- "कृष्णदास अधिकारी को राजा वीरबल ने बंदीखाने में डाल दिया है।" श्री गुसाँई जी ने श्री गिरिधरजी से कहा- "हाय-हाय! श्री आचार्य जी महाप्रभु के सेवक को इतना कष्ट! तुमने राजा वीरबल से कहा होगा?" श्री गिरिधारी ने कहा- "हमने तो राजा वीरबल से सहज बात कही थी कि काकाजी को श्रीनाथजी के दर्शन नहीं करने देते है। इस बात का काकाजी को बहुत दुःख (खेद) है।" यह बात सुनकर श्री गुसाँई जी ने श्री गिरिधर जी से कहा- "मैं तो तब ही महाप्रसाद ग्रहण करूँगा जब कृष्णदास आ जाएगा।" यह निश्चय सुनकर श्री गिरिधर जी ने तत्काल घोड़ा मँगवाया और उस पर सवार होकर मथुरा पधारे। राजा वीरबल से मिलकर श्री गुसाँईजी का निर्णय सुना दिया। यह भी कहा कि कृष्णदास को मुक्त करके मेरे साथ भेज दो तभी श्री गुसाँईजी भोजन करेंगे। राजा वीरबल ने कृष्णदास को श्री गिरिधरजी के हवाले कर दिया। श्री गिरिधर जी कृष्णदास को साथलेकर श्री गोकुल आए। जब श्री गुसाँई जी ने सुना कि श्री गिरिधर जी कृष्णदास

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

को लेकर आ रहे हैं तो वे ठकुरानी घाट पर पहुँचे। उस ओर से कृष्णदास आए। उसने श्री गुसाँईजी को दण्डवत प्रणाम किया और एक नया पद रचकर सुनाया।

पद राग केदारो–

श्री विट्ठल जू के चरणन की बलि।
हमसे पतित उधारन करन परम कृपाल आए आपुन चाली।
उज्ज्वल अरुण दया रंग रंजित दशनख चंद्र विरहित मन निरदलि।
सुभ कर सुख कर शोभन पावन भक्त मुदित ललित कर अंजलि॥
अतिशय मृदुल सुगंध सुशीतल परसत त्रिविध ताप डारत मलि।
भजकृष्णदास बार एक सुधि करी तेरौ कहाँ करैगो रिपु कलि॥

× × ×

यह पद श्री गुसाँई जी के आगे गाया तो श्री गुसाँई जी कृष्णदास को अपने घर ले आए। श्री गुसाँई जी ने कृष्णदास को भोजन करने के लिए कहा। कृष्णदास ने कहा– "महाराज आप भोजन करिये, मैं तो आपकी प्रसादी ग्रहण करूँगा।" श्री गुसाँई जी भोजन करने बैठे तो कृष्णदास ने एक और पद गाया।

पद – राग कान्हरो

ताही को सिर नाइये जो श्री वल्लभ सुत पद रज रति होय।
कीजै कहा आन ऊँचे तिन सो कहां सगाई मोय॥१॥
सारा सारा विचार मतो करि श्रुति वच गोधन लिया निचोय।
तहाँ नवनीत प्रगट पुरुषोत्तम सहज् ही गोरस लियो विलोय॥२॥
जाके मन में उग्र भरम है श्री विट्ठल अरु श्री गिरिधर दोय।
ताकौ सङ्ग विषम विष हूँ ते भूलि हु चतुर करो जिन कोय॥३॥
जिन प्रताप देखि अपने चख असन सार जो भिदे न तोहि।
कृष्णदास सुरते असुर भये असुर ते सुर भये चरणने छोहि॥४॥

× × ×

यह पद सुनकर श्री गुसाँई जी बहुत प्रसन्न हुए। जब श्री गुसाँईजी भोजन करके पधारे तो कृष्णदास को भोजन करने की आज्ञा की। कृष्णदास भीतर गए तो श्री गिरिधर

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

जी ने श्री गुसाँई जी की जूँठन की पत्तल आगे धरी, तब कृष्णदास ने महाप्रसाद लिया। तत्पश्चात् उनको दो पान-बीड़ा दिए। रात्रि के समय कृष्णदास वहाँ पर ही सोए। पिछली रात्रि जब दो घड़ी शेष रही तब श्री गुसाँई जी उठे और देहकृत्य नियम पूर्ण करके स्नान किया। श्रीनवनीत प्रियजी के मंगला के दर्शन करके बाहर पधारे और श्रीनाथजी द्वार पधारने की तैयारी की। दो घोड़े मँगवाए, उनमें से एक पर श्री गुसाँईजी ने सवारी की और दूसरे पर कृष्णदास को बैठाया। श्री गोकुल से चलकर श्रीनाथजी द्वार सवाप्रहर दिन चढ़े तक चहुँच गए। उस समय श्रीनाथजी के लिए राजभोग आया था। श्री गुसाँई जी तत्काल स्नान करके ऊपर पधारे। उनके हाथ में पिछले दिन का श्रीनाथजी के हस्ताक्षर का पत्र था जो रामदास भीतरिया के द्वारा श्रीनाथजी ने श्री गुसाँई जी के पत्र के उत्तर में भिजवाया था। श्री गुसाँईजी प्रतिवार तो श्रीनाथजी के पत्रों को जल में घोलकर पी जाते थे लेकिन यह पत्र उनके पास सुरक्षित था। श्री गुसाँई जी भोग सराने को पधारे थे। श्री गुसाँई जी को देखकर श्रीनाथजी बहुत प्रसन्न हुए और पूछा- "क्यो ? अब ठीक (नीके) हो ?" श्री गुसाँइ जी बोले- "आपका जब दर्शन हो जाए तब ही नीका है।" इस वार्तालाप पर परस्पर दोनों मुस्कराए। श्री गुसाँईजी ने राजभोग सराए। वह पत्र जो साथ लाए थे, झाँपी (पिटारी) में रखा। इसके बाद राजभोग के दर्शन खुले। कृष्णदास ने दर्शन किए। श्री गुसाँई जी ने राजभोग आरती कर अनवसर किया। फिर नीचे पधारकर रसोई करके भोजन समर्पण कर भोजन किया। तत्पश्चात् श्री गुसाँईजी भी पौढ़े। उत्थापन समय से दो घड़ी पूर्व उठकर स्नान आदि किए। उत्थापन का समय होने पर श्रीनाथजी के उत्थापन कराने के लिए ऊपर पधारे। शंखनाद करवाया। उत्थापन होने के बाद से शयन आरती तक दर्शन करके कृष्णदास को श्रीनाथजी के सन्निधान में बुलाया और कहा- "कृष्णदास तुम अधिकारी हो, अधिकार करो और श्रीनाथजी की सेवा भली प्रकार करो।" तब कृष्णदास ने श्रीनाथजी के सन्निधान में एक पद गाया-

पद- राग कान्हरो

परम कृपाल श्री वल्लभनंदन करत कृपा निज हाथ दे माथै।
जे जन शरण आये अनुसरहीं गहि सौंपति श्री गोवर्द्धन नाथै॥
परम उदार चतुर चिन्तामणि राखत भवधारा तै साथै।
भज कृष्णदास काज सब सरहीं जो जाने श्री विट्ठलनाथै॥

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

यह पद गाया और विनती निवेदन की- ''महाराज, मेरा अपराध क्षमा करो।'' तब श्री गुसाँई जी ने कहा- ''तुम्हारा अपराध श्रीनाथजी क्षमा करेंगे।'' इसके बाद कृष्णदास को विदा किया। श्रीनाथजी को पौढ़ाकर श्री गुसाँईजी नीचे उतरे। श्री गुसाँई जी परम दयालु और उदार थे, उन्होंने कृष्णदास की कृति को मन में नहीं रखा। श्री आचार्य जी महाप्रभु का सेवक समझ कर उन पर अनुग्रह किया। श्री गुसाँईजी वहाँ दो दिन तक रहे, पीछे श्री गोकुल पधारे। कृष्णदास श्री गुसाँई जी की आज्ञा से पुनः अधिकारी का कार्य करने लगे।

[प्रसङ्ग-८]

बहुत वर्ष तक कृष्णदास ने भलीभाँति से अधिकारी पद पर कार्य किया। एक दिन एक वैष्णव ने कहा- ''मुझे एक कूआ बनवाना है, मेरा कूआ बनाने का मनोरथ है और मुझे अपने देश को भी जाना है। इसलिए तुम्हें हम द्रव्य देते है, उससे आप कूआ बनवा देना।'' कृष्णदास ने स्वीकृति दे दी तो उस वैष्णव ने कृष्णदास को तीन सौ रुपया दिये और वह अपने देश को चला गया। कृष्णदास ने उन रुपयों में से एक सौ रुपया एक कूल्हरा (मिट्टी का कुल्हड़) में घर के आम के वृक्ष के नीचे गाड़ दिये और कहा- ''जब दो सौ रुपया लग चुकेंगे, तब इन रुपयों को काम में लेंगे। यह कहकर एक उत्तम मुहूर्त में रुद्र कुण्ड के ऊपर कूआ खुदवाने का कार्य प्रारम्भ कर दिया। कितने ही दिनों में कूआ मुख तक बनकर तैयार हो गया। दो सौ रुपया खर्च हो गए और मुखौटा बकाया रह गया। उत्थापन के दर्शन करके कृष्णदास कूआ देखने के लिए गए। उनके हाथ में आशा (छड़ी) थी। आशा टेक कर ऊपर खडे हुए वह आशा सरक गई और कृष्णदास कूआ में जा गिरे। कृष्णदास को निकालने के लिए दो मनुष्य कूए में नीचे उतारे गए। उन्होंने भलीभाँति कूए को देख लिया लेकिन कृष्णदास के शरीर का कहीं भी पता नहीं चला। सभी लोग हताश होकर श्री गुसाँई जी के पास आए। वे श्रीनाथजी को शयन भोग रख कर मंजूषा पर विराजे थे, रामदास भीतरिया उनके निकट बैठा था। उसी समय किसी ने समाचार दिया ''महाराज, कृष्णदास ने रुद्रकुण्ड पर कुआ बनवाया था, वे उसे देखने गए थे आशा टेक कर कूआ के मौहडे पर खडे थे। अचानक आशा के सरक जाने से कृष्णदास कूए में गिर गए। दो मनुष्यों ने कूए में उतर कर खूब तलाश किया लेकिन उनके शरीर का भी कूए में पता नहीं चला। रामदास भीतरिया बोला- ''अधो गच्छन्ति तामसाः।'' यह सुनकर श्री गुसाँई जी ने कहा-

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

''ऐसा मत कहो।'' ''कृष्णदास कूए में गिर गए और कूए में उनका शरीर ढूँढने पर भी नहीं मिला, इसका क्या हेतु हो सकता है ? इसे ध्यान से सुनो- कृष्णदास कोई अलौकिक जीव था अत: श्रीनाथजी की सेवा में प्राप्त हुआ। कृष्णदास ने इस शरीर से श्री गुसाँई जी की अवज्ञा की अतः लौकिक शरीर और जीव दोनों को इसे भुगतना था, इसलिए कूए में गिरकर उनका प्राणान्त हुआ। कूए में गिरकर मरने से उनका लौकिक शरीर सद्यः प्रेत होकर पूँछरी की ओर पीपल के वृक्ष पर अवस्थित है। कृष्णदास का शरीर कूए में नहीं मिला, यह श्रीगुसाँई जी की अवज्ञा करने का फल है। उन्हीं की अवज्ञा से उसे प्रेत योनि भी प्राप्त हुई जो पूँछरी की ओर पीपल के वृक्ष के ऊपर स्थित है।''

[प्रसङ्ग-९]

एक समय की बात है- श्रीनाथजी की भैंस खो गई थी। उस भैंस को ढूँढने के लिए गोपीनाथ ग्वाल और चार-पाँच ग्वाल पूँछरी की ओर ढूँढने गए थे। गोपीनाथ ग्वाल ने देखा पूँछरी के पास श्रीनाथजी खेल रहे हैं और एक पीपल के वृक्ष पर कृष्णदास प्रेतयोनि में बैठा हुआ है। गोपीनाथ को देखकर कृष्णदास ने जोर से कहा- ''अरे भैया, श्री गुसाँई जी से मेरी विनती करना कि मैं उनका अपराधी हूँ, इसी कारण मेरी यह दुर्दशा हो रही है। यद्यपि मैं श्रीनाथजी के निकट तो विद्यमान हूँ, लेकिन मेरी गति नहीं हो पा रही है। इसलिए मेरे अपराध को क्षमा क़रें ताकि मेरी गति हो जाए। उनसे एक बात और भी कहना कि बाग में आम की पेड़ के नीचे कूल्हरा में एक सौ रुपया गड़े है, उन्हें निकाल कर कूआ का मुखौटा बनवा दें, कूए का मुखौटा बनना शेष रह गया है। यदि मुखौटा बन जाएगा तभी मेरी मुक्ति हो सकती है।'' गोपीनाथ ग्वाल ने श्री गुसाँई जी के पास जाकर कृष्णदास की कही हुई बातें निवेदन कर दीं। श्री गुसाँई जी ने बाग में आम के वृक्ष के नीचे से कूल्हरा खुदवा कर निकलवाया उसमें से रुपया निकाल कर कूए का मूखौटा बनवाया। इससे कृष्णदास की गति हुई।

कृष्णदास को प्रेत योनि में भी श्रीनाथजी दर्शन देते थे। इसका कारण था कि श्री गुसाँई जी ने कृष्णदास से कहा था ''तुम अधिकार करो। श्रीनाथजी की सेवा भलीभाँति से करना।'' कृष्णदास ने कहा था- ''महाराज, मेरा अपराध क्षमा करो।'' तब श्री गुसाँई जी ने कहा था कि तुम्हारा अपराध तो श्रीनाथजी क्षमा करेंगे। श्री गुसाँईजी की कृपा से श्रीनाथजी ने उसका अपराध क्षमा कर दिया था। इसीलिए प्रेत योनि में भी उसे

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

दर्शन लाभ होता रहाथा, लेकिन उन्हें वह स्पर्श नहीं कर सका था। श्रीनाथजी का स्पर्श करता तो उसका भी उद्धार हो जाता। लेकिन उद्धार करना तो श्रीगुसाँई जी के अधिकार में आता है। कृष्णदास श्रीनाथजीसे कहता था– ''महाराज, तुम मुझे दर्शन देते हो, मुझसे बोलते भी हो। फिर मुझे प्रेत योनि से मुक्ति क्यों नहीं दिला देते हो ?'' तब श्रीनाथजी ने कहा– ''मैं तुझको दर्शन देता हूँ और तुझसे बातें भी करता हूँ, वह तो श्री गुसाँई जी के वचनों को सत्यापित करने के लिए करता हूँ अन्यथा प्रेत योनि में तुम्हें दर्शन का अधिकार ही नहीं था। उन्हीं की कृपा से मैं तुझसे बातें भी करता था। तेरा उद्धार तो श्रीगुसाँईजी को करना था। तू ने श्री गुसाँई जी का अपराध किया है अत: वे जब तेरा उद्धार करेंगे तभी उद्धार होगा।'' श्रीगुसाँई जी तो बड़े दयालु हैं अत: परम कृपालु ने कृष्णदास के ऊपर कृपादृष्टि की। उन्होंने विचार किया– ''कृष्णदास को बहुत समय हो गया है अत: इसका उद्धार करना उचित है। श्री गुसाँई जी ने ध्रुव घाट पर आकर कृष्णदास का प्रेतत्व विमुक्ति कर्म कराया, तब कहीं कृष्णदास का उद्धार हुआ। वह श्रीनाथजी की नित्य लीला में प्रविष्ट हो गया। श्री गुसाँई जी ने कहा– ''कृष्णदास ने तीन बातें बहुत अच्छी कीं। एक तो अधिकारी के रूप में ऐसा अधिकार किया कि आगे कोई भी ऐसा अधिकार नहीं कर पाएगा। कीर्तन भी अद्भुत किये। तीसरे श्री आचार्यजी महाप्रभु के सेवक के रूप में ऐसी सेवा की कि आगे कोई भी नहीं कर पाएगा। कृष्णदास, श्री आचार्य जी महाप्रभु के ऐसे परम कृपापात्र भगवदीय थे कि इनकी वार्ता का कोई पार नहीं प्राप्त कर सकता है। उनकी वार्ता को कहाँ तक लिखें।''

[इतिश्री आचार्य जी महाप्रभून के सेवक परम कृपापात्र चौरासी मुख्य वैष्णवों की वार्ता सम्पूर्ण।]

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	चौरासी वैष्णवन की वार्ता

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता चौरासी वैष्णवन की वार्ता

CC-0. In Public Domain. Digitized by Muthulakshmi Research Academy

चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता
चौरासी वैष्णवन की वार्ता

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy

पुस्तक प्राप्ति स्थान : श्रीगोवर्द्धन पुस्तकालय, मोती महल चौक, श्रीनाथजी का मंदिर, नाथद्वारा (राज.)

मुद्रक : चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., गुरू रामदास कॉलोनी, एम.वी. कॉलेज के सामने, उदयपुर (राज.) फोन. 0294-2584071, 2485784 / 2659

COPL/2659

CC-0. In Public Domain. Digtized by Muthulakshmi Research Academy